MLIS-102
ग्रंथालय एवं सूचना केन्द्रों
का प्रबन्धन

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

ग्रंथालय एवं सूचना केन्द्रों का प्रबन्धन

इकाई 1

प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त, वैज्ञानिक प्रबन्धन, उद्देश्यपूर्ण प्रबन्धन और ग्रंथालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में इनका अनुप्रयोग 07

इकाई 2

प्रणाली विश्लेषण एवं अभिकल्पन 25

इकाई 3

परिवीक्षण एवं मूल्यांकन तकनीक 35

इकाई 4

मानव संसाधन विकास 53

इकाई 5

कार्मिक नियोजन 62

इकाई 6

सहभागी प्रबन्धन एवं सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन 71

इकाई 7

सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का विपणन, विपणन युक्तियाँ 79

इकाई 8

वित्तीय प्रबन्धन : बजट, लेखाकरण एवं लेखा परीक्षण 95

इकाई 9

लागत तकनीक एवं लागत विश्लेषण 109

प्रमुख शब्द 128

संदर्भ एवं अतिरिक्त पाठ्य सामग्री 131

पाठ्यक्रम अभिकल्पन समिति

1. प्रोफेसर नीतीश कुमार सान्याल (अध्यक्ष)
   कुलपति (26 अप्रैल, 2002 तक)
   उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
   इलाहाबाद
2. प्रोफेसर देवेन्द्र प्रताप सिंह (अध्यक्ष)
   कुलपति, (27 अप्रैल, 2002 से)
   उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
   इलाहाबाद
3. डॉ. यू. एम. ठाकुर,
   निदेशक, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान संस्थान,
   पटना विश्वविद्यालय,
   पटना
4. डॉ. एस. पी. सूद,
   एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (सेवा निवृत्त)
   ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान विभाग,
   राजस्थान विश्वविद्यालय,
   जयपुर
5. डॉ. बी. के. शर्मा,
   उपाचार्य एवं विभागाध्यक्ष,
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग,
   डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय,
   आगरा
6. डॉ. जे. एन. गौतम,
   उपाचार्य एवं विभागाध्यक्ष,
   ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान अध्ययनशाला,
   जीवाजी विश्वविद्यालय,
   ग्वालियर
7. श्री शंकर सिंह,
   प्रबन्धक (पुस्तकालय),
   पावर फाइनेन्स कारपोरेशन लि0,
   चन्द्रलोक, 36 जनपथ,
   नई दिल्ली
8. डॉ. एस. एन. सिंह
   वरिष्ठ सहायक ग्रन्थालयी,
   केन्द्रीय तिब्बती विश्वविद्यालय,
   सारनाथ, वाराणसी
9. डॉ. (श्रीमती) सोनल सिंह,
   वरिष्ठ प्रवक्ता,
   ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान अध्ययनशाला,
   विक्रम विश्वविद्यालय,
   उज्जैन
10. श्री सुनील कुमार,
    वरिष्ठ प्रवक्ता
    एस. सी. ई. आर. टी.,
    वरुण मार्ग, डिफेंस कालोनी,
    नई दिल्ली
11. डॉ. प्रभाकर रथ (पाठ्यक्रम संयोजक),
    ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान संकाय,
    इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय,
    मैदान गढ़ी,
    नई दिल्ली
12. डॉ. ए. के. सिंह (प्रशासनिक संयोजक)
    कुलसचिव
    उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
    इलाहाबाद

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

लेखक	सम्पादक	कार्यालयीन सहायक
डॉ. बी. के शर्मा	डॉ. यू. एम. ठाकुर	(1) श्री रंजीत बनर्जी
		(2) श्री दिलीप त्रिपाठी
		(3) श्री पंकज श्रीवास्तव

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 2024

ISBN -

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नही है।

प्रकाशक– उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित वर्ष – 2024.
मुद्रक – के0 सी0 प्रिंटिंग एण्ड एलाइड वर्क्स , पंचवटी , मथुरा – 281003.

प्राक्कथन

आधुनिक समाज में ज्ञान एवं विज्ञान के क्षेत्र में निरंतर नवीन विषयों का आविर्भाव हो रहा है। इन नवीन विषय क्षेत्रों में पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान भी एक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी विषय है। मानव संसाधन विकास के अन्तर्गत किये गये विभिन्न अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि विभिन्न प्रकार के पुस्तकालयों, प्रलेख पोषण केन्द्रों और सूचना केन्द्रों में विभिन्न श्रेणियों एवं स्तरों पर प्रशिक्षित जनशक्ति (Man power) की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु विभिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गयी जो प्रमाण-पत्र, डिप्लोमा, स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर पर प्रशिक्षण प्रदान कर प्रशिक्षित जनशक्ति को तैयार करते हैं।

पुस्तकालयों, प्रलेख पोषण केन्द्रों और सूचना केन्द्रों में उच्च पदों पर चयन एवं नियुक्ति हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) को आवश्यक माना है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) ने महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में तकनीकी सहायकों, सहायक पुस्तकालयाध्यक्षों और पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) को मूलभूत योग्यता माना है। विभिन्न राज्य सरकारों ने भी अपने विभिन्न विभागों के अन्तर्गत संचालित पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों हेतु राजपत्रित पदों पर नियुक्ति के लिए 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) आवश्यक योग्यता निर्धारित की गयी है।

वर्तमान में भारत में लगभग 50 विश्वविद्यालय, 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) उपाधि प्रदान कर रहे हैं। अधिकांश विश्वविद्यालय नियमित पाठ्यक्रम ही संचालित कर रहे हैं जिनमें सीमित संख्या में छात्रों का प्रवेश सम्भव हो पाता है। छात्रों की शैक्षिक आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए दूरस्थ शिक्षा पद्धति के अन्तर्गत राष्ट्रीय स्तर पर 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) कार्यक्रम को संचालित करने का प्रथम प्रयास इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली द्वारा अंग्रेजी माध्यम में किया गया। फलस्वरूप हिन्दी भाषी प्रदेशों के छात्र अधिक लाभ नहीं ले पाते। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद ने उक्त कार्यक्रम हिन्दी माध्यम से प्रारम्भ करने का प्रयास किया है।

'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) के अन्तर्गत शिक्षकों एवं छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सरल एवं सुगम हिन्दी भाषा में विषय विशेषज्ञों और वरिष्ठ प्राध्यापकों द्वारा सभी पाठ्यक्रमों का प्रमाणिक साहित्य तैयार कराया गया है। प्रत्येक पाठ्यक्रम में अध्ययन सामग्री को विशेष क्रम के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है। केन्द्रीय हिन्दी मंत्रालय के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित पारिभाषिक शब्दावली एवं इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान शब्दावली में से ही विषय से सम्बन्धित तकनीकी शब्दों का प्रयोग किया गया है। पाठ्य-सामग्री के अन्त में प्रमुख शब्दों की विवेचना एवं परिभाषा तथा सन्दर्भ एवं अतिरिक्त पाठ्यसामग्री की सूची प्रस्तुत की गयी है।

RIL-091

उद्देश्य एवं क्षेत्र

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद का हिन्दी भाषा में 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) कार्यक्रम को संचालित करने का प्रमुख उद्देश्य उन छात्रों को लाभान्वित करना है जो अंग्रेजी माध्यम द्वारा अध्ययन करने में असमर्थ होते हैं। साथ ही ऐसे पुस्तकालय कर्मचारियों की सहायता करना है जो विभिन्न संस्थानों में कार्यरत हैं और अवकाश लेकर नियमित रूप से इस कार्यक्रम को पूर्ण करने में असमर्थ हैं। ऐसे कर्मचारियों के भविष्य के शैक्षिक विकास व्यावसायिक योग्यता बढ़ाने और पदोन्नति में यह कार्यक्रम विशेष रूप से सहायक होगा।

'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) के इस एक वर्षीय कार्यक्रम में 08 पाठ्यक्रमों को समावेशित किया गया है जो कि दो सत्रों (Semesters) में विभक्त किया गया है। सभी पाठ्यक्रमों का अभिकल्पन इस प्रकार किया गया है कि अध्ययन के पश्चात् छात्र अथवा कार्यरत कर्मचारी किसी भी प्रकार के पुस्तकालय और सूचना केन्द्र में कार्य करने में समर्थ हो सकेंगे। इस कार्यक्रम में सूचना प्रबन्धन एवं प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग पर विशेष बल दिया गया है।

आशा और विश्वास है कि प्रस्तुत पाठ्य अध्ययन सामग्री पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के प्राध्यापकों एवं 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) स्तर पर अध्ययनरत छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

RIL-091

MLIS-02 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों का प्रबन्धन (MANAGEMENT OF LIBRARIES AND INFORMATION CENTRES)

विषय परिचय

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों का प्रबन्धन नौ इकाईयों में विभाजित है। इनमें प्रबन्धन, विशेष कर आधुनिक ग्रन्थालय प्रबन्धन से जुड़े विभिन्न पक्षों को अलग–अलग इकाईयों में प्रस्तुत किया गया है।

इकाई 1 :– इसमें प्रबन्धन के सामान्य एवं वैज्ञानिक सिद्धान्तों सहित विभिन्न अभिगमों को सम्मिलित किया गया है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्तों का अनुप्रयोग इसमें विशेष रूप से प्रदर्शित है। इसके अतिरिक्त इस इकाई में उद्देश्यात्मक प्रबन्धन सहित विभिन्न सिद्धान्तों के आलोक में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र का प्रबन्धन प्रस्तुत किया गया है।

इकाई 2 :– यह इकाई प्रणाली विश्लेषण एवं अभिकल्पन से सम्बन्धित है जिसमें किसी प्रणाली की, इसके विभिन्न अवयवों सहित, विश्लेषण के विभिन्न सिद्धान्तों एवं तकनीकों का विवेचन है। सूचना प्रणाली के जीवनवृत्त के विभिन्न चरणों को सोदाहरण समझाया गया है। ग्रन्थालय प्रणाली एवं उप प्रणालियों के प्रत्येक क्षेत्र से सम्बन्धित क्रियाकलापों को फ्लो चार्ट के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है। प्रणाली अभिकल्पन के विभिन्न चरण इस इकाई में सम्मिलित किये गये हैं।

इकाई 3 :– इसमें परिवीक्षण एवं मूल्यांकन तकनीक को सम्मिलित किया गया है। इसमें परिवीक्षण की विभिन्न तकनीकों का विस्तार से वर्णन है। प्रबन्धन सूचना प्रणाली एवं उद्देश्यात्मक प्रबन्धन पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणालियों एवं सेवाओं से सम्बन्धित कार्यों की माप अथवा जाँच के लिए उपयुक्त विभिन्न मूल्यांकन तकनीकों की समीक्षा इस इकाई का एक महत्वपूर्ण भाग है।

इकाई 4 :– मानव संसाधन प्रबन्धन से जुड़े इस इकाई में मानव संसाधन, उनका विकास, आवश्यकता आदि पक्षों पर विवरण उपस्थित किया गया है। मानव संसाधन विकास प्रणाली, विशेषकर भारतीय ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों के परिप्रेक्ष्य में इसकी चर्चा यहाँ सम्मिलित है।

इकाई 5 :– इसमें कर्मचारी नियोजन के विभिन्न पक्षों की चर्चा की गयी है। कार्मिक नियोजन प्रक्रिया : आवश्यकता का आकलन, भर्ती एवं चयन, कार्मिक विकास, मूल्यांकन का विशद विवरण इसमें सम्मिलित है। सूचना एवं प्रौद्योगिकी के बदलते परिदृश्य में आवश्यक कार्मिक प्रशिक्षण एवं विकास का विवरण इसमें निहित है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में कार्मिक नियोजन को भी दर्शाया गया है।

इकाई 6 :– भागीदारी प्रबन्धन एवं सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के विचार का प्रतिपादन करता है। सम्पूर्ण गुणवत्ता के विभिन्न तत्त्वों का सविस्तार विवरण यहाँ उपस्थित है। ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों के परिप्रेक्ष्य में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की विशेष चर्चा इस इकाई में की गयी है।

इकाई 7 :– इसमें सूचना की विशद चर्चा के साथ इसकी विपणनीय विशेषताओं को सम्मिलित किया गया है। यहाँ सूचना के उत्पादन स्रोतों, माँग एवं आपूर्ति, वितरण एवं विपणन की चर्चा उपस्थित है। इस इकाई में सूचना विपणन के भारतीय परिदृश्य का विवरण निहित है। साथ ही साथ सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का मूल्य निर्धारण, विभिन्न विपणन युक्तियों, कार्यक्रम एवं मूल्यांकन आदि का विवरण प्रदर्शित है।

RIL-091

इकाई 8 :– वित्तीय प्रबन्धन : बजट, लेखाकरण एवं लेखा परीक्षण से सम्बन्धित है। यहाँ वित्तीय प्रबन्धन के विभिन्न पक्षों को विशेषकर ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के सन्दर्भ में प्रस्तुत किया गया है। इसमें बजट तैयार करने के विभिन्न आधारों एवं तकनीकों को सम्मिलित किया गया है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के बजट के औचित्य को प्रतिपादित करने वाले अनेक विधियों को भी यहाँ उपस्थित किया गया है। साथ ही ग्रन्थालयों के लेखा परीक्षण पर भी चर्चा की गयी है।

इकाई 9 :– इसमें लागत से सम्बन्धित विभिन्न तकनीक एवं विश्लेषण सम्मिलित है। यहाँ लागत निर्धारण की प्रक्रिया का सविस्तार विवरण उपस्थित किया गया है। ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों के परिप्रेक्ष्य में लागत विश्लेषण की चर्चा इसमें निहित है जिसमें बजट प्रक्रिया की योजना एवं क्रियान्वयन के लिए लागत विश्लेषण का उपयोग सिद्ध किया गया है।

RIL-091

इकाई 1 : प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त, वैज्ञानिक प्रबन्धन, उद्देश्यपूर्ण प्रबन्धन और ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में इनका अनुप्रयोग।

GENERAL PRINCIPLES OF MANAGEMENT, SCIENTIFIC MANAGEMENT, MANAGEMENT BY OBJECTIVES AND THEIR APPLICATION TO LIBRARY AND INFORMATION SCIENCE MANAGEMENT.

संरचना :

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त

- 1.2.1 प्रबन्धन का तात्पर्य एवं परिभाषा
- 1.2.2 प्रबन्धन के स्तर एवं विशेषताएं
- 1.2.3 प्रबन्धन के कार्य
- 1.2.4 प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त

1.3 वैज्ञानिक प्रबन्धन : तात्पर्य एवं विशेषताएं

- 1.3.1 सिद्धान्त
- 1.3.2 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के संचालन में वैज्ञानिक प्रबन्धन

1.4 उद्देश्यपूर्ण प्रबन्धन : तात्पर्य एवं उद्देश्य

- 1.4.1 विशेषताएं एवं लाभ

1.5 ग्रन्थालय एवं सूचना प्रबन्धन

1.6 निष्कर्ष

1.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :–

(क) प्रबन्धन के विचार एवं महत्व से अवगत कराना

(ख) वैज्ञानिक प्रबन्धन की व्याख्या के साथ ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में इसके अनुप्रयोग को बताना

(ग) उद्देश्यपूर्ण प्रबन्धन की विशेषताओं को प्रदर्शित करना

(घ) ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के प्रबन्धन के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित जानकारी प्रदान करना।

RIL-091

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रबन्धन एक ऐसी प्रक्रिया है जो सभी प्रकार के संगठनों/संस्थाओं में समान रूप से अपनायी जाती है। संस्था के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अपनायी जाने वाली सुव्यवस्थित प्रक्रिया ही प्रबन्धन है प्रबन्धन के बिना संगठन निरंकुश एवं निरर्थक हो जाता है। प्रबन्धन के सिद्धान्तों के अनुपालन से संगठन के कार्यों में कुशलता एवं उपयोगिता में वृद्धि प्राप्त की जा सकती है। प्रबन्धन कार्यों को नियोजित करने, आदेश देने, समन्वय करने एवं नियंत्रण करने के लिए आवश्यक है।

प्रौद्योगिकी एवं विकास के इस युग में अन्य धारणाओं की तरह प्रबन्धन को नये सिरे से परिभाषित करने एवं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आधुनिक तकनीकें अपनाने पर बल दिया जाने लगा है। प्रत्येक संगठन/संस्था का उद्देश्य कम से कम लागत पर अधिकाधिक लाभ कमाना होता है। इसके लिए आवश्यक है कि संसाधनों का बेहतर उपयोग किया जाये एवं विभिन्न विकसित तरीकों की मदद से अधिकतम लाभ प्राप्त किया जाय। संसाधनों का उचित उपयोग एवं व्यवस्थापन, नई आवश्यक लाभदायी योजनाओं का नियोजन, क्रियान्वयन एवं नियंत्रण उचित प्रबन्धन द्वारा ही सम्भव है। आज प्रबन्धन की अनेक विधाएं विकसित हो गयी हैं जिनका उपयोग संगठन द्वारा अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किया जा रहा है।

1.2 प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त

1.2.1 प्रबन्धन का तात्पर्य :

प्रबन्धन अंग्रेजी शब्द Management का हिन्दी रूपान्तरण है, जिसका तात्पर्य होता है, कर्मचारियों की कौशलपूर्ण युक्ति के साथ व्यवस्था करना। यह एक व्यापक शब्द है जिसे आधुनिक जगत में कई अर्थों में प्रयोग किया जाता है। संकीर्ण अर्थ में प्रबन्धन अन्य व्यक्तियों से कार्य सम्पादित कराने की युक्ति है। विस्तृत अर्थ में यह एक कला और विज्ञान है जो निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न मानवीय प्रयासों से सम्बन्ध रखता है। इस अर्थ में प्रबन्धन में सामान्यतया नियोजन, समन्वय, निर्देशन, अभिप्रेषण एवं नियंत्रण आदि कार्य सम्मिलित होते हैं।

किसी भी संगठन अथवा ग्रन्थालय में अनेक व्यक्ति मिलकर एक समान उद्देश्य के लिए कार्य करते हैं। सभी संगठन अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सामूहिक प्रयासों को यथाविधि संगठित, नियोजित, निर्देशित, समन्वित एवं नियंत्रित करते हैं। संगठित एवं सामूहिक प्रयासों को उद्देश्यपूर्ण बनाने की यह प्रक्रिया प्रबन्धन कहलाती है। प्रबन्धन के अभाव में कोई संगठन ठीक उसी प्रकार निरर्थक एवं निरंकुश हो जाती है जैसे आत्मा के बिना मनुष्य का शरीर। प्रबन्धन ठीक उसी प्रकार संगठन के कर्मचारियों को निर्देशित एवं संचालित करता है, जिस प्रकार मानव का मस्तिष्क शरीर के विभिन्न अंगों में समन्वय, संचालन एवं नियंत्रण रखता है।

प्रो0 थियो हैमन के अनुसार प्रबन्धन को तीन अर्थों म समझा एवं प्रयुक्त किया जा सकता है। इनक उल्लेख निम्न हैं :

1. एक प्रक्रिया के अर्थ में
2. विज्ञान के अर्थ में
3. प्रबन्धन से जुड़े अधिकारियों के अर्थ में

प्रक्रिया के अर्थ में प्रयुक्त प्रबन्धन का तात्पर्य प्रबन्धन की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में सामान्यतः नियोजन, संचालन, नियंत्रण एवं अभिप्रेरण सम्मिलित होते हैं। संस्था को अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में इन तत्त्वों की महती आवश्यकता होती है। इस तरह प्रबन्धन प्रक्रिया सूचक है। प्रबन्धन के उस ज्ञान अथवा विज्ञान के अर्थ में भी प्रयोग किया जाता है जिसे अनुशासन कहा जाता है। अनुशासन

के रूप में प्रबन्धन वास्तव में कला एवं विज्ञान दोनों है। प्रबन्धन कार्य से जुड़े व्यक्तियों के समूह को प्रबन्धक कहा जाता है। संज्ञा के रूप में यह शब्द प्रायः किसी संगठन के उन कार्मिकों के लिए प्रयुक्त होता है जो प्रबन्धन सम्बन्धी कार्य करते हैं।

प्रो0 हैमन के उक्त अर्थों के अलावा भी प्रबन्धन का प्रयोग किया जाता है।

(क) अन्य व्यक्तियों से कार्य कराने के अर्थ में ;

(ख) निर्देशन के अर्थ में ;

(ग) मनुष्यों के विकास के अर्थ में ;

(घ) सामूहिक प्रयासों की व्यवस्था के सन्दर्भ में एवं

(ङ) एक अनुशासन या विधा के रूप में।

प्रबन्धन की परिभाषा –

आज की बदलती हुई परिस्थितियों में प्रबन्धन के अर्थ को समझने के लिए ख्यातिलब्ध विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं पर एक नजर डालना आवश्यक होगा।

1. **एफ0 डब्ल्यू0 टेलर (F.W. Taylor) के अनुसार** "प्रबन्धन यह जानने की कला है कि क्या करना है एवं उसे करने का सर्वोत्तम एवं सुलभ तरीका क्या है।"

(क) प्रबन्धन एक कला है

(ख) यह किये जाने वाले कार्यों का निर्धारण है

(ग) इसमें कार्य सम्पादन के श्रेष्ठतम एवं सुलभ मार्ग की खोज की जाती है।

2. **जे0 लून्डी (J. Lundy) के अनुसार** "प्रबन्धन मुख्य रूप से विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए दूसरों के प्रयत्नों को नियोजित, अभिप्रेरित एवं नियंत्रित करने का कार्य है।"

"Management is principally a task of planning, motivating and controlling the efforts of others towards a specific object."

3. **हेराल्ड कून्ज (Herold koontg)** ने प्रबन्धन को पारिभाषित करते हुए कहा है कि "प्रबन्धन औपचारिक रूप से संगठित समूह के साथ एवं उसके द्वारा कार्य कराने की कला है।

"Management is the art of gettings things done through and with formally organised group."

4. **हेनरी फेयोल (Henry Fayol)**के अनुसार "प्रबन्धन का अर्थ पूर्वानुमान लगाने, नियोजन करने, आदेश देने, समन्वय करने एवं नियंत्रण करने से है।

Management is the forecast and to plan, to organise, to command, to cordinate, and to control."

5. **फेयोल** की यह परिभाषा प्रबन्धन की प्रक्रिया को स्पष्ट करती है, इस प्रक्रिया में नियोजन, संगठन, आदेश, समन्वय एवं नियंत्रण के साथ पूर्वानुमान को सम्मिलित किया गया है। यह परिभाषा अत्यन्त सरल एवं सुस्पष्ट है।

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी प्रबन्धन की परिभाषाओं के विश्लेषण एवं उपलब्ध प्रबन्धन साहित्य के अध्ययन से निम्न तथ्य स्पष्ट होते हैं, जो प्रबन्धन की विशेषताएं हैं :–

1. प्रबन्धन एक प्रक्रिया है,
2. यह एक सामाजिक प्रक्रिया है क्योंकि यह समाज के विभिन्न व्यक्तियों द्वारा ही सम्पादित की जाती है,

RIL-091

3. यह उद्देश्यपूर्ण होता हैं,
4. संगठन के सभी स्तरों पर यह आवश्यक होता है,
5. यह कला और विज्ञान दोनों है।
6. सहयोग एवं समन्व्य इसके आवश्यक तत्त्व हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि प्रबन्धन एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जो निर्दिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रयासों का नियोजन, संगठन,समन्वय, निर्देशन एवं नियंत्रण करती है।

प्रबन्धन का महत्व :

जार्ज आर0 टेरी के अनुसार "कोई भी उपक्रम बिना प्रभावी प्रबन्धन के अधिक समय तक जिन्दा नहीं रह सकता।अनेक आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक लक्ष्यों की प्राप्ति बहुत सीमा तक योग्य प्रबन्धकों पर निर्भर करती है। प्रबन्धन विज्ञान का सभी क्षेत्रों में जहाँ पर निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए दो या दो से अधिक व्यक्ति कार्य करते हैं, अत्यन्त महत्व है। प्रबन्धन के सिद्धान्त न केवल परिवार, क्लब, गिरजाघर, मंदिर, गैर सरकारी संगठनों के लिए उपयोगी और महत्वपूर्ण है अपितु शिक्षण संस्थाओं, प्रशिक्षण केन्द्रों, औषधालयों, सैनिक संगठनों, लघु एवं वृहत आकार के औद्योगिक प्रतिष्ठानों आदि के लिए अत्यन्त उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है। अतः अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति रुजवेल्ट ने ठीक ही कहा है कि " एक सरकार बिना अच्छे प्रबन्धन के रेत पर निर्मित मकान के समान है। संक्षेप में प्रबन्धन के महत्व का विवरण निम्न कारणों से है :–

1. निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति,
2. नीतियों के निर्धारण के लिए,
3. न्यूनतम प्रयत्नों द्वारा अधिकाधिक लाभ की प्राप्ति,
4. प्रतिस्पर्धा का सामना करने के लिए,
5. मानव संसाधन का विकास ,
6. वैज्ञानिक एवं तकनीकी परिवर्तनों का क्रियान्वयन,
7. श्रम समस्याओं का उचित समाधान,
8. संस्था के उद्देश्यों का निर्धारण में सहायक,
9. राष्ट्र की समृद्धि एवं विकास,
10. सामाजिक सुरक्षा एवं स्थिरता,
11. सामाजिक परिवर्तन एवं विकास

1.2.2 प्रबन्धन के स्तर (Levels of Management)

किसी भी संगठन अथवा संस्था में अनेक स्तर होते हैं। स्वाभाविक है प्रत्येक स्तर पर लोगों के प्रयासों को निर्देशित करने के लिए प्रबन्धन से जुड़े अधिकारी होंगे। यहाँ प्रबन्धन के स्तर से तात्पर्य प्रबन्धन से जुड़े अधिकारियों/प्रबन्धन के वर्गीकरण से है। सुविधा एवं कार्य सम्पादन की दृष्टि से इन्हें तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है।

(क) शीर्ष स्तरीय प्रबन्धन (Top Management)

संगठन अथवा संस्था की शीर्ष पर स्थित प्रबन्धन, जो संस्था के सफल संचालन, प्रबन्धन एवं नीति निर्माण के लिए उत्तरदायी होता है। इसमें संस्था के संचालक मण्डल, प्रबन्धन संचालक एवं मुख्य

प्रबन्धन आते हैं। योजना बनाना एवं निर्णय लेना एवं अन्य अधिकरणों के साथ सम्बन्ध निर्वाह इसी तरह पर किया जाता है। इसमें सबसे वरिष्ठ कार्यकारी प्रबन्धकों को सम्मिलित किया जाता है। पूरे संगठन के दिशा निर्देश के लिए ये जिम्मेदार होते हैं।

(ख) मध्य स्तरीय प्रबन्धन (Middle Management) :

पर्यवेक्षण स्तर से ऊपर किन्तु शीघ्र प्रबन्धन से नीचे का प्रबन्धन मध्य प्रबन्धन होता है। शीर्ष प्रबन्धन द्वारा निर्धारित योजनाओं एवं निर्णयों को क्रियान्वित करने की विधियों/तकनीकों का विकास एवं उन पर नियंत्रण कार्य इस स्तर के प्रबन्धक करते हैं। इसमें संगठन के प्रबन्धक, उप प्रबन्धक एवं सहायक प्रबन्धक सम्मिलित किये जाते हैं। मध्य स्तरीय प्रबन्धन की संगठन में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इन्हें शीर्ष प्रबन्धन एवं अपने से नीचे क्रियान्वयन प्रबन्धन के बीच समन्वय करने एवं परिणाम प्राप्त करने का उत्तरदायित्व इनका होता है।

(ग) पर्यवेक्षणीय प्रबन्धन (Supervisory Management) :

प्रबन्धन का सबसे निम्न स्तर पर्यवेक्षणीय प्रबन्धन होता है। दैनिक क्रियाकलापों का सम्पादन इस स्तर के प्रबन्धन की महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व होता है। कार्यो एवं परिणाम के लिए ये सीधे उत्तरदायी होते हैं। इस स्तर के प्रबन्धन का कर्मचारियों से निकटतम सम्बन्ध होता है। इस वर्ग में पर्यवेक्षक, अधीक्षक, सहायक ग्रंन्थालयी एवं अन्य विभागीय प्रभारी सम्मिलित किये जा सकते हैं।

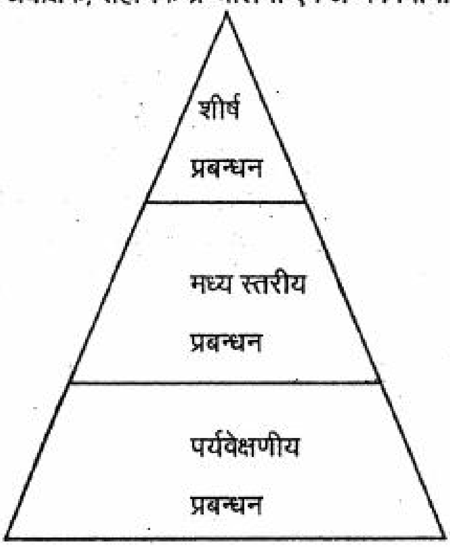

प्रत्येक स्तर के प्रबन्धन पर अलग–अलग प्रबन्धन क्षमता अथवा दक्षता की आवश्यकता होती है। इस दक्षता एवं कौशल से ही ज्ञान को कार्य में परिणित किया जा सकता है। साधरणतया प्रबन्धक में तीन प्रकार के कौशल की अपेक्षा की जाती है :– (1) तकनीकी कौशल (2) मानव कौशल एवं (3) वैचारिक कौशल। उपरोक्त दक्षताओं के अभाव में प्रबन्धक अपना कार्य कुशलता से सम्पन्न नहीं कर सकता है। इन कौशल का महत्व प्रबन्धन के स्तर के अनुसार अलग–अलग हो सकता है, जैसे तकनीकी कौशल का सर्वाधिक महत्व पर्यवेक्षणीय प्रबन्धन के लिए होता है जबकि शीर्ष प्रबन्धन के लिए इसका महत्व अत्यन्त कम होता है।

1.2.3 प्रबन्धन कार्य

प्रबन्धन से जुड़ी विभिन्न विद्वानों की परिभाषाओं से प्रबन्धन कार्यों में एकरूपता प्रदर्शित नहीं होती है। विद्वान प्रबन्धन कार्य के सम्बन्ध में भी भिन्न –भिन्न मत रखते हैं लेकिन कुछ कार्यों को किसी न किसी रूप में प्रबन्धन कार्य में सम्मिलित किया जाता है। महत्वपूर्ण प्रबन्धन तत्त्वों को प्रबन्धन कार्यों के रूप में जाना जाता है।

प्रबन्धन शास्त्र के पितामह हेनरी फेयोल ने प्रबन्धन के पाँच कार्य–नियोजन, संगठन, निर्देशन, नियंत्रण एवं समन्वयक आदि निर्धारित किये थे। न्यूमैन एण्ड समर ने चार कार्यों–नियोजन,संगठन, निर्देशन एवं नियंत्रण की पहचान की है। लूथर गुलिक एवं एल0 उर्विक ने सात प्रबन्धकीय कार्यों को निर्धारित किया है। इन्होंने पोस्डकॉर्ब (POSDCORB) शब्द का प्रयोग संक्षेप में इन कार्यों को स्मृति में रखने के लिए किया। पोस्टकॉर्ब शब्द में प्रत्येक अक्षर से अलग–अलग कार्य–नियोजन, संगठन, कर्मचारी व्यवस्था, निर्देशन, समन्वय, प्रतिवेदन एवं बजट प्रस्तुतिकरण प्रदर्शित हैं। उपरोक्त प्रदर्शित सभी प्रबन्धन कार्य एक दूसरे पर आश्रित एवं अन्तर्सम्बन्धित है। अधिकतर विद्वान पाँच कार्यों–नियोजन, संगठन, कर्मचारी व्यवस्था, निर्देशन एवं नियंत्रण को प्रबन्धन का आवश्यक त्तव मानते हैं।

नियोजन :

किसी भी कार्य को सुचारु रूप से सम्पन्न करने के लिए पूर्व में योजना बना लेना श्रेयस्कर होता है। नियोजन के अन्तर्गत हम पूर्व में ही इन बातों का निर्धारण कर लेते हैं कि क्या करना है एवं कैसे करना है। नियोजन की चार महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं :– (1) योजना का उद्देश्य, जो संगठन के समग्र उद्देश्यों एवं लक्ष्यों पर आधारित हो। (2) नियोजन प्रबन्धन का प्रथम कार्य या चरण है एवं अन्य प्रबन्धन कार्यों के क्रियान्वयन में तार्किक ढंग से सहायक है। (3) सभी स्तर के प्रबन्धक इसमें सम्मिलित होते हैं। (4) योजना की दक्षता आर्थिक धनराशि में मांपी जाती है। योजना विकसित किये जाने की प्रक्रिया में अनेक मौलिक एवं तार्किक चरण सम्मिलित होते हैं।

योजना को यथा संभव लचीला एवं समन्वित रखा जाना चाहिए इसे ग्नाते समय ग्रन्थालय की वर्तमान स्थिति का आकलन कर लेना चाहिए। योजनाओं को लिखित प्रलेखों के रूप में प्रबन्धन के सभी स्तरों पर वितरित कर देना चाहिए जिससे कोई अनिश्चितत्ता न रहे। नियोजन ही क्रियान्वयन एवं निर्देशन को आधार प्रदान करता है।

संगठित करना :

किसी भी संगठन में वहाँ की संगठनात्मक स्थिति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह वह प्रक्रिया है जिसमें उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कर्मचारियों, एवं संसाधनों, सामग्री, उपकरण आदि में औपचारिक सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। प्रबन्धन का कार्य ऐसी संगठनात्मक पद्धति का विकास करना होता है जिसमें समस्त कर्मचारियों को समन्वित अवस्था में सूत्रबद्ध किया जा सके, जिससे कार्य अधिक कुशलतापूर्वक सम्पन्न हो सके।

संगठनात्मक ढाँचे के निर्माण में कार्यविभाजन की दृष्टि से सम्पूर्ण प्रणाली को विभागों, उप विभागों, इकाइयों आदि में विभाजित कर दिया जाता है। इसमें व्यक्ति का अपने विभाग/इकाई में उत्तरदायित्व एवं अधिकार सम्मिलित कर दिये जाते हैं। संगठनात्मक ढाँचा तैयार करने में निम्न सिद्धान्तों का पालन किया जाना चाहिए:–

(1) मुख्य क्रियाकलापों को अच्छी तरह परिभाषित किया जाना चाहिए,

(2) इन्हें तार्किक आधार पर समूहीकृत किया जाना चाहिए,

(3) प्रत्येक विभाग, उप विभाग एवं इकाई की जिम्मेदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए,

(4) उत्तरदायित्व के साथ अधिकार सुनिश्चित किया जाना चाहिए,

(5) एक प्रबन्धक के अधीन कार्य करने वाले कर्मचारियों की संख्या उचित एवं तार्किक होनी चाहिए,

RIL-091

(6) संगठनात्मक ढाँचे का मूल्यांकन संगठन के उद्देश्यों से इसमें योगदान के आधार पर किया जाना चाहिए।

कर्मचारी–व्यवस्था (Staffing) :

कर्मचारी –व्यवस्था का तात्पर्य विभिन्न प्रकार के कायो के सम्पादन के लिए उपयुक्त कर्मचारियों की व्यवस्था करने से है। संगठनात्मक ढाँचे में विभिन्न कार्यों के लिए अनेक स्तरों पर विभिन्न पद सृजित किये जाते हैं। किसी भी संगठन की कार्य कुशलता उसके कर्मचारियों पर पूर्ण रूप से निर्भर करती है। अतः कर्मचारियों को विभिन्न पदों के लिए नियुक्त करते समय कोई निर्धारित नियुक्ति नीति अपनानी चाहिए। उनमें अपने पद के अनुरूप कार्य सम्पादन में दक्षता, क्षमता तथा कार्य करने की पर्याप्त अभिरुचि होनी चाहिए। संक्षेप में कर्मचारी प्रबन्धन का अर्थ संगठन में कर्मचारियों का ऐसी कुशलता के साथ प्रबन्ध करना है जिससे कम से कम प्रयासों में अधिकाधिक परिणाम प्राप्त किया जा सके।

कर्मचारी व्यवस्था प्रबन्धन का महत्वपूर्ण कार्यक्षेत्र है। इसमें निम्न कार्य सम्मिलित हाते हैं (i) मानव संसाधन योजना (ii) चयन (iii) प्रशिक्षण एवं विकास (iv) पुरस्कार (v) अभिप्रेरणा (vi) स्वास्थ्य एवं सुरक्षा (vii) कार्य निष्पादन प्रशंसा आदि। इससे सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण लक्षण हैं : कार्य विश्लेषण, कार्य विवरण, कार्य सन्तुष्टि, कार्य मूल्यांकन आदि।

निर्देशन (Directing) :

निर्देशन एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रबन्धकीय कार्य है, जिसके अभाव में प्रशासनिक सफलता नहीं प्राप्त की जा सकती है। कर्मचारियों की कार्य कुशलता एवं सामन्जस्य बहुत कुछ संस्था के प्रधान के नेतृत्व पर निर्भर करता है। निर्देशन का उद्देश्य संगठन के सदस्य कर्मचारियों को सही दिशा में अग्रसारित कर वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करना है। देखा जाय तो निर्देशन का सीधा सम्बन्ध कर्मचारी व्यवस्था से होता है क्योंकि इन दोनों कार्यों के केन्द्र में कर्मचारी ही होते हैं। कर्मचारियों के अन्तर्गत आत्म विश्वास, उत्साह एवं नैतिक आचरण का विकास करना सफल निर्देशन कार्य होता है।

निर्देशन मात्र शीर्ष प्रबन्धन का ही कार्य नहीं है बल्कि यह प्रबन्धन के प्रत्येक स्तर पर आवश्यक है। इसमें मौखिक एवं लिखित दोनों प्रकार के स्वरूप सम्भव हैं। लिखित निर्देश कार्यालयी पत्र, मेमो, प्रतिवेदन, दिशा–निर्देश आदि स्वरूप में हो सकते हैं। कर्मचारियों के साथ औपचारिक बैठकों एवं अनौपचारिक मुलाकातों में इनको प्रसारित किया जाता है। निर्देशन सम्बन्धी सिद्धान्तों का अनुपालन इस कार्य में प्रभावी भूमिका निभाता है।

नियंत्रण (Controlling) :

प्रणाली पर पूर्ण नियंत्रण भी अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रबन्धकीय कार्य है। यह निर्देशन का एक महत्वपूर्ण पक्ष होता है। नियंत्रण का तात्पर्य ऐसे दिशा–निर्देशों से होता है जो गुणवत्ता एवं कार्य दक्षता के मानकों के अनुरूप कार्य सम्पादित करने के लिए विकसित किये जाते हैं। मात्रा एवं गुणवत्ता के सन्दर्भ में उत्पादन सम्बन्धी सूचनाओं को अपने वरिष्ठ प्रबन्धकों को पहुँचाने की प्रत्येक स्तर के कर्मचारियों का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व होता है। इस तरह यह स्पष्ट है कि निर्देशन एवं प्रतिवेदन दोनों नियंत्रण कार्य से जुड़े होते हैं।

नियंत्रण प्रक्रिया में निम्नलिखित सम्मिलित होते हैं :–

(क) मानकों की स्थापना, जैसे भौतिक मानक, लागत मानक आदि,

(ख) कार्य सम्पादन की माप, जैसे बजट, सांख्यिकीय डेटा, प्रतिवेदन आदि,

(ग) विचलन सुधार।

कार्य सम्पादन का प्रक्रिया की तकनीक एवं प्रयुक्त प्रौद्योगिकी से निकट सम्बन्ध होता है। एक अच्छी नियंत्रण प्रणाली में उद्देश्यपरक, लचीला, कम खर्चीला, समझने योग्य, कार्य की आवश्यकता के अनुरूप, व्यवधान की तत्काल सूचना आदि गुण सम्मिलित किये जाने चाहिए।

अन्य प्रबन्धकीय कार्य :

प्रबन्धन सम्बन्धी अन्य कार्यों में समन्वय, संचार, अभिप्रेरण, प्रतिवेदन, बजट प्रस्तुतीकरण, नव निर्माण आदि सम्मिलित हैं। इन कार्यों को पूर्व वर्णित पाँच मुख्य प्रबन्धकीय कार्यों के उप वर्ग/उप–अवयव के रूप में भी पहचाना जाता है। उदाहरण स्वरूप निर्देशन कार्य के अन्तर्गत उप कार्यों के रूप में प्रेरित करना एवं नेतृत्व प्रदान करना आदि सम्मिलित किये जाते हैं।

समन्वय :

समन्वय भी महत्वपूर्ण प्रबन्धकीय कार्य माना जाता है। यह दो प्रकार से देखा जाता है एक कर्मचारियों के बीच समन्वय एवं दूसरा विभिन्न विभागों में समन्वय। संगठन के स्तर पर समग्र कार्यक्रम के लिए विभिन्न गतिविधियों में सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया ही समन्वय है।

संचार :

सूचनाओं अथवा विचारों का आदान–प्रदान/एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को सूचनाओं का संप्रेषण भी प्रबन्धन में महत्वपूर्ण होता है।

अभिप्रेरण :

यह निर्देशन कार्य का ही एक अंग है। इसमें बेहतर परिणाम या सेवा के लिए कर्मचारियों को प्रेरित किया जाता है।

प्रतिवेदन :

विशिष्ट अवधि में ग्रन्थालय की गतिविधियों, प्राप्तियों एवं कर्मियों से सम्बन्धित सूचनाएं उच्चाधिकारियों अथवा अन्य व्यक्तियों के लिए उपलब्ध कराना। ग्रन्थालय बड़ी मात्रा में सांख्यिकीय डेटा एवं प्रतिवेदन तैयार करते हैं।

बजट प्रस्तुतिकरण :

वित्तीय अर्थ में संसाधनों का नियोजित आवंटन सम्बन्धी विवरण बजट कहलाता है। यह प्रायः आगामी वर्ष के लिए (विशिष्ट अवधि) प्रस्तुत किया जाता है। बजट, योजना प्रलेखों में अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है।

1.2.4 प्रबन्धन के सिद्धान्त (Principles of Management)

प्रबन्धन से जुड़े विभिन्न विद्वानों एवं विशेषज्ञों ने प्रबन्धन कार्यों को व्यावहारिक दृष्टि से सुगम बनाने के लिए अनेक सिद्धान्तों का विकास किया है। विभिन्न विद्वानों ने प्रबन्धन के सिद्धान्त के विषय में अपने अलग–अलग विचार प्रस्तुत किये हैं। विलियम बी0 कोरोनेल के अनुसार "सिद्धान्त आधारभूत विषय या सर्वमान्य सत्य है, जो किसी कार्य अथवा विचार का मार्ग दर्शन करता है। हम कह सकते

हैं कि सिद्धान्त सत्य का एक आधारभूत विवरण है जो प्रयोग, अनुसंधान अथवा अभ्यास के व्यावहारिक विश्लेषण द्वारा स्थापित किया जाता है एवं यह विभिन्न क्रियाओं का मार्ग दर्शन करता है।

फ्रांस के प्रसिद्ध उद्योगपति श्री हेनरी फेयोल प्रबन्धन के क्षेत्र में क्रियात्मक दृष्टिकोण के प्रतिपादक थे। उनकी यह मान्यता थी कि औद्योगिक संगठनों के प्रबन्धकों को प्रबन्धन के कुछ सामान्य आधारभूत सिद्धान्तों का ज्ञान होना आवश्यक है। अतः उन्होंने प्रबन्धन के कुछ आधारभूत सिद्धान्तों का प्रतिपादन प्रबन्धन कार्यों को सरल बनाने हेतु किया। कुछ व्यक्ति इन्हें प्रशासन के सिद्धान्त भी मानते हैं। हेनरी फेयोल द्वारा प्रतिपादित प्रबन्धन के 14 सिद्धान्त निम्न हैं :–

1. कार्य का विभाजन :

जो व्यक्ति जिस कार्य को करने के योग्य हो उसे वह ही कार्य सौंपा जाना चाहिए क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति हर कार्य को नहीं सम्पन्न कर सकता। अर्थात् एक विशिष्ट व्यक्ति को ही एक विशिष्ट कार्य सौंपा जाता है।

2. अधिकार एवं उत्तरदायित्व :

अधिकार एवं उत्तरदायित्व एक दूसरे से सम्बन्धित है, ये दोनों साथ–साथ चलते हैं। आदेश देने की शक्ति एवं क्रियान्वित कराने की शक्ति अधिकार में निहित होती है। यह अधिकार व्यक्ति एवं पद में होती है। यदि किसी व्यक्ति को कोई कार्यभार सौंपा जाये तो इसे निभाने के लिए अर्थात् आदेश देने के लिए अधिकार भी दिये जाने चाहिए।

3. अनुशासन :

अनुशासन के अन्तर्गत कर्मचारियों की आज्ञाकारिता, व्यवहार एवं बड़े अधिकारियों के प्रति सम्मान प्रदर्शन आदि सम्मिलित होते हैं। अनुशासन एक शक्ति है जो किसी व्यक्ति अथवा समूह को निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए नीतियों, विषयों एवं कार्यविधियों का पालन करने के लिए प्रेरित करती है।

4. आदेश की एकता :

एक कर्मचारी को एक ही अधिकारी से आदेश अथवा निर्देश प्राप्त होना चाहिए। एक कर्मचारी को एक ही आदेश देने वाला अधिकारी होना चाहिए। यदि एक ही कर्मचारी को अनेक अधिकारियों से आदेश एवं निर्देश प्राप्त होंगे तो कर्मचारी न केवल भ्रमित होगा अपितु अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह भी ठीक से वह नहीं कर पायेगा।

5. निर्देशन की एकता :

यह सिद्धान्त सभी स्तरों पर किसी समूह की क्रियाओं से सम्बन्ध रखता है, जबकि आदेश की एकता का सिद्धान्त एक व्यक्ति की क्रियाओं से सम्बन्ध रखता है। तात्पर्य यह है कि एक उद्देश्य की पूर्ति हेतु क्रियाओं के एक समूह का संचालन एक ही व्यक्ति द्वारा किया जाना चाहिए एवं उसकी एक ही योजना होनी चाहिए।

6. सामूहिक हितों के लिए वैयक्तिक हितों का समर्पण :

निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति एवं संस्था की प्रगति के लिए आवश्यक होने पर वैयक्तिक हितों का त्याग कर देना चाहिए। प्रबन्धकों के व्यक्तिगत एवं सामूहिक हितों में समन्वय रखा जाना चाहिए किन्तु इसमें अवरोध होने पर उन्हें सामूहिक हितों की रक्षा के लिए वैयक्तिक हितों का समर्पण कर देना चाहिए।

7. पारिश्रमिक :

किसी संस्था में कर्मचारियों को उनके द्वारा प्रदान की गयी सेवाओं का उचित पारिश्रमिक प्राप्त होना चाहिए। इस पारिश्रमिक के निर्धारण में कर्मचारियों एवं नियोजक दोनों की संतुष्टि होनी चाहिए। यदि कर्मचारियों को देय पारिश्रमिक के भुगतान की पद्धति संतोषजनक एवं न्यायसंगत नहीं होगी

तो कर्मचारी पूर्ण लगन, क्षमता एवं रुचि से कार्यों को सम्पादन नहीं करेंगे। फलतः संस्था को असफलता का सामना करना होगा।

8. केन्द्रीयकरण :

किसी उपक्रम में अधिकारों का केन्द्रीयकरण किस सीमा तक हो, यह संस्था की प्रकृति, अधीनस्थों की कार्य कुशलता एवं विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर करती है। अधीनस्थ एवं वरिष्ठ कर्मचारियों के बीच अधिकारों का संतुलन स्थापित होना चाहिए।

9. पदाधिकारी सम्पर्क श्रृंखला :

किसी संगठन अथवा उपक्रम के पदाधिकारी ऊपर से नीचे तक सीधी रेखा के रूप में संगठित होने चाहिए अर्थात् इनके मध्य सम्प्रेषण के उद्देश्य से सम्पर्क रूपी एक श्रृंखला होनी चाहिएं एवं किसी अधिकरी को इसका उल्लंघन नहीं करना चाहिए। अत्यन्त आवश्यक होने पर इस सम्पर्क श्रृंखला का उल्लंघन किया जा सकता है।

10. आदेश (स्थान) :

प्रत्येक संस्था की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक वस्तु एवं व्यक्ति के लिए एक स्थान नियत हो एवं प्रत्येक पदार्थ तथा व्यक्ति अपने निश्चित स्थान पर हो। कार्य में आने वाली बाधाओं को रोकना इसका उद्देश्य है।

11. समता :

प्रबन्धक न्याय, दया आदि व्यवहारों द्वारा कर्मचारियों की वफादारी एवं स्नेह प्राप्त कर सफलता पा सकते हैं।

12. कर्मचारियों के कार्यकाल में स्थिरता :

कर्मचारियों के एक स्थान पर कार्यकाल में कभी न करने से अधिक कार्य कुशलता प्राप्त होती है। इससे एक जगह से दूसरी जगह भेजने में होने वाले व्यय से भी बचा सकता है। नये कर्मचारियों को कार्य सीखने का पूरा अवसर एवं पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए।

13. पहल क्षमता :

पहल क्षमता का उद्देश्य संगठन के सभी स्तर पर कर्मचारियों को किसी नई योजना को प्रस्तावित करने एवं उसका क्रियान्वयन करने की स्वतन्त्रता से है।

14. सहयोग की भावना :

यह सिद्धान्त कर्मचारियों में सहयोग की भावना विकसित करने पर बल देता है। प्रबन्धकों को उनमें एकता एव सहयोग के सभी आवश्यक कारकों के विकसित करने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी दी जानी चाहिए।

टेलर के प्रबन्धन सिद्धान्त :

एफ0 डब्ल्यू टेलर प्रबंधन के क्षेत्र में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रतिपादक थे। टेलर द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त प्रबन्धन के वैज्ञानिक अभिगम के रूप में जाने जाते हैं। इनके सिद्धान्तों का सार निम्न है

(क) अनुभव आधारित नियमों के स्थान पर विज्ञान का अनुप्रयोग

(ख) अलगाव या मतभेद की तुलना में सामूहिक कार्यों में ताल–मेल प्राप्त करना,

(ग) लोगों का सहयोग प्राप्त करना,

(घ) निश्चित परिणाम की अपेक्षा अधिकतम परिणाम के लिए प्रयत्न करना, एव

(ङ) कर्मचारियों के स्वय के लिए एव सगठन की अधिकतम समृद्धि के लिए कर्मचारियों की

RIL-091

अधिकतम सीमा तक उनका विकास करना।

टेलर के ये सिद्धान्त वर्तमान प्रबन्धकों के मौलिक विश्वासों से काफी साम्य रखते हैं। यद्यपि टेलर एवं उनके सहयोगियों ने उपरोक्त सिद्धान्तों को व्यवहार में परिणित करने के लिए कुछ तकनीकों का विकास किया है। ये सिद्धान्त अपने वैज्ञानिक अभिगम के कारण वर्तमान प्रबन्धकों के लिए महत्वपूर्ण बने हुए हैं।

1.3 वैज्ञानिक प्रबन्धन (Scientific Management)

एफ0डब्ल्यू0टेलर को वैज्ञानिक प्रबन्धन का जनक माना जाता है। इनके प्रबन्धन सम्बन्धी विचारों एवं शिक्षार्थी को वैज्ञानिक प्रबन्धन का पर्याय माना जाता है। इनका यह मानना था कि प्रबन्धन का कार्य यदि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया जाय तो उसके परिणाम और भी उत्तम होंगे। इन्होंने अपनी पूरी जिन्दगी में उत्पादन में कार्य कुशलता प्राप्त करने, लागत कम कर लाभ बढ़ाने के प्रयत्न किये साथ ही उच्च उत्पादन के माध्यम से कर्मचारियों को ऊँचा पारिश्रमिक दिलाने के लिए संघर्ष किया। टेलर के प्रयास में उनके कुछ अनुयायियों–हेनरी गांट, फ्रैंक, लिलियन गिलबर्थ एवं हैरिंगटन इमरसन महत्वपूर्ण सहयोग किया। टेलर के साथ मिलकर इन लोगों ने प्रबन्धन विचारों में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया।

"प्रशासन की समस्याओं के साथ आधुनिक विज्ञान के सिद्धान्तों एवं प्रविधियों का प्रयोग वैज्ञानिक प्रबन्धन है। वैज्ञानिक प्रबन्धन में कर्मचारी एवं प्रबन्धन दोनों पक्षों के आधुनिक प्रबन्धन को वैज्ञानिक अभिगम प्रदान करने के लिए निम्न विशेषताएं सम्मिलित की जाती हैं :–

(क) प्रबन्धकीय कार्यों एवं समस्याओं में वैज्ञानिक विधियों का अनुप्रयोग एवं विश्लेषण,

(ख) विभिन्न स्थितियों में मनोवैज्ञानिक अध्ययनों एवं व्यवहार सम्बन्धी विश्लेषण पर आधारित प्रबन्धन में मानवीय तत्त्वों पर गम्भीर मनन,

(ग) सारे प्रबन्धकीय कार्यों में आर्थिक कुशलता पर ज्यादा जोर देना,

(घ) प्रणाली अभिगम, प्रबन्धन के सभी कार्यों पर समान ध्यान देना,

(ङ) विश्लेषण एवं अध्ययन के लिए कम्प्यूटरों का प्रयोग।

टेलर द्वारा विकसित विचारों की श्रृंखला, जो वैज्ञानिक प्रबन्धन का आधार है, के चार मूल भाग हैं :–

(i) प्रत्येक व्यक्ति के कार्य को छोटे तत्त्वों में विभाजित किया जाना चाहिए एवं प्रत्येक तत्त्व को सम्पादित करने के लिए वैज्ञानिक विधि का निर्धारण किया जाना चाहिए।

(ii) कर्मचारियों का चयन वैज्ञानिक आधार पर किया जाना चाहिए एवं उन्हें उपयुक्त तरीके से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

(iii) कर्मचारियों एवं प्रबन्धन के बीच अच्छा सहयोग होना चाहिए जिससे कार्य वांछित एवं स्थापित तरीके से किये जा सकें।

(iv) कर्मचारी एवं प्रबन्धन के बीच श्रम का विभाजन उपयुक्त तरीके से किया जाना चाहिए। प्रबन्धकों को कार्य के पर्यवेक्षण, अनुदेशों के निर्माण एवं कार्य करने की विधियों में संलग्न होना चाहिए एवं कर्मचारियों को स्वयं अपना कार्य स्वतन्त्रतापूर्वक करने देना चाहिए।

इस प्रकार वैज्ञानिक प्रबन्धन समस्याओं के विश्लेषण का एक तार्किक ढाँचा प्रदान करता है। इसमें मुख्य रूप से समस्या का विवरण, डेटा एकत्रीकरण, डेटा विश्लेषण, विकल्पों का विकास एवं बेहतर विकल्प का चयन सम्मिलित होते हैं। टेलर का विश्वास था कि वैज्ञानिक विधियों का अनुपालन

कार्यों के सम्पादन का सबसे बेहतर एवं प्रभावी तरीका होगा।

वैज्ञानिक प्रबन्धन के लाभ :

टेलर के अनुसार वैज्ञानिक प्रबन्धन के निम्नलिखित लाभ हैं :–

1. वैज्ञानिक प्रबन्धन से अधिकतम उत्पादन/परिणाम एवं कुशलता सम्भव है।
2. यह कच्चा माल एवं अन्य संसाधनों का अपव्यय रोकता है।
3. यह कर्मचारियों के प्रशिक्षण एवं विकास पर जोर देता है।
4. इससे अधिकतम गुणवत्ता प्राप्त की जाती है।
5. यह संगठन के विभिन्न कार्यों में उच्च स्तरीय तकनीक के अनुपालन की वकालत करता है।
6. वैज्ञानिक प्रबन्धन कर्मचारियों को वित्तीय लाभ प्रदान करने की उनकी उत्पादक क्षमता को विकसित करता है।

किसी भी उपक्रम अथवा संगठन में वैज्ञानिक प्रबन्ध की अवहेलना से निम्न दुष्परिणाम परिलक्षित होंगे :–

(क) **संसाधनों का दुरुपयोग** – कर्मचारी एवं मजदूर पूरी तरह शिक्षित एवं प्रशिक्षित न होने के कारण कार्य के दौरान तकनीकी बातों का ध्यान नहीं रख पाते एवं संसाधनों का दुरुपयोग होता है। उदाहरणार्थ कच्चे माल की उपयोग की जाने वाली मात्रा के सही माप के अभाव में अपने अनुमान से मात्रा को निर्धारित करना।

(ख) अन्तिम/तैयार माल की गुणवत्ता का नियंत्रण प्रमाणों के अभाव में सही ढंग से नहीं हो पाता है।

(ग) कर्मचारियों की उत्पादकता कम रहती है, जिससे वे कम उत्पादन करते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि मजदूरों को अधिक श्रम एवं लगन से कार्य करने सेभी अधिक वित्तीय लाभ नहीं दिया जाता है।

(घ) उचित शिक्षण, प्रशिक्षण एवं विकास के अभाव में कर्मचारी अपनी भूमिका का निर्वाह अच्छी तरह से नहीं कर पाते हैं।

1.3.1 वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्त

वैज्ञानिक प्रबन्धन को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि यह ठोस सिद्धान्तों पर आधारित हो। उनमें से कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्त निम्न हो सकते हैं :–

(1) कार्य विश्लेषण :

यह कार्यों एवं उनका स्वतन्त्र उपकार्यों में विश्लेषण का निर्धारण है।

(2) श्रम विभाजन :

यह संगठन अथवा उपक्रम के विभिन्न स्तरों पर कर्मचारियों के उनके कर्तव्यों का निर्धारण है।

(3) कार्य प्रविधि :

इसका तात्पर्य कार्य की विधियों के सुधार अथवा उन्नयन से है। ये विधियाँ पहले से जाँची–परखी गयी प्रणालियों पर आधारित होनी चाहिए, जैसे समय अध्ययन (Time study), गति अध्ययन (Motion study) एवं उपकरणों का मानकीकरण आदि।

(4) अधिकतम लाभ :
संगठन का संचालन इस प्रभावी ढंग से किया जाना चाहिए कि नियोजकों के लिए उत्पादकता अधिकतम हो एवं कर्मचारियों के लिए अधिकतम समृद्धि सुलभ हो।

(5) प्रोत्साहन पारिश्रमिक प्रणाली :
कर्मचारियों की पारिश्रमिक प्रणाली ऐसी होनी चाहिए जिसमें अच्छे एवं कर्मठ कर्मचारियों के लिए प्रोत्साहन की व्यवस्था हो। इस तरह वे भविष्य में अपने कार्य को और बेहतर करने को प्रोत्साहित होंगे।

(6) पूर्ण समन्वयक/तालमेल :
प्रबन्धन एवं कर्मचारियों के बीच पूर्ण समन्वय एवं सहयोग होना चाहिए।

(7) प्रमाणीकरण :
प्रबन्धन में विभिन्न विधियों एवं कर्मचारियों के कार्य करने की दशाओं का प्रमाणीकरण आवश्यक है।

वैज्ञानिक प्रबन्धन का मूल सिद्धान्त दायित्वों का विकेन्द्रीकरण है। उच्च प्रबन्धन को वित्तीय मामलों के निर्णय तक सीमित रखना चाहिए। नीतियों के क्रियान्वयन आदि के अधिकार मध्य स्तरीय प्रबन्धन अथवा वेतन भोगी अधिकारियों को देने चाहिए। कार्यकारी अधिकारियों को शीर्ष प्रबन्धन की नीतियों को ईमानदारी से क्रियान्वयन की पूरी जिम्मेदारी लेनी चाहिए।

1.3.3 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में वैज्ञानिक प्रबन्धन का अनुप्रयोग

वैज्ञानिक प्रबन्धन एवं प्रक्रिया, शोध तकनीकों, द्वितीय विश्वयुद्ध के समय विकसित, की विशेषताओं को ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में उपयोग के कुछ प्रयास किये गये। प्रबन्धन की वैज्ञानिक अवधारणा का विस्तार 1960 के मध्य में देखने को मिलता है जब ग्रन्थालय में कम्प्यूटर एवं प्रणाली विश्लेषण के उपयोग किये गये। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के जिन क्षेत्रों में इसे विशेष उपयोगी माना गया वे हैं :– लागत निर्धारण, यांत्रिक उपकरणों का उपयोग, सूचीकरण आदि।

वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्तों का ग्रन्थालय के निम्न कार्यों में सफलतापूर्वक उपयोग किया जा सकता है :–

(क) तीव्र गति से सम्पादित किये जाने वाले कार्य, जैसे डुप्लिकेट चेकिंग, टंकण कार्य, पुस्तक क्रयादेश,सूची पत्रकों का प्रतिलिपिकरण, पुस्तक निर्गम एवं पुस्तक आगम आदि।

(ख) पुनरावृत्ति वाले कार्य, जिसमें एक कार्य को सम्पादित करने के लिए प्रत्येक समय समान चरणों को अपनाया जाता है। इस प्रकार के कार्य के उदाहरण –क्रयादेश, सूचीकरण, आदान-प्रदान, व्यवस्थापन आदि।

(ग) ग्रन्थालय के ऐसे कार्य जिसमें अधिक धनराशि व्यय होती हो, जैसे एक वृहद ग्रन्थालय में सन्दर्भ सेवा प्रदान करना, कार्य-लागतकरण, लागत लेखाकरण आदि।

(घ) ऐसे कार्य जिनमें लोगों अथवा उपकरणों की तीव्र गति वांछित हो, जैसे अधिग्रहण एवं तकनीकी अनुभागों के मध्य भौतिक व्यवस्थापन, सार्वजनिक सूची, बड़े वाङ्गमयात्मक उपकरण, सन्दर्भ अनुभाग एवं परिचालन अनुभाग। इन कार्यों में व्यक्तियों का स्वतन्त्र आवागमन रहता है।

(ङ) वित्तीय प्रबन्धन जैसे लागत निर्धारण, लागत-लाभ, सूचना सेवाओं का वित्तीय मूल्य। वित्तीय विश्लेषण के माध्यम से कार्य के प्रत्येक इकाई का मूल्य ज्ञात होता है।

लाभ :—ग्रन्थालयों में इनमें अनुप्रयोग से निम्नलिखित फायदे हो सकते हैं :—

(1) यह ग्रन्थालय के दैनिक कार्यों के सम्पादन की कुशलता बढ़ाता है।

(2) वास्तविक डेटा के विकास में सहायक है।

(3) यह ग्रन्थालय के कर्मचारी प्रबन्धन एवं वित्तीय प्रशासन के एक उपयोगी उपकरण के रूप में कार्य करता है।

(4) ग्रन्थालय कर्मचारियों को प्रोन्नति के सुअवसर प्राप्त होते हैं। उनके वेतन या पद निर्धारण में एक वैज्ञानिक आधार प्राप्त होता है।

(5) वैज्ञानिक आधार पर ग्रन्थालय के नियोजन एवं नियंत्रण से सभी कार्य सुनियोजित ढंग से सम्पादित हो जाते हैं।

(6) सभी कार्यों, विधियों एवं उपकरणों का मानकीकरण हो जाता है जिससे ग्रन्थालय कार्य एवं पाठक सेवा दोनों में सुविधा प्राप्त होती है।

उपयोगिता एवं महत्व :

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में वैज्ञानिक अथवा तार्किक अभिगम का उपयोग बहुत महत्व रखता है। यह अनेक बिन्दुओं पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका पाठक एवं कर्मचारी दोनों के लिए समान महत्व है जिसका विवरण निम्नवत है :—

(क) वैज्ञानिक विधियों एवं उपकरणों द्वारा पाठक को उत्तम सेवा प्रदान की जाती है।

(ख) कम्प्यूटरों के अनुप्रयोग से प्रबन्धन एवं लाभार्थी दोनों का समय बचता है।

(ग) ग्रन्थालय में कार्यरत कर्मचारियों की दक्षता एवं क्षमता में वृद्धि होती है जिससे वे पूर्व की अपेक्षा अधिक कार्य सम्पादित कर सकते हैं।

(घ) कर्मचारियों के श्रम का सदुपयोग हो, उसके लिए कर्मचारियों के पुनर्गठन का तार्किक आधार प्रदान करता है।

(ङ) इसमें उचित लागत लेखा प्रणाली अपनाने पर बल दिया जाता है जो लागत पर आवश्यक नियंत्रण रखने में सहायक है।

(च) ग्रन्थालय के अच्छे एवं कर्मठ कर्मचारियों के लिए वैज्ञानिक प्रबन्धन विशेष उपयोगी है। कार्य-विश्लेषण द्वारा अच्छे कर्मचारियों के प्रोन्नति एवं पुरस्कार के उचित आधार प्राप्त होते हैं।

1.4 उद्देश्यपूर्ण प्रबन्धन (Management By Objectives)

प्रबन्धन का अर्थ संगठन या संस्था के क्रियाकलापों को निपुणता के साथ संचालित करना, नियंत्रित करना एवं निर्देशित करने से होता है। प्रबन्धक का कार्य संगठन के विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए दूसरों के प्रयत्नों को नियोजित एवं निर्देशित करता है। प्रबन्धन से जुड़े विशेषज्ञों ने अन्य व्यक्तियों से कार्य सम्पादित करा लेने के लिए अनेक विकासशील धारणाओं एवं युक्तियों का विकास किया है। इन धारणाओं अथवा युक्तियों में निम्न उल्लेखनीय है :—

(1) सम्प्रेषण द्वारा प्रबन्धन

(2) प्रणाली द्वारा प्रबन्धन

(3) परिणाम द्वारा प्रबन्धन

(4) सहभागिता द्वारा प्रबन्धन

(5) अभिप्रेरणा द्वारा प्रबन्धन

(6) अपवाद द्वारा प्रबन्धन

(7) उद्देश्यों द्वारा प्रबन्धन।

उपरोक्त वर्णित प्रबन्धन युक्तियों अथवा धारणाओं में उद्देश्यात्मक प्रबन्धन प्रमुख एवं महत्वपूर्ण है। यह अत्यन्त लोकप्रिय प्रबन्धन पद्धति है। इसे संक्षेप में एम0बी0ओ0 के नाम से जाना जाता है। हैण्डरसन के अनुसार – "उद्देश्यात्मक प्रबन्धन वह प्रबन्धकीय व्यवहार है जो विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति पर बल देता है।"

उद्देश्योन्मुखी प्रबन्धन अथ अर्थात् उद्देश्यों द्वारा प्रबन्धन एक उद्देश्योन्मुखी पद्धति है। इस पद्धति में संगठन के लक्ष्यों का निर्धारण करके उनके आधार पर प्रबन्धन कार्य किया जाता है। इस प्रक्रिया में किसी भी स्तर का प्रबन्धक अपने निकटतम वरिष्ठ प्रबन्धक के साथ विचार-विमर्श कर कुछ लक्ष्य या उद्देश्य निर्धारित कर लेते हैं। तात्पर्य है कि किसी विशिष्ट अवधि के लिए कोई लक्ष्य निर्धारित करते हैं जिन्हें प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। ये लक्ष्य संगठन के समग्र लक्ष्य के अनुरूप होते हैं।

उद्देश्य :

उद्देश्यानुसार प्रबन्धन के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं :–

(क) संगठन के उद्देश्य स्पष्ट रहते हैं एवं सभी को ज्ञात होते हैं,

(ख) उद्देश्यों का निर्धारण कर परिणाम प्राप्त किया जाता है,

(ग) संगठन एवं व्यक्तियों के समन्वय द्वारा एक ही दिशा में अग्रसरण,

(घ) कार्य निष्पादन का मूल्यांकन,

(ङ) प्रबन्धक की प्रेरणा में अभिवृद्धि,

(च) संगठन के प्रत्येक व्यक्ति को लक्ष्यों का ज्ञान कराकर उनकी प्राप्ति हेतु सतत प्रयास,

(छ) संगठन के उद्देश्यों की एक निश्चित अन्तराल पर समीक्षा करना एवं आवश्यकतानुसार संशोधन करना,

(ज) प्राप्त लक्ष्यों की अधिसूचना।

विकास के चरण :

उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के विकास में निम्न चरण सम्मिलित किये जा सकते हैं :–

(1) संगठन के सामान्य उद्देश्यों का निर्धारण ,

(2) लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संगठनात्मक ढाँचे में उपयुक्त परिवर्तन करना,

(3) वरिष्ठ अधिकारी अपने अधीनस्थों के लिए लक्ष्यों का निर्धारण करते हैं, कनिष्ठ प्रबन्धक भी लक्ष्य प्रस्तुत करते हैं एवं उन क्षेत्रों का चयन करते हैं जिसमें वे प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं,

(4) वरिष्ठ अधिकारी अपने अधीनस्थ द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव पर विचार-विमर्श कर संयुक्त रूप से लक्ष्यों का निर्धारण करते हैं,

(5) वर्तमान में चल रहे कार्यों से लक्ष्य के रूप में सम्पादित किये जाने वाले कार्यों की तुलना करते हैं एवं आवश्यकतानुसार लक्ष्यों में संशोधन करते हैं,

RIL-091

(6) योजना के अन्तर्गत पूर्व निर्धारित समय पर सभी अधीनस्थों के कार्य सम्पादन की समीक्षा उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के सन्दर्भ में की जाती है,

(7) निर्धारित उद्देश्यों के सन्दर्भ में सम्पूर्ण संगठन की उपलब्धियों की समीक्षा की जाती है, विसंगति पाये जाने पर सम्पूर्ण प्रक्रिया की प्रथम चरण से समीक्षा की जाती है।

1.4.1 विशेषताएं

उद्देश्य के द्वारा प्रबन्धन में निम्नलिखित विशेषताएं दृष्टिगोचर होती हैं :—

(i) **वांछित उद्देश्य :—** उद्देश्यानुसार प्रबन्धन में संगठन के प्रत्येक स्तर पर उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है एवं उनमें आपस में पदनुक्रम विकसित किया जाता है।

(ii) **उद्देश्यों के निर्धारण में सामूहिक भावना :—** वरिष्ठ अधिकारी अपने अधीनस्थों के साथ विचार-विमर्श कर उद्देश्यों का निर्धारण करते हैं।

(iii) **निश्चित अवधि :—** संगठन के लिए लक्ष्य के निर्धारण में नियत अवधि का महत्वपूर्ण स्थान है। लक्ष्य के निर्धारण में नियत अवधि भी निर्धारित कर दी जाती है।

(iv) **अधिकारियों का हस्तानान्तरण :—** वरिष्ठ अधिकारी अपने अधीनस्थों को सुविधा की दृष्टि से एक सीमा तक निर्णय का अधिकार देते हैं।

(v) **उद्देश्यों का मूल्यांकन :—** उद्देश्यानुसार प्रबन्धन में समय-समय पर प्रगति की समीक्षा की जाती है एवं आवश्यकता व अनुभव के आधार उनमें आवश्यक संशोधन भी किया जाता है।

(vi) **नियन्त्रण व्यवस्था :—** कार्य प्रगति में होने पर यह देखना या जाँच करना आवश्यक होता है कि निर्धारित विधियों एवं परिणामों के अनुसार ही कार्य हो रहा है अथवा नहीं।

(vii) **उपलब्धियों का प्रसार :—** व्यक्तिगत कर्मचारियों एवं संगठन के विभिन्न विभागों द्वारा प्राप्त उपलब्धियों को प्रसारित किया जाता है ताकि सभी को इनकी जानकारी मिल सके।

(viii) **प्रशिक्षण की व्यवस्था :—** संगठन के सभी स्तरों पर वांछित प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है जिससे लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

लाभ :

उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के निम्नलिखित लाभ हैं :—

(क) कुशल निष्पादन एवं उत्तम परिणाम,

(ख) प्रबन्धकों को कम व्यय पर कुशल प्रबन्धन प्रशिक्षण,

(ग) सामूहिक भावना का विकास,

(घ) प्रबन्धन नियंत्रण एवं प्रबन्धन कार्य मानक के सुधार,

(ङ) कर्मचारियों के चारित्रिक एवं उद्देश्यात्मक भाव का विकास,

(च) उच्च कार्य क्षमता एवं कौशल वाले कर्मचारियों की पहचान में सुविधा। उचित पदोन्नति एवं पुरस्कार के अवसरों में वृद्धि,

(छ) निर्णय लेने में सुधार एवं सरलता,

(ज) व्यक्तिगत योगदान के सुअवसर एवं अधिक उत्तरदायित्व वहन करने की योग्यता का

विकास,

(झ) प्रभावी संगठन एवं संचालन,

(ञ) उन्नत परिणाम में आ रही बाधाओं की पहचान में सरलता एवं उनके समाधान की संशोधित योजना विकसित करने की सुविधा।

उपरोक्त विवरणों से यह स्पष्ट है कि उद्देश्यात्मक प्रबन्धन आधुनिक समय में सर्वाधिक प्रचलित प्रबन्धन पद्धति है। जैसे हर वस्तु या कार्य के दो पक्ष होते हैं उसी प्रकार इस पद्धति के कुछ नकारात्मक पक्ष भी है। इसके अपनाने से हमें प्रबन्धन में कुछ समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है। उद्देश्यात्मक प्रबन्धन विचार एवं क्रियाविधि में कठोर होता है लेकिन प्रबन्धन में प्रायः लचीलेपन की आवश्यकता होती है। लिखित उद्देश्यों की प्रक्रिया को अपनाने से विपरीत प्रभाव पड़ने की सम्भावना बनी रहती है। यदि इसे सावधानीपूर्वक लागू न किया जाय तो यह लोगों को अलग संदेश देने लगता है।

1.5 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र और प्रबँन्धन सिद्धान्त

प्रबन्धन के विभिन्न सिद्धान्त, जिनका उल्लेख इसके पूर्व किया गया है, ग्रन्थालय प्रबन्धन को किसी न किसी रूप में निर्देशित करते हैं। प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त, वैज्ञानिक प्रबन्धन, उद्देश्यपूर्ण प्रबन्धन आदि ग्रन्थालयों को पूर्ण अथवा आंशिक रूप में प्रभावित करते हैं। वर्तमान समय में प्रबन्धन के क्षेत्र में तीव्र गति से विकास हो रहा है। ग्रन्थालय प्रबन्धन के क्षेत्र में भी नवीन प्रौद्योगिकी, तकनीक आदि का प्रयोग कर अधिकतम पाठक संतुष्टि प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के प्रबन्धन के सन्दर्भ में अन्तर वातावरण एवं उपक्रम को लेकर है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि ग्रन्थालय के सन्दर्भ में ग्रन्थालयी ही प्रबन्धक होता है, वही ग्रन्थालय के कर्मचारियों द्वारा किये गये प्रयासों का निर्देशन करके उन प्रयासों में सामन्जस्य स्थापित करके वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति करता है। अन्य संगठना उपक्रमों की ग्रन्थालय से भिन्नता इस आधार पर भी होती है कि ग्रन्थालय सामाजिक संस्था के रूप में कार्य करते हैं जिनका उद्देश्य जन सेवा होता है, धन कमाना नहीं। जबकि अधिकतर संगठन या उपक्रम धन अर्जित करने वाले होते हैं।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र में प्रबन्धन सिद्धान्तों के अनुप्रयोग के समय लाभ न अर्जित करने वाले संगठन के रूप में इसकी विशेषताओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। ग्रन्थालय के उद्देश्य, कार्यों, सेवाओं, उत्पादों एवं उपयोक्ताओं के सर्वेक्षण से निम्न सामान्यीकरण तथ्य प्रकट होते हैं :—

(1) ग्रन्थालय एवं सूचना कार्य एक समूह गतिविधि है जिसके अपने उद्देश्य होते हैं।

(2) यह एक सामाजिक संगठन है जिसका उद्देश्य जन सेवा है।

(3) प्रणाली के विभिन्न अवयव सूचना उत्पादन, संचरण, सम्प्रेषण एवं उपयोग श्रृंखला में महत्वपूर्ण संयोजक का निर्माण करते हैं,

(4) इनमें कार्यों में प्रायः भिन्नता दिखती है। एक संगठन से दूसरे संगठन अथवा देश से दूसरे देश में भिन्नता हो सकती है,

(5) उद्देश्यों, कार्यों, उपयोक्ताओं की भिन्नता प्रबन्धन प्रणाली को काफी प्रभावित करती है,

(6) किसी विशेष ग्रन्थालय प्रणाली के अन्तर्गत भी उपयोग एवं उपयोगकर्ता, विषय एवं सूचना स्वरूप के आधार पर उपश्रेणियाँ हो सकती है।

उपरोक्त विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र में उद्देश्यात्मक प्रबन्धन, क्रियात्मक अभिगम एवं वैज्ञानिक प्रबन्धन का अनुप्रयोग किया जा सकता है। इनमें से नियोजन, संगठन, कर्मचारी-व्यवस्था, निर्देशन एवं नियन्त्रण सिद्धान्त काफी व्यावहारिक है। इन सिद्धान्तों का ग्रन्थालय प्रबन्धन में उपयोग किया जा सकता है। उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के अनुपालन में निम्न परिणाम प्राप्त होते हैं :

RIL-091

(क) कर्मचारियों की कार्य क्षमता को उद्देश्योन्मुखी बनाकर विकसित किया जाता है,

(ख) उद्देश्यों के निर्धारण द्वारा अधिकतम पाठक सन्तुष्टि प्राप्त की जाती है,

(ग) ग्रन्थालय के अलग–अलग कर्मचारी के उद्देश्य का संस्था के मौलिक लक्ष्यों के साथ समन्वय किया जाता है,

(घ) ग्रन्थालय द्वारा प्राप्त उपलब्धियों की जानकारी सभी को दी जाती है,

(ङ) लक्ष्य के प्ररिप्रेक्ष्य में कार्य निष्पादन का मूल्यांकन किया जाता हैं,

(च) ग्रन्थालय कार्य एक समूह गतिविधि है, उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के अन्तर्गत ग्रन्थालयी, उप ग्रन्थालयी, सहायक ग्रन्थालय सामूहिक रूप से सामान्य उद्देश्यों का निर्धारण करते हैं।

ग्रन्थाजय एवं सूचना केन्द्र के प्रबन्धन में वैज्ञानिक अभिगम की चर्चा वैज्ञानिक प्रबन्धन के साथ की गयी है। इसमें सन्देह नहीं कि अधिकतम ग्रन्थालय वैज्ञानिक आधार पर तथ्यों को विश्लेषित कर समस्या के समाधान के लिए सर्वोत्तम विकल्प का चयन करने को प्राथमिकता दे रहे हैं। वैज्ञानिक प्रबन्धन ग्रन्थालय कर्मचारियों को पदोन्नति एवं उचच वेतनमान की वकालत करता है जिससे उनकी कार्यक्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि दृष्टिगोचर होती है।

विभिन्न प्रबन्धन अभिगमों एवं प्रणालियों के ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में अनुप्रयोग के प्रभाव सम्बन्धी कोई विधिवत अध्ययन नहीं किया गया है। यद्यपि एवान्स ने प्रबन्धन सिद्धान्तों के स्कूल्स के विकास के समान्तर ग्रन्थालय प्रबन्धन के विकास का प्रयत्न किया है। उनके अनुसार व्यवसायिक उपक्रमों एवं ग्रन्थालयों के प्रबन्धन में कोई विशेष भिन्नता नहीं है, इनमें भिन्नता केवल सिद्धान्तों के प्रयोग के समय को लेकर है। ग्रन्थालयों में प्रबन्धन सिद्धान्तों का अनुप्रयोग बहुत देर से प्रारम्भ हुआ। इन्होंने पूरी अवधि को ग्रन्थालय में सिद्धान्तों के सन्दर्भ में तीन भागों में विभाजित किया है–

- 1937 के पूर्व
- 1937–1955, वैज्ञानिक
- 1955 से आगे, मानव सम्बन्ध

1937 से पूर्व वाली अवधि में ग्रन्थालयी परम्परागत तरीके के प्रबन्धन करते थे। उस अवधि में ग्रन्थालय प्रबन्धन के क्षेत्र में बहुत कम ही परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। उसके बाद की अवधि में ग्रन्थालयों में संग्रह एवं कर्मचारी एवं बजट में वृद्धि के फलस्वरूप विभिन्न प्रबन्धन प्रणालियों, जैसे वैज्ञानिक प्रबन्धन का प्रयोग किया जाने लगा। इस अवधि में लागत निर्धारण के साथ मशीनीकृत उपकरणों एवं सूचीकरण का उपयोग सामान्य हो गया। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान विकसित क्रियात्मक शोध तकनीकों एवं वैज्ञानिक प्रबन्धन के प्रक्रियाओं का प्रयोग आरम्भ हुआ। 1955 के बाद की अवधि में आधुनिक प्रबन्धन सिद्धान्तों का अनुप्रयोग ग्रन्थालयों में प्रारम्भ हो गया। इसके प्रबन्धन में कर्मचारी की समान भागीदारी स्वीकार की गयी।

1.6 निष्कर्ष

प्रबन्धन का मूल संगठन के विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए दूसरों के प्रयत्नों को नियोजित करने एवं सफलतापूर्वक क्रियान्वित करा लेने में निहित है। कार्य सम्पादित करा लेने के लिए अनेक धारणाएं एवं युक्तियाँ विकसित की गयी हैं। प्रबन्धन इन अनेक अभिगमों में वैज्ञानिक प्रबन्धन, उद्देश्यों द्वारा प्रबन्धन, प्रणाली द्वारा प्रबन्धन, परिणाम द्वारा प्रबन्धन आदि महत्वपूर्ण हैं।

वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्त ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में कार्यों के सफलतापूर्वक सम्पादन के लिए समीचीन एवं उपयोगी है। तीव्र गति से किये जाने एवं पूनरावर्तक स्वरूप वाले कार्यों के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वित्तीय प्रबन्धन में कुशलता प्राप्त करने के लिए यह सर्वोत्तम है।

इकाई 2 : प्रणाली विश्लेषण एवं अभिकल्पन

SYSTEM ANALYSIS AND DESIGN

संरचना :

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 प्रणाली

- 2.2.1 परिभाषा
- 2.2.2 ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली

2.3 प्रणाली विश्लेषण

- 2.3.1 प्रणाली विश्लेषण के चरण
- 2.3.2 फ्लो चार्टिंग
- 2.3.3 मूल्यांकन

2.4 प्रणाली अभिकल्पन

2.5 निष्कर्ष

2.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई का उद्देश्य आपको :–

- प्रणाली, प्रणाली विश्लेषण एवं अभिकल्पन को समझने,
- विश्लेषण एवं अभिकल्पन में निहित मूलभूत सिद्धान्तों की पहचान करने एवं
- इस प्रक्रिया में प्रयुक्त तकनीक एवं चरणों को समझने में सक्षम बनाना है।

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

आज के युग में सूचना प्रणाली का बहुत ही महत्व है। प्रबन्ध सूचना प्रणाली किसी भी संस्था में अच्छे एवं लाभकारी निर्णय लेने में सहायक होती है। किसी भी संगठन में समंकों एवं सूचनाओं का विशेष महत्व होता है। समंकों को संस्था के निम्न स्तरों पर प्रविधि द्वारा सूचना में परिवर्तित करने के बाद निर्णयकर्ता को उपलब्ध कराया जाता है ताकि वह संस्था सम्बन्धित नीतिगत निर्णयों को उचित समय ले सकें।

प्रणाली विश्लेषण एवं अभिकल्पन एक साथ मिलकर एक मिश्रित विचार बनते हैं, जिसमें अभिकल्पन पक्ष के लिए प्रारम्भिक बिन्दु बन जाता है। जो कुछ प्रथम पक्ष अर्थात् विश्लेषण में निर्धारित किया जाता है,उसकी वैधता जाँच अभिकल्पन में की जाती है।

2.2 प्रणाली

प्रणाली विश्लेषण एवं अभिकल्पन को समझने के लिए प्रणाली का तात्पर्य समझना आवश्यक है। प्रणाली को अलग–अलग लोगों ने अपने ढंग से परिभाषित किया है, लेकिन उन सभी में कुछ मूलभूत विशेषताएं सम्मिलित हैं। सामान्यतया किसी समान उद्देश्य के लिए एक साथ सम्मिलित रूप से कार्य कर रहे अवयवों, वस्तुओं अथवा हिस्सों के समूह को प्रणाली के रूप में जाना जाता है।

जी0जे0 नारायन ने अपनी पुस्तक "ग्रन्थालय एवं सूचना प्रबन्धन" (1991) में प्रणाली की विस्तृत व्याख्या की है। इनके अनुसार एक प्रणाली विभिन्न सत्वों, जैसे मानव, मशीन, सामग्री का एक समन्वित समूह है, जो किसी विशेष उद्देश्य से एक कार्य सम्बन्ध में बंधकर समन्वित रूप से एक प्रणाली का निर्माण करते हैं। वे आपस में इस तरह समन्वित हो जाते हैं कि एक तत्त्व के कार्य में परिवर्तन दूसरे की कार्य क्षमता को प्रभावित करता है। इस तरह समग्र रूप में पूरे प्रणाली की कार्य क्षमता प्रभावित हो जाती है।

किसी ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली में भी अनेक तत्त्व सम्मिलित होते हैं जो एक साथ मिलकर उसके उद्देश्य को पूरा करने के लिए कार्य करते हैं। उदाहरण के तौर पर ग्रन्थालय की सभी गतिविधियाँ जैसे अधिग्रहण, सूचना संग्रह एवं पुनर्प्राप्ति, परिचालन, सामयिकी नियन्त्रण, उपयोगकर्ता सेवा एवं प्रशासनिक एवं नियोजन, कार्यों का एक संगठित समूह है जो एक दूसरे पर आश्रित है क्योंकि उनके उद्देश्य समान हैं। ग्रन्थालय एवं सूचना सेवा सामान्य लक्ष्य है जो सभी को प्रणाली में बाँधे रखता है। ग्रन्थालय प्रणाली की सभी गतिविधियाँ, अधिग्रहण से लेकर प्रबन्धन, उप-प्रणालियाँ हैं।

2.2.1 ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली

ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली में अनेक उप प्रणालियाँ सम्मिलित होती हैं। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र की महत्वपूर्ण गतिविधियाँ हैं :– अधिग्रहण, सूचीकरण, सामयिकी नियन्त्रण, आदान-प्रदान,सूचना संग्रह एवं पुनर्प्राप्ति, प्रशासन एवं नियोजन आदि। इन सभी क्रियाकलापों को ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली का अंग माना जाता है। यह सभी उप-प्रणालियाँ अथवा अंग ग्रन्थालय में मूलभूत उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में एक साथ मिलकर कार्य करते हैं। ग्रन्थालय एवं सूचना सेवा प्रदान करना इनका सामान्य उद्देश्य होता है। यह समान उद्देश्य इन्हें एक साथ बांधे रखता है। ये उप प्रणालियाँ अलग-अलग होते हुए भी एक दूसरे पर आश्रित तथा आपस में सम्बन्धित होती हैं।

हेज एवं बेकर (Hays and Becker) ने ग्रन्थालय प्रणाली का निर्माण करने वाले सात उप-प्रणालियों, जैसे अधिग्रहण, सामयिकी नियंत्रण, परिचालन नियंत्रण, सूचीकरण, अन्तर्ग्रन्थालय ऋण, सन्दर्भ एवं प्रशासन तथा नियोजन की पहचान की है। चैपमैन (Chapman) एवं अन्य उपर्युक्त से सहमत होते हैं लेकिन अन्तर्ग्रन्थालय ऋण को परिचालन नियंत्रण अथवा सन्दर्भ उप-प्रणाली का एक अंग समझते हैं। इस तरह ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली में निहित उप-प्रणालियाँ इसके अंग के रूप में सम्मिलित ढंग से कार्य करते हुए प्रणाली के मूल उद्देश्य–ग्रन्थालय एवं सूचना सेवा को सम्पन्न करती है। सभी उप-प्रणालियों का अन्तिम लक्ष्य सूचना सेवा प्रदान करना होता है। ये कार्य रूप में इस तरह संलग्न तथा एक दूसरे पर आश्रित होती हैं कि एक के कार्य में परिवर्तन दूसरे को प्रभावित कर देता है। उदाहरणार्थ यदि अधिग्रहण उप-प्रणाली के कार्य में परिवर्तन किया जाता है तो उपयोक्ता सेवा उप-प्रणाली की कार्य क्षमता प्रभावित हो जाती है। इसी तरह सूचीकरण अथवा सूचना संग्रह एवं पुनर्प्राप्ति के कार्य में परिवर्तन करने से उपयोक्ता सेवा उप प्रणाली पर प्रभाव दृष्टिगोचर होता है जो पूरी प्रणाली को प्रभावित करता है।

2.3 प्रणाली विश्लेषण

प्रणाली का तात्पर्य समझने के पश्चात् प्रणाली विश्लेषण को समझना सरल हो जाता है। हेराल्ड बोर्को (Harold Borko) ने प्रणाली विश्लेषण को परिभाषित करते हुए कहा है कि प्रणाली विश्लेषण एक जटिल प्रक्रिया अथवा संगठन के परीक्षण की एक औपचारिक प्रक्रिया है, जो इसे, इसके घटकों तक सीमित कर देता है एवं इन भागों को एक दूसरे एवं मुख्य इकाई से समग्र रूप में सम्बन्धित कर देता है।

प्रणाली अभिकल्पन के लिए इसका विश्लेषण आवश्यक होता है। विश्लेषण का कार्य तब शुरू किया जाता है जब प्रणाली को प्रभावी बनाने की आवश्यकता होती है। प्रणाली को इसके घटक भागों तक सीमित करना ही प्रणाली विश्लेषण का आरम्भ होता है। इसके विभिन्न भागों को एक दूसरे से सम्बन्धित कर देना एवं समग्र रूप से इकाई से सम्बद्ध कर देना विश्लेषण की पूर्णता मानी जाती है। यदि आपको ग्रन्थालय को कम्प्यूटरीकृत करना है तो एक नयी प्रणाली की अभिकल्पना आवश्यक हो जायेगी, स्वाभाविक है कि सर्वप्रथम विश्लेषण का कार्य करना होगा जिससे अभिकल्पन किया जा सके। प्रणाली को उप प्रणालियों में, उप-प्रणाली को इसके घटकों में सीमित कर दिया जाता है।

RIL-091

किसी उप-प्रणाली में एक दूसरे से सम्बन्धित अनेक कार्य सम्पन्न किये जाते हैं एवं इसके विभिन्न घटक विभिन्न प्रकार के कार्य करते हैं।

2.3.1 प्रणाली विश्लेषण के चरण

प्रणाली विश्लेषण की प्रक्रिया दो दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है :–

(क) समस्या समाधान की दृष्टि से

(ख) नयी प्रणाली के विकास की दृष्टि से

समस्या समाधान को केन्द्र में रखते हुए प्रणाली विश्लेषण के छः चरणों को निर्धारित किया जा सकता है :–

(i) समस्या की परिभाषा तथा निरूपण

(ii) वैकल्पिक समाधान का विकास

(iii) माडल का विकास

(iv) वैकल्पिक समाधान में लागत/प्रभावोत्पादकता का निर्धारण

(v) संस्तुतियों की प्रस्तुति

(vi) चयनित समाधानों का लागू किया जाना।

इन छः चरणों को निम्नवत प्रस्तुत किया जा सकता है :–

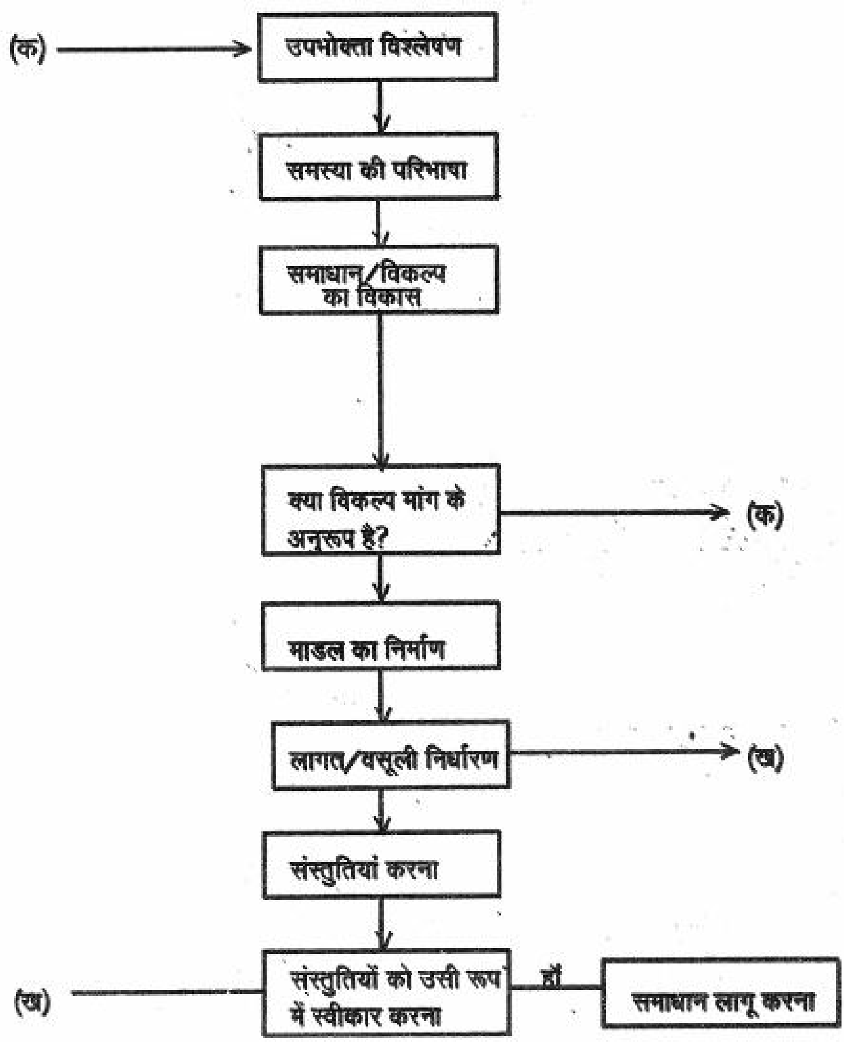

सामान्यतया समस्या समाधान की तुलना में नयी प्रणाली के विकास में प्रयुक्त प्रणाली विश्लेषण में

अधिक समस्या वांछित होती है। प्रणाली के विकास के क्रम में प्रतिपादित गतिविधियों को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है :

(1) प्रणाली विश्लेषण

(2) प्रणाली अभिकल्पन

(3) प्रणाली का लागू किया जाना।

उपर्युक्त तीन भागों में प्रतिपादित क्रियाकलाप समस्या समाधान से जुड़े छः चरणों से बहुत साम्य रखते हैं। दोनों से सम्बन्धित क्रियाकलापों को तालिका रूप में निम्न ढंग से प्रदर्शित किया जा सकता है :–

प्रणाली विकास के पक्ष	समस्या समाधान के चरण
प्रथम पक्ष : प्रणाली विश्लेषण	प्रथम चरण : समस्या की परिभाषा
द्वितीय पक्ष : प्रणाली अभिकल्पन	द्वितीय चरण : विकल्प अभिकल्पन का विकास
	तृतीय चरण : माडल का निर्माण
	चतुर्थ चरण : अभिकल्पन की लागत/वसूली का निर्धारण
	पाँचवा चरण : संस्तुतियाँ करना
तृतीय पक्ष : प्रणाली का लागू किया जाना	छठा चरण : समाधान को लागू करना

यह स्पष्ट है कि किसी सूचना प्रणाली का जीवन वृत्त तीन चरणों में पूरा होता है। इन तीनों चरणों में अलग–अलग क्रियाकलाप सम्पन्न होते हैं। पूरी प्रणाली के संशोधित एवं परिवर्तित होने तक यह प्रक्रिया चलती रहती है।

किसी प्रणाली में निहित एक उप प्रणाली की कार्य प्रणाली जटिल होती है तथा एक प्रणाली दूसरी उप प्रणाली से भिन्न होती है। किसी पुस्तकालय प्रणाली के अन्तर्गत निम्न उप प्रणालियाँ कार्य करती हैं।

1. अधिग्रहण उप प्रणाली
2. सूचीकरण उप प्रणाली
3. सामयिकी नियंत्रण उप प्रणाली
4. परिचालन नियंत्रण उप प्रणाली
5. सूचना पुनर्प्राप्ति उप प्रणाली

उदाहरण के लिये यदि हम अधिग्रहण उप प्रणाली को लेते हैं तो हम पाते हैं कि इसके अन्तर्गत विभिन्न क्रियाकलाप सम्पन्न होते हैं। अधिग्रहण उप प्रणाली के विभिन्न क्रियाकलाप निम्नवत हो सकते हैं:

(क) खोज	1. पुस्तकालय सूची 2. आदेशित प्रलेखों की फाइल 3. यदि हाँ, प्रतिवेदन 4. यदि नहीं, आगे बढ़ते हैं
(ख) लेखाकरण	5. बजट परीक्षण 6. यदि नहीं, प्रतिवेदन 7. यदि हाँ, खर्च लेखा विवरण का नवीनीकरण
(ग) आदेश	8. संस्करण
(घ) परीक्षण एवं प्राप्ति	9. आदेश के विरुद्ध परीक्षण 10. असन्तुष्ट होने पर वापस 11. सन्तुष्ट होने पर परिग्रहण एवं भुगतान प्रक्रिया

अधिग्रहण उप प्रणाली के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि इसमें चार प्रकार के क्रियाकलाप : खोज, लेखाकरण, आदेश तथा परीक्षण एवं प्राप्ति सम्मिलित हैं। इस चार चरण के कार्य में 11 तत्त्व सम्मिलित हैं। इन तत्त्वों को उनकी प्रकृति के अनुसार निम्न ढंग से समूहीकृत किया जा सकता है :–

- पुस्तकालय सूची
- आदेशित प्रलेखों की फाइल
- बजट परीक्षण
- आदेशानुसार परीक्षण

→ कार्य (functions)

- संस्करण

→ निर्णय (decision)

- आदेशित होने पर प्रतिवेदन
- आदेशित न होने पर तत्सम्बन्धी कार्य
- बजट न होने पर प्रतिवेदन तैयार करना
- बजट होने पर नवीनीकरण
- असन्तुष्ट होने पर वापसी
- सन्तुष्टि होने पर परिग्रहण आदि

→ क्रियाएं (actions)

अधिग्रहण से सम्बन्धित प्रणाली विश्लेषण प्रक्रिया को रेखाचित्र के माध्यम से निम्नवत प्रस्तुत किया जा सकता है :–

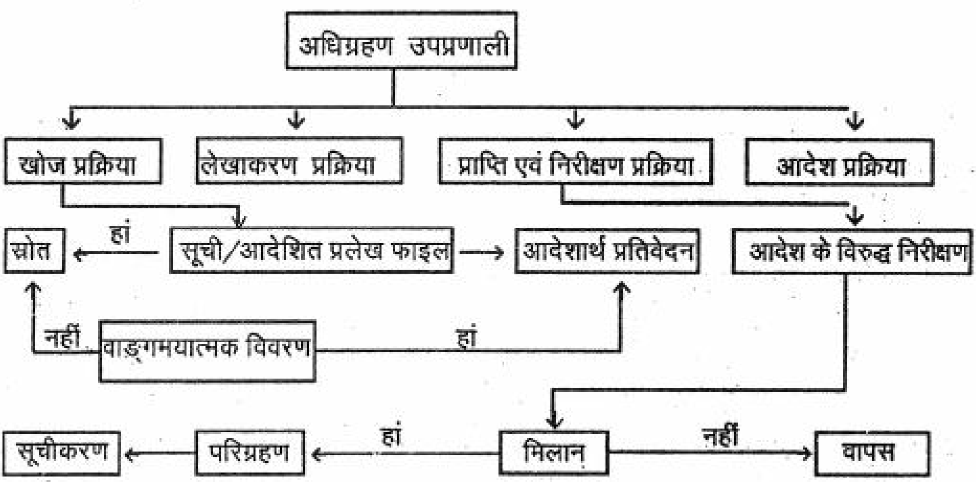

उपर्युक्त चार्ट में अधिग्रहण उप प्रणाली के अन्तर्गत सम्पन्न होने वाली विभिन्न गतिविधियाँ प्रदर्शित हैं। खोज प्रक्रिया के अन्तर्गत विभिन्न क्रियाएं, खोज प्रारम्भ करने से लेकर आदेश देने तक चरणबद्ध रूप में प्रदर्शित हैं। इसी तरह प्राप्ति एवं परीक्षण में निहित विभिन्न उप क्रियाएं आदेश पत्रक फाइल से मिलान एवं परिग्रहण तक पूरा विश्लेषण दिखाई देता है। इसमें अधिग्रहण एवं सूचीकरण उप प्रणालियों के मध्य सम्बन्ध भी प्रदर्शित है।

इसी तरह लेखाकरण चरण के अन्तर्गत सम्पन्न होने वाली क्रियाओं को भी विश्लेषित किया जा सकता है। यह स्पष्ट है कि प्रत्येक उप प्रणाली से सम्बद्ध प्रत्येक प्रक्रिया को विश्लेषित किया जाता है। नयी प्रणाली के अभिकल्पन में वर्तमान प्रणाली को उसके विभिन्न प्रणालियों तथा प्रत्येक उप प्रणाली को उसकी विभिन्न प्रक्रियाओं एवं प्रत्येक प्रक्रिया को सम्मिलित विभिन्न कार्यों में विश्लेषित किया जाता है। इस तरह के विश्लेषण द्वारा ही विभिन्न कार्यों, प्रक्रियाओं एवं उप प्रणालियों को मुख्य प्रणाली से सम्बद्ध करना सम्भव हो पाता है। प्रणाली विश्लेषक फ्लोचार्ट की श्रृखला तैयार

करता है जिसमें प्रणाली के अवयवों के मध्य अन्तर्क्रियाओं को सामूहिक रूप से दर्शाया जाता है। प्रणाली विश्लेषक का कार्य है सम्बन्धित डेटा, गतिविधियों, प्रक्रियाओं तथा तकनीकों का इस उद्देश्य के लिए अध्ययन, परीक्षण तथा विश्लेषण, ताकि एक प्रभावी एवं उपयोगी प्रणाली का विकास किया जा सके।

2.3.2 फ्लो चार्ट बनाना

फ्लो चार्ट बनाने का अर्थ है ग्रन्थालय प्रणाली तथा उप प्रणालियों के प्रत्येक क्षेत्र से सम्बन्धित प्रत्येक प्रक्रिया, क्रियाकलाप एवं उनके आगे बढ़ने की दिशा की चित्रात्मक रूप में प्रस्तुति। यह कार्य समस्या के विवरण, उद्देश्यों के निर्धारण एवं डेटा संकलन के बाद किया जाता है। सामान्यतया किसी समस्या के समाधान अथवा नई प्रणाली के विकास के लिए आवश्यक चरणों को तार्किक क्रम में चित्र के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। चित्रात्मक प्रस्तुतिकरण के लिए विभिन्न आकार के आयतों के अन्तर्गत क्रियाओं को दर्शाया जाता है। फ्लो चार्ट में विभिन्न क्रियाओं के आगे बढ़ने की दिशा को प्रदर्शित करने के लिए तीर के चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। इसके निर्माण में मानक प्रतीकों का उपयोग होता है।

फ्लो चार्ट में उन प्रक्रियाओं को बेहतर ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है जिनका वर्णन करना अन्य ढंग से कठिन होता है। किसी प्रणाली के अन्तर्गत सम्पन्न की जाने वाली क्रियाओं को फ्लो चार्ट के माध्यम से बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। विभिन्न ग्रन्थालय कार्यों को फ्लो चार्ट के माध्यम से आसानी से पहचाना जा सकता है। चाहे परिचालन का लेन–देन व्यापार हो, चाहे अधिग्रहण का परीक्षण एवं आदेश देने का कार्य हो, फ्लो चार्ट में विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से इन्हें तार्किक क्रम में प्रस्तुत किया जा सकता है। यह प्रस्तुति समझने में अत्यन्त सरल होती है।

फ्लो चार्ट के निर्माण में मानक प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है जिससे उसे प्रत्येक व्यक्ति समझ सके। सभी देशों में इन प्रतीकों को समान अर्थ में समझा एवं प्रस्तुत किया जाता है। फ्लो चार्ट में प्रयुक्त होने वाले कुछ विशिष्ट प्रतीकों को निम्नवत प्रस्तुत किया जाता है :–

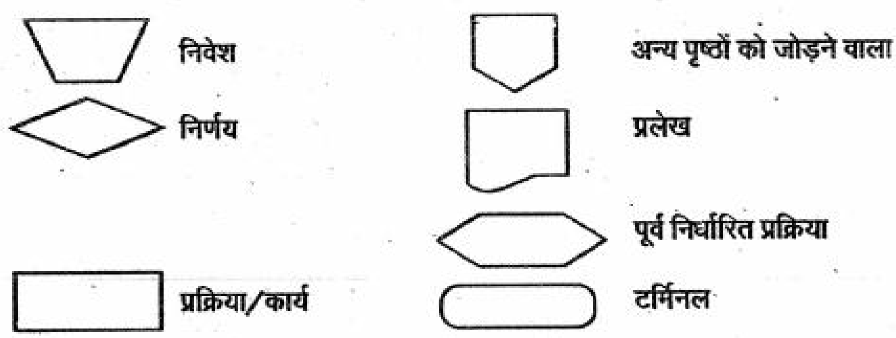

फ्लो चार्ट के निर्माण के लिए प्रचलित कुछ महत्वपूर्ण नियम निम्न हैं :–

(1) उपर्युक्त वर्णित प्रतीक फ्लो चार्ट की सार्वभौम भाषा का निर्माण करते हैं तथा इनको आवश्यक रूप में उपयोग में लाना चाहिए।

(2) प्रत्येक प्रकार के फ्लो चार्ट, चाहे कुछ भी प्रस्तुत करते हों, प्रारम्भ एवं ठहराव को इंगित करने वाले टर्मिनल का प्रयोग करना चाहिए।

(3) कार्य के आगे बढ़ने की दिशा सर्वदा एक ही दिशा में होना चाहिए। इसे या तो ऊपर से नीचे अथवा बायें से दायें दिशा में चलना चाहिए।

(4) फ्लो चार्ट में प्रयुक्त निर्णय सम्बन्धी प्रतीकों के साथ हाँ अथवा नहीं को इंगित करने वाली लाइन जुड़ी होनी चाहिए।

अधिग्रहण उप प्रणाली में सम्पन्न होने वाले कार्य को प्रतीकों के माध्यम से निम्न ढंग से प्रस्तुत किया

जा सकता है :–

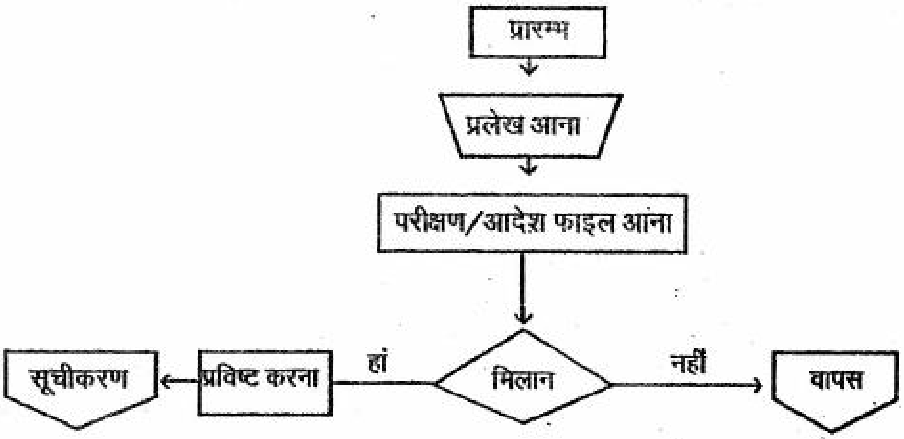

इस तरह फ्लो चार्ट किसी प्रणाली, उप प्रणाली अथवा इसकी किसी प्रक्रिया के सभी तत्त्वों की तार्किक क्रम में प्रस्तुति में अत्यन्त उपयोगी है। इनमें प्रयुक्त मानक प्रतीकों के द्वारा इन्हें सार्वभौमिक रूप में समझा एवं प्रयोग किया जाता है। ये प्रणाली की प्रक्रिया में अवरोध की पहचान करने में सहायक होते हैं।

अन्य क्षेत्रों की तरह ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में फ्लो चार्ट काफी उपयोगी हैं। ग्रन्थालयाध्यक्ष के लिए फ्लो चार्ट अत्यन्त सहायक हैं। यह ग्रन्थालयाध्यक्ष को, उसके कार्य के दौरान सम्पन्न कार्य (functions), निर्णय तथा क्रिया (actions) की पहचान करने में सहायता देता है जिसको शब्दों में वर्णित करने में उसे कठिनाई हो सकती है।

2.3.3 मूल्यांकन

प्रणाली विश्लेषण का अन्तिम बिन्दु उसका मूल्यांकन है। प्रणाली विश्लेषक के लिए प्रणाली का विश्लेषण कर उसका प्रतिवेदन तैयार करना अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इस प्रतिवेदन से उसे नयी प्रणाली का अभिकल्पन करने में सहायता मिलती है। अतः विश्लेषक के लिए यह आवश्यक होता है कि वह प्रणाली तथा उप प्रणालियों का अध्ययन एवं विश्लेषण कर उसकी एक रिपोर्ट तैयार कर लें।

यहाँ यह महत्वपूर्ण है कि प्रतिवेदन में किन–किन तथ्यों अथवा बिन्दुओं को सम्मिलित किया जाय। क्योंकि प्रतिवेदन की उपयोगिता बहुत कुछ उसमें सम्मिलित बिन्दुओं पर निर्भर करती है। चैपमैन तथा अन्य ने प्रणाली विश्लेषक के प्रतिवेदन में सम्मिलित किये जाने वाले निम्न बिन्दुओं की सूची प्रस्तुत की है :–

(1)	अग्रिम सामग्री	:	विषय तालिका आदि
(2)	ढाँचा	:	भूमिका, समस्या, उद्देश्य, क्षेत्र तथा परिणाम
(3)	विधि	:	योजना, कर्मचारी, उपकरण तथा कार्यविधि
(4)	निष्कर्ष	:	संस्तुतियाँ तथा निहितार्थ
(5)	पिछली सामग्री	:	परिशिष्ट आदि

प्रणाली विश्लेषक वर्तमान प्रणाली के विभिन्न अवयवों तथा उनकी क्रियाविधि से अच्छी तरह से परिचित हो जाने के बाद ही मूल्यांकन प्रतिवेदन तैयार करता है। प्रतिवेदन के लिए यह आवश्यक है कि प्रणाली की पूरी जानकारी हो। उसे प्रणाली से की जा रही उम्मीदों का भी ध्यान रखना पड़ता है।

यदि हम प्रणाली के रूप में पुस्तकालय एवं सूचना प्रणाली का उदहारण लेते हैं तो हम पाते हैं कि

इसमें सूचना स्रोत निवेश का कार्य करते हैं तथा वाङ्गम्मयात्मक एवं प्रलेख आपूर्ति सेवा अर्थात् पाठक सेवा परिणाम के रूप में सामने आती है।

इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रतिवेदन जैसे ग्रन्थालय को वार्षिक प्रतिवेदन, लेखा प्रतिवेदन आदि परिणाम के भाग हैं। वर्तमान निर्गत प्रारूप का अध्ययन किया जाता है तथा आवश्यकतानुसार उनमें संशोधन पर विचार किया जाता है। इन सभी पर सूचनाएं एकत्रित करने के लिए विश्लेषक वर्कशीट का उपयोग करता है।

प्रणाली के उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में उसकी वर्तमान प्रक्रियाओं का मूल्यांकन किया जाता है। विश्लेषक उद्देश्यों के अनुरूप उपयुक्त प्रक्रियाओं का परीक्षण करता है। इसी क्रम में वह उपयोगकर्ता की सूचना आवश्यकता, अधिग्रहण की विशेषताएं एवं कमियों, सूचना संग्रहण एवं पुनर्प्राप्ति प्रणाली की कार्यक्षमता, कर्मियों के कार्य सम्पादन की क्षमता, उपकरणों की उपादेयता तथा वित्तीय आवश्यकताओं का परीक्षण एवं मूल्यांकन करता है। इस तरह विश्लेषक निवेश से सम्बन्धित प्रणाली के अध्ययन कार्य को पूर्ण करता है।

मांग के परिप्रेक्ष्य में प्राप्त परिणाम से सम्बन्धित वाङ्मयात्मक सेवाओं, प्रलेख आपूर्ति तथा प्रबन्धन प्रतिवेदन आदि कार्यों के आधार पर प्रणाली में किये जाने वाले परिवर्तनों का परीक्षण एवं अध्ययन करता है, जिससे कि प्रणाली के वांछित उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके। आवश्यक होने पर वर्तमान निर्गत प्रारूपों को नये स्वरूपों से बदला जा सकता है। इसके लिए उपलब्ध मानक स्वरूपों को अपनाया जा सकता हैं।

प्रणाली के लिए कार्य विश्लेषण का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। देखा जाय तो प्रणाली मनुष्यों, मशीनों एवं पदार्थों का एक समुच्चय होता है तथा मनुष्य इसके एक महत्वपूर्ण घटक हैं। कर्मचारी ही कार्य का सम्पादन करते हैं।

कार्य विश्लेषण में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि कौन कर्मचारी क्या कार्य करता है तथा कैसे करता है? इसमें इस तथ्य का अध्ययन भी सम्मिलित होता है कि उनकी कार्य क्षमता को कैसे बढ़ाया जा सकता है तथा उनको किस तरह का प्रशिक्षण आदि आवश्यक है?

उपर्युक्त वर्णित घटकों के परीक्षण से वर्तमान प्रणाली का अध्ययन पूरा होता है। इस तरह के परीक्षण से नयी प्रणाली की आवश्यकताओं के निर्धारण में सहायता मिलती है अथवा विश्लेषक द्वारा नयी प्रणाली के विकास की रूपरेखा सम्भव हो पाती हो। इस तरह विश्लेषक प्रणाली से उद्देश्यों के अनुरूप बेहतर परिणाम प्राप्त करने के लिए योजना एवं प्रणाली अभिकल्पन प्रस्तुत करता है।

2.4 प्रणाली अभिकल्पन (System Design)

प्रणाली विश्लेषण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर प्रणाली अभिकल्पन का कार्य किया जाता है। प्रणाली का विश्लेषण इसका प्रारम्भिक बिन्दु है तो अभिकल्पन, प्रणाली विश्लेषण एवं प्रणाली के सम्पूर्ण क्रियाकलापों का अन्तिम बिन्दु है। अत्यधिक उपयोगी एवं प्रभावी विकल्प के रूप में नयी प्रणाली के निश्लेषण के रूप में मूल्यांकन प्रतिवेदन हमारे सामने आता है। उस प्रतिवेदन में वर्तमान प्रणाली के गुणों एवं कमियों से सम्बन्धित सूचनाएं सम्मिलित होती हैं साथ साथ परिवर्तनों के लिए आवश्यक सुझाव भी दिये होते हैं। इन सब आधार पर नयी प्रणाली का अभिकल्पन विकसित किया जाता है।

यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि विश्लेषण के समय एकत्रित डेटा का उपयोग अभिकल्पन में किया जाता है। जो कुछ भी तथ्य प्रणाली विश्लेषण में क्रम में निर्धारित किये जाते हैं उनका अभिकल्पन में प्रयोग कर वैधता की जाँच की जाती है।

सामान्य तथ्य (General considerations) :

सुझावों के रूप में मूल्यांकन प्रतिवेदन में सम्मिलित आवश्यक परिवर्तनों को नयी प्रणाली में लागू

करना चाहिए। ये सुझाव सुधारात्मक चरण होते हैं। इन चरणों को निम्न तीन तथ्यों के प्रकाश में लागू किया जाना चाहिए :–

- लक्ष्य
- लागत आधार
- प्रति इकाई खर्च

लक्ष्य :

परिवर्तित तथा नयी आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में प्रणाली के उद्देश्यों की समीक्षा आवश्यक हो जाती है। स्वाभाविक है कि संशोधित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रणाली में आवश्यक संशोधन किये जाय। इस तरह प्रणाली अभिकल्पन में संशोधित लक्ष्य को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है।

लागत पक्ष :

जब हम नयी प्रणाली की बात करते हैं उस समय उसमें लगने वाली लागत की बात भी ध्यान में रखनी पड़ती है। नयी प्रणाली की स्थापना में काफी लागत आती है। लागत पक्ष को दो आधारों पर देखा जाता है। पहला तो उसमें व्यय होने वाली प्रधान पूंजी दूसरा उसके प्रचालन में अनवरत आने वाला व्यय। किसी प्रणाली पर निवेशित लागत पक्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इसका आर्थिक अध्ययन आवश्यक होता है। नयी अथवा संशोधित प्रणाली की स्थापना में आर्थिक पक्ष को ध्यान में रखकर ही प्रबन्धन द्वारा उपयुक्त निर्णय लिया जाता है।

प्रति इकाई खर्च :

वर्तमान प्रणाली में प्रत्येक निर्गम (output) पर होने वाले व्यय की तुलना में संशोधित अथवा नयी प्रणाली के प्रति इकाई व्यय में मितव्ययिता के आधार पर निर्णय लिया जाना चाहिए। स्वभाविक है कि नयी प्रणाली में प्रति इकाई कम खर्च आने पर ही उसे स्थापित करने पर विचार किया जाता है। किसी प्रणाली अभिकल्पन में प्रति इकाई व्यय का मापदंड महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उदाहरण के तौर पर अमेरिकी ग्रन्थालयों में प्रति पुस्तक सूचीकरण का व्यय 15 डालर था जो (ओ सी एल सी) नेटवर्क की स्थापना के बाद कम होकर 1.5 डालर हो गया। प्रति इकाई कम व्यय आने के कारण से अधिकाधिक ग्रन्थालयों ने इसमें सम्मिलित होना आरम्भ किया।

अभिकल्पन :

यदि प्रणाली विश्लेषण में आगमों अथवा प्रतिवेदनों के अध्ययन द्वारा प्रणाली की कुल आवश्यकताओं का निर्धारण किया जाता है तो अभिकल्पन स्तर पर प्रणाली के संशोधित लक्ष्यों के संदर्भ में इन आवश्यकताओं को परखा जाता है। उद्देश्यों में परिवर्तन के साथ–साथ निवेश तथा आगम में परिवर्तन स्वाभाविक हो जाता है। इन संशोधनों का प्रणाली अभिकल्पन में प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। अभिकल्पन के चरण में संशोधित उद्देश्यों के अनुरूप नयी प्रक्रिया विकसित की जाती है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि प्रणाली के विभिन्न अवयव, जैसे उप प्रणाली एवं क्रियान्वयन अपरिवर्तित रहते हैं। सामान्यतया अभिकल्पन में निम्न चार चरण सम्मिलित होते हैं :–

प्रथम चरण :–

प्रथम चरण में प्रणाली के सभी कार्यों को पुनः नियोजित किया जाता है जिससे उनमें आपस में समन्वय स्थापित किया जा सके। इस प्रकार द्वितीयक अभिलेखों को समाप्त कर दिया जाता है एवं सम्पन्न किये जाने वाले सभी कार्यों का एक तार्किक क्रम निश्चित कर दिया जाता है। पुरानी वर्कशीट के स्थान पर नई वर्कशीट तैयार की जाती है। इसमें संशोधित लक्ष्यों के अनुरूप आवश्यक संशोधनों को सम्मिलित किया जाता है।

द्वितीय चरण :

अभिकल्पन के द्वितीय चरण में सभी प्रक्रियाओं को लिखा जाता है। इनको एक तार्किक क्रम में विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया जाता है तथा आवश्यकतानसार फ्लो चार्ट बनाकर संलग्न किये जाते

हैं। प्रत्येक प्रक्रिया में ऐसा किया जाता है। विवरण तथा फ्लो चार्ट को एक साथ मिलाकर कार्यविधिक नियमावली बनाई जाती है। इस नियमावली में प्रत्येक प्रक्रम में विवरण के साथ कार्य के आगे बढ़ने की दिशा चार्ट के माध्यम से प्रदर्शित किया जाता है।

तृतीय चरण :

प्रणाली अभिकल्पन के इस चरण में उपयुक्त कार्यविधिक नियमावली तैयार की जाती है। यह कम्प्यूटर आधारित पुस्तकालय प्रणाली का एक अभिन्न अंग है। प्रणाली को अच्छी तरह समझने के लिए यह आवश्यक है विशेषकर नियमावली से स्वचालित प्रणाली की दिशा में बढ़ने के लिए, सूचनाओं को निवेश के रूप में एकत्रित करने तथा रूपान्तरित करने में सहायता मिलती है।

चतुर्थ चरण :

यह चरण मुद्रित स्वरूप के अभिकल्पन से सम्बन्धित होता है। इसका उपयोग सूचनाओं को संग्रहित करने एवं प्रसारित करने के लिए किया जाता है। इस बात का भी ध्यान रखा जाता है कि सूचनाओं की पुनरावृत्ति न हो। मुद्रित स्वरूप के अभिकल्पन में आवश्यकताओं एवं निर्णयों को आधार बनाया जाता है।

इन स्वरूपों का इस तरह अभिकल्पन किया जाता है ताकि सूचना को विभिन्न मद के अन्तर्गत उसमें निहित तत्त्वों को तार्किक क्रम में प्रस्तुत किया जा सके। एक ही प्रारूप को अनेक किन्तु सम्बन्धित कार्यों के लिए प्रयोग किया जा सकता है। प्रारूप में बने विभिन्न आयत में पर्याप्त स्थान होना चाहिए जिससे सूचनाओं को सुविधाजनक ढंग से अंकित किया जा सके। इसके लिए बाजार में उपलब्ध बने–बनाये प्रारूप का भी उपयोग किया जा सकता है किन्तु वे प्रणाली की सूचना आवश्यकताओं के अनुरूप होने चाहिए।

पुस्तकालय प्रणाली के अभिकल्पन में यह अत्यन्त आवश्यक तथ्य है कि किसी डेटा को एक ही बार निवेशित किया जाय तथा उसका उपयोग आवश्यकतानुसार अनेक स्थलों या बिन्दुओं पर किया जा सके।

2.5 निष्कर्ष

किसी प्रणाली को उन्नत किये जाने की आवश्यकता महसूस होने पर विश्लेषण का कार्य प्रारम्भ होता है। इस तरह प्रणाली विश्लेषण इसके उद्देश्यों से प्रारम्भ होता है तथा इसमें परिवर्तनों को आवश्यकतानुसार समावेश किया जा सकता है। इसके कार्यों, निर्णयों तथा प्रक्रियाओं का परीक्षण कर अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए अन्य विकल्पों अथवा संशोधनों की पहचान की जाती है। विश्लेषण के अन्त में मूल्यांकन प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता है, जिसमें वर्तमान प्रणाली की विशेषताओं एवं कमियों से सम्बन्धित डेटा निवेशित रहता है। साथ ही प्रणाली को उपयोगी बनाने के लिए आवश्यक संशोधनों से सम्बन्धित सुझावों का समावेश रहता है। चूँकि प्रणाली का प्रत्येक कार्य एक दूसरे से सम्बन्धित एवं एक कार्य दूसरे के कार्यों पर आश्रित होता है। अतः प्रणाली के किसी एक कार्य अथबा अवयव का मूल्यांकन उपयोगी नहीं होता है। ग्रन्थालय प्रणाली एक दूसरे पर आश्रित एवं एक दूसरे से सम्बन्धित उप प्रणालियों की एक ऐसी ही प्रणाली है अतः इसका मूल्यांकन समग्र रूप में किया जाना चाहिए।

प्रणाली विश्लेषण के आधार पर ही प्रणाली अभिकल्पन का कार्य होता है। यह नयी प्रणाली के विकास का द्वितीय एवं एक अत्यन्त महत्वपूर्ण चरण है जिसमें नयी प्रणाली की रूपरेखा प्रस्तुत की जाती है। विश्लेषण के समय एकत्रित डेटा एवं सूचनाओं का इसमें उपयोग किया जाता है। प्रणाली विश्लेषण में जो निर्धारित किया जाता है उसी का परीक्षण अभिकल्पन में किया जाता है। इसमें वैकल्पिक विधियों के विकास में एवं नियमावली तैयार करने में वर्क–शीट तथा फ्लो चार्ट की तकनीक का उपयोग होता है। प्रणाली अभिकल्पन के साथ प्रणाली अध्ययन का कार्य पूर्ण हो जाता है।

RIL-091

इकाई 3 : परिवीक्षण एवं मूल्यांकन तकनीक
MONITORING AND EVALUATION TECHNIQUES

संरचना :

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 परिवीक्षण एवं मूल्यांकन तकनीक

3.3 संक्रियात्मक अनुसंधान

3.4 ग्रन्थ.लयों में संचालन शोध

3.5 प्रबन्धन सूचना प्रणाली (MIS)

3.6 एम0आई0एस0 तथा ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र

3.7 उद्देश्यात्मक प्रबन्धन तथा ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र

3.8 मूल्यांकन तकनीक

3.9 सूचना प्रणालियों एवं सेवाओं का मूल्यांकन

3.10 निष्कर्ष

3.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :–

(i) आपको विभिन्न परिवीक्षण तकनीकों का ज्ञान कराना,

(ii) परिवीक्षण एवं मूल्यांकन का तात्पर्य एवं उद्देश्य बताना,

(iii) प्रचालन शोध की आवश्यकता एवं उपयोग से अवगत कराना,

(iv) प्रबन्धन सूचना प्रणाली की प्रक्रिया एवं इसके ग्रन्थालय में उपयोग के बारे में जानकारी देना,

(v) मूल्यांकन की आवश्यकता एवं विभिन्न विधियों से अवगत कराना,

(vi) ग्रन्थालय एवं सूचना क्षेत्र में विभिन्न मूल्यांकन तकनीकों के अनुप्रयोग की जानकारी देना।

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी संगठन अथवा संस्था की सफलता में परिवीक्षण एवं मूल्यांकन का महत्वपूर्ण योगदान होता है। किसी भी नियोजन प्रक्रिया की सफलता उसके उचित परिवीक्षण पर निर्भर करती है। सूचना संगठनों में योजना के क्रियान्वयन में उचित नियंत्रण की आवश्यकता होती है। उचित परिवीक्षण

अथवा नियंत्रण द्वारा ही संचालन की कमियों को ढूंढ़ा जा सकता है एवं दूर किया जा सकता है। योजनाओं का क्रियान्वयन अपेक्षा के अनुरूप चल रहा है अथवा नहीं, इसकी समुचित देखभाल नियंत्रण द्वारा ही की जा सकती है। वृहद आकार के संगठनों एवं संस्थानों के लिए इसकी विशेष उपयोगिता है।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में प्रबन्धन सूचना प्रणाली का विचार उपयोगी हो सकता है। सूचना विस्फोट के कारण कठिनतर हो रहे सूचना प्रबन्धन में इसकी सहायता से अल्प समय में ...न सूचनाएं प्राप्त करना सम्भव है।

प्रबन्धन के कार्य में परिवीक्षण की भाँति मूल्यांकन उपयोगी है। किसी भी संगठन की सफलता उसके कार्यों के उचित मूल्यांकन द्वारा ही आँकी जाती है। अपेक्षित परिणाम प्राप्त न होने की दशा में आवश्यक परिवर्तनों के लिए मूल्यांकन अत्यन्त आवश्यक है। यह प्रबन्धन प्रक्रिया का अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष होता है। मूल्यांकन में पूरी प्रणाली के क्रियाकलापों की जाँच की जाती है, जिसमें सफलताओं एवं असफलताओं को कारणों सहित दर्शाया जाता है एवं प्रणाली के उन्नयन के लिए उपयोगी सुझाव दिये जाते हैं।

3.2 परिवीक्षण एवं मूल्यांकन तकनीक

परिवीक्षण तकनीक का नियोजन प्रक्रिया से गहरा सम्बन्ध है। किसी नियोजन प्रक्रिया को संचालित करने के लिए नियंत्रण आवश्यक है। इसे नियंत्रण प्रणाली द्वारा पुनः प्रभावी बनाया जाता है। ग्रन्थालय प्रबन्ध के क्षेत्र में नियोजन एक महत्वपूर्ण कार्य होता है। किसी भी कार्य को करने के पहले विचार–विमर्श कर एक समुचित योजना बनाना तथा उसी के अनुसार कार्य करने से सफलता की सम्भावना बढ़ जाती है।

किसी भी अन्य संस्था की तरह ग्रन्थालयों में भी कार्यों की पूर्व योजना बनाकर कार्य करना अत्यन्त उपयोगी एवं महत्वपूर्ण होता है। बिना नियोजन के कार्य करने से अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित हो सकती हैं। लेकिन नियोजन के साथ यह भी आवश्यक है कि उस प्रक्रिया पर निगाह रखी जाय। नियोजन क्या को ...ित निर्धारित नीतियों के अनुसार कार्य सम्पन्न हो रहा है अथवा नहीं तथा कहाँ–कहाँ कमियाँ हैं जिन्हें ठीक किया जाना है, इनके लिए परिवीक्षण की आवश्यकता होती है।

किसी भी संस्... लिए उसमें उद्देश्यों को परिभाषित कर देना तथा नीतियों का निर्माण करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि सुचारु रूप से कार्य के सम्पादन के लिए कार्य विधि निश्चित करना आवश्यक होता है जिससे कार्य निश्चित समय में पूरा किया जा सके। कार्य विधि निश्चित करने के बाद कार्य संचालन पर नियंत्रण रखा जाता है।

प्रत्येक प्रकार के संगठन, विशेषकर बड़े संगठनों में नियंत्रण अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है क्योंकि प्रबन्धकों को आवश्यकतानुसार उचित समय पर उपयोगी सूचनाएं एवं मार्ग दर्शन उपलब्ध रहता है। नियत नीतियों एवं सिद्धान्तों के अनुसार किसी कार्य के कार्यान्वयन की समुचित देखभाल करना ही नियंत्रण अथवा परिवीक्षण है।

परिवीक्षण तकनीक एवं नियंत्रण :

परिवीक्षण तकनीक अथवा नियंत्रण और कुछ नहीं बल्कि संगठन के लिए निर्देश होते हैं, जो संगठन को उसके उद्देश्यों के प्राप्त करने की प्रगति को इंगित करते हैं। नियंत्रण से तात्पर्य प्रबन्धन प्रक्रिया को संचालित करने के क्रम में जांच प्रमाणित करने, नियमपूर्वक प्रचालन, परीक्षण तथा सीमित कर उपयोग करने अथवा निर्देश देने से है। परिवीक्षण में दोष ढूंढ़ना एवं दोष निवारण, कार्य का सम्पादन, परामर्श एवं अनुदेश देना तथा सावधानी रखना आदि सम्मिलित होते हैं।

परिवीक्षण एवं नियंत्रण की तकनीक :

किसी भी सूचना संगठन में नियोजन एवं संचालन दो प्रमुख प्रबन्धन सम्बन्धी कार्य होते हैं लेकिन सिर्फ इनसे ही संगठन के वांछित उद्देश्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। किसी भी संगठन के लिए विकसित योजना का उपयोग परिणाम पाने की दिशा में कार्यान्वियन आवश्यक है।

परिवीक्षण तकनीक एक दिशा निर्देश, एक उपकरण अथवा एक सहायक यन्त्र है। यह तकनीक समय पर आधारित एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे आवंटित संसाधनों का लक्ष्य प्राप्ति के लिए बेहतर उपयोग सम्मिलित है। वही तकनीक सबसे अच्छी मानी जाती है जो बहुत कठोर न हो अपितु समय अथवा भविष्य की मांग के अनुसार शिथिलनीय या परिवर्तनशील हो। महत्वपूर्ण परिवीक्षण तकनीक निम्नवत है :—

(i) संक्रियात्मक अनुसंधान (OR)

(ii) प्रबन्धन सूचना प्रणाली (MIS)

(iii) उद्देश्यानुसार प्रबन्धन (MBO)

(iv) नेटवर्क विश्लेषण

(v) परिवीक्षण तकनीक के रूप में बजट निर्माण

(vi) परिवीक्षण समूह अथवा परामर्शदाता।

3.3 संक्रियात्मक अनुसंधान (OR)

इस प्रकार के शोध का विकास 1939–95 के द्वितीय विश्व युद्ध के समय सैनिक कार्यों में निर्णय के सहायतार्थ हुआ। युद्ध की समाप्ति के बाद इस शोध प्रक्रिया का उपयोग प्रबन्धन के अन्य क्षेत्रों में हुआ। औद्योगिक उत्पादन के प्रबन्धन में इसका विशेष रूप से उपयोग किया गया। आपरेशन रिसर्च के निर्णय कार्य वैज्ञानिक अभिगम का शोध माना जाता है जिसमें किसी संगठित प्रणाली का संचालन सम्मिलित होता है।

जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है कि इसमें संचालन सम्बन्धी कार्यों पर शोध सम्मिलित है। इस तरह प्रचालन शोध का उपयोग किसी संगठन में संचालन सम्बन्धी गतिविधियों को क्रियान्वित एवं समन्वित करने में आने वाली समस्याओं से जुड़ा होता है। क्योंकि संगठन के अन्तर्गत संचालन गतिविधियों का क्रियान्वयन एवं उनमें समन्वय करना काफी महत्वपूर्ण होता है।

इस शोध विधा का अनुप्रयोग ग्रन्थालय एवं सूचना क्षेत्र में भी किया जा रहा है। ओ0आर0 की प्रक्रिया को एक समस्या–निवारक गतिविधि के रूप में गिना जाता है जो परिस्थिति एवं समय की मांग के अनुसार नई तकनीक का विकास करने में सक्षम होती है।

यह शोध विधा प्रबन्धन की महत्वपूर्ण एवं प्रचलित परिवीक्षण तकनीकों में से एक है। इसमें गणितीय माडल का अनुप्रयोग होता है जो सबसे अच्छे परिणाम के लिए वैकल्पिक प्रक्रमों तथा उपायों के तुलना की सुविधा प्रदान करता है। इस शोध का उद्देश्य प्रबन्धक को निर्णय लेने में तथा किसी प्रक्रिया अथवा प्रक्रम के परिवीक्षण में सहायता प्रदान करना है।

संक्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताएं (Characterstics of OR) :

इस शोध में गणित एवं गणितीय माडल का उपयोग किया जाता है । इसका उद्देश्य प्रबन्ध तन्त्र को निर्णय लेने में सहायता प्रदान करना है। यह तभी उपयोगी है जब समस्या के सभी तत्वों को गणितीय माडल में प्रस्तुत किया जा सके। यह समाजशास्त्रीय अथवा मनोवैज्ञानिक सम्बन्धी समस्याओं के

RIL-091

समाधान में सहायक नहीं है।

OR की मुख्य विशेषताएं निम्न हैं :-

- एक समस्या-निवारक प्रक्रिया
- वैज्ञानिक विधियों का उपयोग होता है, जैसे निरुपण परीक्षण एवं माडल का परिशोधन/आधुनिकीकरण
- वैकल्पिक कार्य प्रविधियों के अनुमान के लिए माडल का उपयोग
- माडल्स का प्रायोगिक कार्य परीक्षण
- इसमें विभिन्न गणितीय तकनीकों का उपयोग करते हैं, जैसे
    - (1) लिनीयर प्रोग्रामिंग (Linear Programing)
    - (2) समानता सिद्धान्त
    - (3) Queuins सिद्धान्त
    - (4) नेटवर्क विश्लेषण

संक्रियात्मक अनुसंधान प्रक्रिया :

यह एक वैज्ञानिक पद्धति है। इसकी प्रक्रिया समस्या के पर्यवेक्षण एवं निरूपण से प्रारम्भ होती है तथा वैज्ञानिक माडल के विकास द्वारा वास्तविक समस्या की जड़ में पहुँचने का प्रयास करती है। स्थिति की वास्तविक विशेषताओं का इसमें प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाता है।

इस प्रक्रिया में निम्न चरण हो सकते हैं :-

(i) समस्या का निरूपणीकरण

(ii) प्रणाली का प्रतिनिधित्व करने वाले गणितीय माडल का विकास

(iii) माडल से निराकरण/हल प्राप्त करना

(iv) माडल तथा इसमें निष्कर्ष का परीक्षण करना

(v) निष्कर्ष पर नियंत्रण स्थापित करना

(vi) प्राप्ति निष्कर्षों के आधार पर कार्यान्वयन।

3.4 ग्रन्थालयों में संक्रियात्मक अनुसंधान

इसका प्रयोग ग्रन्थालय सूचना केन्द्र प्रबन्धन के उन क्षेत्रों में सफलतापूर्वक किया जा रहा है जो अपने को परिणाम बताने की ओर ले जाते हैं। ग्रन्थालय प्रबन्धन के पक्ष से इसका प्रायोगिक अभिप्रेरण लागत में कमी तथा कार्य क्षेत्र को कम्प्यूटर की सहायता से विस्तार देना है। विस्तारपरक अध्ययन के लिए OR सबसे अच्छा साधन है। इसका प्रारम्भिक कार्य इसके वर्तमान स्वरूप में इसके कार्यों के अनुरूप माडल तैयार करना तथा नयी प्रणाली के साथ इसका प्रयोग करना है।

ग्रन्थालयों के सम्बन्ध में संचालन शोध प्रक्रिया को तीन भागों में बाँटा जा सकता है :-

(1) व्यावहारिक समस्या समाधान,

(2) शोध को प्रभावी बनाना,

(3) सैद्धान्तिक शोध।

इसमें प्रथम को सरलता से समझा जा सकता है क्योंकि इसका प्रयोग किसी विशिष्ट सूचना प्रणाली या सेवा की विशिष्ट समस्याओं के समाधान के लिए किया जाता है।

शोध को प्रभावी बनाने का उद्देश्य सामान्य समस्याओं को समाप्त करते हुए व्यावहारिक समस्या समाधान को सहायक बनाना है। जो विशिष्ट समस्या समाधान में अत्यधिक प्रयत्न को भी अन्यथा निष्फल बना देता है। यह वह खोज है जो विशिष्ट समस्या पर लगे टीम वर्क (समूह कार्य) की कठिनाइयों को दूर करने में प्रभावी होता है। यह शोध संकल्पना पर आधारित माडल, गणनीय आधार, उचित डेटा, उपयोगकर्ताओं के व्यवहार का ज्ञान आदि उत्पन्न कर सकता है। यह एक प्रकार का कार्य है जो प्रायः पृष्ठभूमि शोध (Background Research) के नाम से जाना जाता है। कार्य को प्रभावी बनाने वाला एक सम्भव स्वरूप सैद्धान्तिक शोध है। यह माडल की प्रक्रिया है तथा एक वर्ग की समस्याओं का समाधान है।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र की कुछ व्यावहारिक समस्याएं निम्नवत हैं, जिनमें संशोधन, शोध की प्रभावी भूमिका हो सकती है :–

- संसाधन वितरण
- दीर्घकालीन योजना
- सूचना सेवाओं का प्रसारण
- सूचना सेवाओं का विपणन
- ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र के स्थान
- नवीन सेवाओं पर व्यय
- ऋण योजना
- संग्रह के अधिग्रहण की योजना
- उपयोगकर्ता व्यवहार
- प्रत्याहरण योजना
- डेटा बैंक की स्थापना
- मानव शक्ति तथा उनमें उत्थान की योजना।

3.5 प्रबन्धन सूचना प्रणाली : (MIS)

पिछले दशकों में ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों का संगठनात्मक ढाँचा गुरुत्तर एवं मिश्रित (complex) हो गया है। सूचना विस्फोट के कारण इनका प्रबन्धन कठिन होता जा रहा है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए सतत् प्रयत्न कर रहे हैं। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन से जुड़े लोग भी अनुभव कर रहे हैं कि एक संगठनात्मक स्रोत के रूप में प्र0 सू0 प्र0 का विचार उपयोगी हो सकता है। ग्रन्थालय के अनेक प्रबन्धकीय कार्यों में एक परिवीक्षण तकनीक के रूप में प्र0 सू0 प्र0 का प्रयोग प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। इसके सहयोग से प्रचालित कलापों के सम्बन्ध में अल्प समय में, सटीक एवं अद्यतन सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं जिससे प्रबन्धन एवं नियंत्रण में सहायता मिल सकती है।

प्रबन्धन सूचना प्रणाली को ऐसी प्रणाली के रूप में परिभाषित किया जाता है जो प्रबन्धन के सभी स्तरों पर सभी वांछित उपयोगी सूचनाओं को उपलब्ध कराता है जिसे संगठन के सम्पूर्ण नियंत्रण के सन्दर्भ में उपयुक्त निर्णय लेने में उपयोग किया जाता है। इस तरह यह ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के

RIL-091

प्रबन्धन की सबसे अच्छी परिवीक्षण तकनीक मानी जाती है। इसमें विभिन्न प्रक्रियाओं में प्रयुक्त डेटा परम्परागत ढंग से अथवा स्वचालित तरीके से निवेशित किया जा सकता है। यह–

– प्रबन्धन के सभी स्तरों पर इसका उपयोग किया जा सकता है,

– एक संगठनात्मक उप प्रणाली के साथ जुड़ा होता है,

– क्रिया विधि को जाँचने, प्राप्ति का परिवीक्षण करने, विकल्पों का मूल्यांकन करने अथवा परिवर्तन के लिए सूचना देने का कार्य करता है,

– आन्तरिक और बाह्य दोनों तरफ से परिवर्तनशील है।

3.5.1 एम. आई. एस. का अर्थ

किसी प्रबन्धन सूचना प्रणाली में निम्न तत्त्व सम्मिलित होते हैं :–

(1) प्रबन्धन

(2) सूचना

(3) प्रणाली

यहाँ प्रबन्धन का तात्पर्य योजनाओं, क्रियाकलापों एवं नियंत्रण से सम्बन्धित निर्णय लेने से है।

सूचना में निर्णय लेने के लिए प्रयुक्त क्रमबद्ध डेटा सम्मिलित है। सूचनाओं के लेन–देन के द्वारा संगठन की सभी गतिविधियों में समन्वय कार्य प्रणाली द्वारा किया जाता है।

3.5.2 एम. आई. एस. की आवश्यकता :

किसी सूचना प्रणाली में कर्मचारी, उपकरण, समन्वय एवं उद्देश्य सम्मिलित होते हैं, लेकिन इसमें सूचना ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रबन्धक को प्रत्येक पक्ष के कार्य के सम्बन्ध में सूचना वांछित होती है। एक निर्णयकर्ता के रूप में प्रबन्धक को स्वयं ही सूचनाओं को एकत्रित करना पड़ता है। उसमें सूचनाओं को एकत्रित करने, संशाधित करने, पुनर्प्राप्त करने की दक्षता होनी चाहिए जिससे वह निर्णय लेने के लिए वांछित सूचनाओं को आवश्यकतानुसार उपयोग में ला सके। आज के प्रबन्धक को अपनी सूचना आवश्यकताओं से परिचित होना चाहिए तथा उन सूचनाओं को प्रदान करने वाली प्रणाली विकसित करनी चाहिए। प्रबन्धकों की सूचना आवश्यकताएं उनके प्रबन्धन के स्तर के अनुसार, उच्चतम, मध्यम एवं निम्न स्तर की भिन्न–भिन्न प्रकार की हो सकती हैं।

एम. आई. एस. के उद्देश्य :

किसी प्रबन्धन सूचना प्रणाली के निम्न उद्देश्य हो सकते हैं :–

(i) सटीक, समय से तथा चयनित सूचनाएं प्रबन्धन के सभी स्तरों पर उपलब्ध कराकर संगठन में निर्णय के कार्य में सहायता करना एवं एक विशेष कार्य विधि का निर्धारण करने में प्रबन्धक की सहायता करना।

(ii) संगठन के सभी उपयुक्त तत्त्वों का उद्देश्यात्मक निष्पादन के लिए सहायता करना, ये तत्त्व हैं –

– पूर्व नियोजित योजनाओं के साथ अद्यतन प्रक्रिया को सम्बन्धित करना

– संगठन के प्रत्येक महत्वपूर्ण कार्यकारी विभाग को प्रभावशाली बनाना,

– संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में प्रत्येक व्यावसायिक/कर्मचारी का योगदान सुनिश्चित करना।

RIL-091

(iii) प्रबन्धन के सभी स्तरों पर योजना एवं नियंत्रण की प्रक्रिया को सुविधा प्रदान करना।

(iv) उत्तरदायी एवं महत्वपूर्ण प्रबन्धकों के लिखित विवरणों को निर्देश देने एवं क्रियाशील बनाने के लिए साधन विकसित करना।

एम. आई. एस. की विशेषताएँ :

इन उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक, एक प्रभावी प्रबन्धन सूचना प्रणाली की निम्न विशेषताएं होती हैं:–

1. यह प्रकृति में चयनात्मक एवं उपयुक्त है, इसमें निर्णयकर्ता द्वारा विचारार्थ किसी विशिष्ट समस्या पर जोर दिया जाता है,

2. यह इस ढंग से समन्वित किया जाता है कि एक संगठन के कार्य करने वाले तत्त्व अथवा विभाग एवं विभिन्न स्तरों के प्रबन्धन एक दूसरे से सम्बन्धित दिखते हैं। किसी एक इकाई अथवा तत्त्व से सम्बन्धित निर्णय का प्रभाव संगठन पर समग्र रूप में देखा जा सकता है,

3. यह प्रत्येक प्रबन्धक की संगठन में उनकी संगठनात्मक स्थिति, उत्तरदायित्व एवं निर्णय लेने के अधिकार पर आधारित सूचना आवश्यकताओं का प्रतिनिधित्व करता है,

4. इसे प्रबन्धकीय योजना एवं नियंत्रण को समय एवं संगठन के अनुसार, वांछित सूचना के प्रकार में अन्तर करना चाहिए,

5. इसे संगठन के ढाँचे में पाली में कार्य के परिवर्तनों के लिए जिम्मेदार होना चाहिए।

3.5.3 प्रबन्धन सूचना प्रणाली के विकास की प्रक्रिया (Process of MIS Development)

प्रबन्धन सूचना प्रणाली प्रक्रिया में अनेक चरण सम्मिलित होते हैं, जैसे सूचना एकत्रीकरण, प्रक्रिया एवं निर्णय कार्य के लिए उनका विश्लेषण। आज कल के ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के बढ़ते आकार, जटिलताओं के कारण, अधिकतर एम आई एस प्रतिवेदन कम्प्यूटर द्वारा तैयार किये जा रहे हैं, लेकिन यह भी महत्वपूर्ण है कि इस प्रणाली में कम्प्यूटर का होना कोई पूर्व शर्त नहीं है। कम्प्यूटर के बिना भी यह प्रणाली कार्य कर सकती है। एम आई एस की प्रक्रिया में सम्मिलित विभिन्न चरण निम्नवत हैं :–

(क) सभी प्रबन्धकों की सूचना आवश्कताएं ज्ञात करना,

(ख) एम आई एस के उद्देश्यों का लिखित विवरण तैयार करना साथ ही अनुमानित लाभों का विवरण रखना,

(ग) अनुसूची एवं अनुमानित लागत के साथ प्रणाली के अभिकल्पन की योजना तैयार करना,

(घ) प्रणाली की एक ऐसी आरम्भिक अभिकल्पना बनाना जो प्रायोगित स्तर पर सभी वांछित उद्देश्यों को पूर्ण करती हो,

(ङ) विस्तृत अभिकल्पना तैयार करना, जिसमें मूल अभिकल्पना में आवश्यक संशोधन एवं विस्तार सम्मिलित हो। इसमें प्रबन्धकीय प्रतिवेदनों के विस्तृत विवरण एवं सूचना प्रवाह का विस्तृत विवरण वांछित है,

(च) नयी प्रणाली को कार्य रूप में ले आंना। इसकी पूर्व जाँच उपयोगी हो सकती है। सभी घटकों को एक साथ कार्य करते हुए देख लेना चाहिए.

RIL-091

(छ) नई प्रणाली का परिवीक्षण एवं उचित रख–रखाव इस चरण में आता है। परिवर्तनशील प्रबन्धन आवश्यकताओं एवं परिवर्तित डेटा निवेश के कारण प्रणाली में परिवर्तन किया जाना चाहिए।

एम. आई. एस. के लाभ :–

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के लिए प्रबन्धन सूचना प्रणाली अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रणाली का उपयोग करने के निम्न लाभ दृष्टिगोचर होते हैं।

1. निर्णय लेने के लिए वांछित छोटी से छोटी सूचना भी उपलब्ध हो जाती है,
2. सूचनाओं में रिक्तता समाप्त हो जाती है, अधूरी सूचनाएं पूरी हो जाती हैं, गलत सूचनाएं सही हो जाती हैं,
3. निर्णय का कार्य अत्यन्त सटीक हो जाता है, साथ ही यह कम खतरनाक एवं अपेक्षापूर्ण सरल हो जाता है,
4. सूचनाओं का प्रवाह स्थापित हो जाता है,
5. सूचनाओं को अद्यतन बनाये रखने की प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है। प्रत्येक क्रिया का परिवीक्षण आसान हो जाता है,
6. प्रगति विश्लेषण एवं भविष्यवाणी करना आसान हो जाता है साथ साथ एम आई एस की सहायता से दीर्घ अवधि की योजना बनाना भी सरल हो जाता है।

सूचनाओं की प्रस्तुति :

प्रबन्धन सूचना प्रणाली से विभिन्न प्रबन्धन स्तरों पर आगम (output) प्रतिवेदन एवं प्रलेख के रूप में प्राप्त किया जाता है। ये प्रतिवेदन प्रायः प्रबन्धन को उनके निर्णय कार्य में पर्याप्त सहायता करते हैं। समय–समय पर प्रबन्धन को सही निर्णय के लिए उपयुक्त विवरण/व्याख्या एवं निर्णय उपलब्ध कराये जाते हैं। ये प्रतिवेदन अत्यन्त विस्तृत तो नहीं होते लेकिन इनसे आवश्यक विवरण उपलब्ध हो जाते हैं।

एम आई एस की लागत :

किसी भी प्रणाली की लागत एक महत्वपूर्ण कारक होती है। प्रणाली की स्थापना में आने वाली लागत के आधार पर उसकी गुणवत्ता परखी जाती है। यह निश्चित है कि किसी प्रणाली की वास्तविक लागत उसकी अनुमानित लागत से अधिक होती है। एम आई एस के मामले में भी ऐसा ही है क्योंकि चयन के समय लागत के सभी पहलू दृष्टिगोचर नहीं होते हैं। एम आई एस से जुड़ी मुख्य लागत का विवरण निम्न है :–

(क) हार्डवेयर :

एम. आई. एस. के विकास में यह पाया जाता है कि संगठन में पहले से उपलब्ध हार्डवेयर कार्य के लिए अपर्याप्त प्रमाणित होते हैं। इसलिए वर्तमान कम्प्यूटर संसाधन, टर्मिनल, डिस्क एवं मेमोरी आकार आदि का मूल्यांकन करने की आवश्यकता होती जिससे यह ज्ञात हो सके कि वे उद्देश्यों को पूरा कर पायेंगे अथवा नहीं।

(ख) साफ्टवेयर :

एम. आई. एस. के प्रत्येक पक्ष को प्रोग्रामिंग अर्थात् साफ्टवेयर की आवश्यकता होती है। इस तरह इसके प्रत्येक प्रोग्रामिंग पक्ष की कुशलता की जाँच के लिए पर्याप्त समय चाहिए, जो कि अधिक मूल्य का भी होता है।

RIL-091

(ग) कर्मचारी :

कम्प्यूटरीकृत सूचना प्रणाली एक जटिल एवं परिष्कृत प्रबन्धन उपकरण होता है। अतः प्रणाली के विकास में लगे कर्मचारियों को इसका पर्याप्त अनुभव होना चाहिए एवं इन्हें प्रणाली के सभी पक्षों का ज्ञान होना चाहिए। यदि संगठन के पास पर्याप्त अनुभवी कर्मचारी नहीं होते हैं तो ऐसे लोगों को नियुक्त करना पड़ता है। इस तरह परियोजनाओं में अधिक लागत सम्भव है।

(घ) अनुरक्षण :

किसी अन्य प्रणाली की तरह एम. आई. एस. में भी हमेशा सुचारु रख-रखाव की आवश्यकता होती है। इस प्रणाली की कार्य कुशलता बनाये रखने के लिए अनुरक्षण पर काफी धन व्यय करना पड़ता है। हमेशा अद्यतन एवं समयानुकूल सूचनाएं प्रणाली से अपेक्षित होती है। अतः आवश्यक है कि प्रणाली के रख रखाव में पर्याप्त अनुभवी एवं जानकार लोगों की सेवाएं प्राप्त की जांय।

बाधाएं :

एम आई एस के साथ अपने मुख्य समस्याओं का विवरण निम्नलिखित है :–

(1) प्रणाली का मुख्य कार्य समान्यतया कम्प्यूटर विशेषज्ञ अथवा प्रणाली विश्लेषक द्वारा सम्पादित किया जाता है, लेकिन इसमें प्रबन्धन से जुड़े सभी लोगों की भागीदारी वांछित होती है,

(2) संसाधनों की कमी,

(3) प्रशिक्षित कर्मचारियों का अभाव,

(4) नियोजित अभिगम का अभाव,

(5) समय–साध्यता,

(6) द्वितीयक प्रयत्न,

(7) उपयोगी एवं आवश्यक डेटा उस समय उपलब्ध रहने पर भी, अपने स्वरूप एवं स्थित के कारण पुनर्प्राप्त नहीं होता है।

एम. आई. एस. प्रबन्धक की दक्षता :

प्रबन्धन सूचना प्रणाली का मुख्य लक्ष्य प्रबन्धन को उनके कार्य में सहायता प्रदान करना एवं प्रक्रिया से संलग्न सभी कर्मियों को कार्य निष्पादन में सहयोग प्रदान करना है। प्रणाली से वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए इसके प्रबन्धक में निम्न योग्यताएं होनी चाहिए :–

– संगठन तथा इसके उद्देश्यों का ज्ञान,
– मौखिक एवं लिखित सूचनाओं के प्रभावी संप्रेक्षण की योग्यता,
– उच्च स्तर के प्रबन्धन के साथ सम्बन्ध,
– अधीनस्थों के साथ सम्बन्ध,
– सूचना प्रक्रिया एवं डेटा संचार तकनीक का ज्ञान,
– प्रणाली के अभिकल्पन की योग्यता।

3.6 एम. आई. एस. तथा ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र :

सूचना को महत्वपूर्ण संसाधन (Commodity) के रूप में मान्यता प्राप्त हो चुकी है एवं प्रबन्धन सूचना के विचार को एक संगठनात्मक संसाधन के रूप में जाना जाता है। वित्तीय अनुशासन के इस

वर्तमान युग में ग्रन्थालय प्रबन्धकों को अनेक कठिन निर्णय लेने पड़ते हैं जिसमें नयी सेवाओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है। कुशल सूचना प्रबन्धन द्वारा ही इन नवीन सेवाओं से सम्बन्धित निर्णय लिया जा सकता है। अतः सूचना का प्रबन्धन किया जाना चाहिए। एम. आई. एस. के द्वारा समस्या का उचित समाधान खोजा जा सकता है।

ग्रन्थालय प्रबन्धन के क्षेत्र में प्रबन्धन सूचना प्रणाली एक उपयोगी परिवीक्षण तकनीक है। कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी में हो रहे परिवर्तनों ने भी अपरोक्ष रूप से एम. आई. एस. के विकास को बढ़ावा दिया है। इन परिवर्तनों में तीव्र प्रक्रिया गति, डिस्क की अत्यधिक संग्रहण क्षमता, विविध प्रक्रिया एवं सामान्यीकृत साफ्टवेयर के उपयोग महत्वपूर्ण हैं। यह कहा जा सकता है कि भविष्य में ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों में एम. आई. एस. का अधिक विस्तार होगा। इस तरह ग्रन्थालयों में एम. आई. एस. के पारम्परिक प्रतिवेदन स्वरूप में भी परिवर्तन अपरिहार्य है।

3.7 उद्देश्यात्मक प्रबन्धन तथा ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र

उद्देश्यात्मक प्रबन्धन को संक्षेप में एम. बी. ओ. (MBO) के नाम से जाना जाता है। प्रबन्धन की इस प्रक्रिया में किसी भी स्तर का प्रबन्धक अपने निकटतम वरिष्ठ प्रबन्धक के साथ विचार--विमर्श का कुछ विशिष्ट उद्देश्यों को लेकर आपसी समझौता करते हैं अर्थात् किसी विशिष्ट अवधि के लिए विशेष लक्ष्य निर्धारित करते हैं जिन्हें दोनों प्रबन्धकों में से कनिष्ठ को निर्धारित अवधि में ये उद्देश्य प्राप्त करने होते हैं। इन उद्देश्यों को लिखित अभिलेख के रूप में रखा जाता है।

इस तरह एम. बी. ओ. एक परिवीक्षण तकनीक है जिसे किसी ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के किसी एक एवं सामूहिक लक्ष्यों को एकीकृत करने के लिए प्रभावी ढंग से उपयोग किया जाता है।

एम. बी. ओ. मुख्यतया एक प्रक्रिया है जहाँ सूचना प्रबन्धक अथवा ग्रन्थालयाध्यक्ष एवं उसका निकटतम अधीनस्थ अधिकारी ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र के लिए संयुक्त रूप से

(क) सामान्य लक्ष्यों की पहचान करते हैं,

(ख) प्रत्येक व्यक्तिगत कर्मचारी की, उससे परिणाम की अपेक्षा के अनुरूप, जिम्मेदारी के क्षेत्र का निर्धारण करते हैं,

(ग) ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र की एक इकाई के क्रियाकलापों के लिए दिशा--निर्देशों के रूप में कुछ माप का उपयोग करते हैं एवं प्रत्येक सदस्य के योगदान का मूल्यांकन करते हैं। ये मांप हैं :--

- दोनों प्रबन्धकों द्वारा संयुक्त रूप से स्थापित उद्देश्य,
- ये लक्ष्य प्राप्ति अथवा उत्पादन पर विशेष जोर देते हैं,
- निर्धारित अवधि की समाप्ति के बाद निर्धारित लक्ष्यों के परिप्रेक्ष्य में सम्पादित कार्य की जाँच।

मूल्यांकन के बाद यदि पाया जाता है कि योजना के अनुरूप कार्य नहीं हो पाया है तो उस कमी को दूर करने के लिए उपयुक्त कदम का सुझाव दिया जाता है। आवश्यकतानुसार मूल योजना में आवश्यक संशोधन अथवा परिवर्तन भी किये जाते हैं। अगली समयावधि के लिए लक्ष्यों का निर्धारण इसी स्तर पर किया जाता है।

3.7.1 उद्देश्यानुसार प्रबन्धन के उद्देश्य :

यह तथ्य है कि लक्ष्यों के निर्धारण के लिए उद्देश्य बनाये जाते हैं जिससे निश्चित क्षेत्र परिभाषित

RIL-091

किया जा सके। ग्रन्थालयी अथवा सूचना प्रबन्धक द्वारा किये जाने वाले प्रयत्नों के लिए दिशा–निर्देश सुझाये जाते हैं। इसके कुछ उद्देश्य निम्न हैं :–

(i) कर्मचारियों द्वारा कार्य सम्पादित करा लेने की कला प्रबन्धन कहलाती है एवं उद्देश्यात्मक प्रबन्धन में संगठन में निहित प्रत्येक व्यक्ति को उद्देश्य एवं लक्ष्यों का ज्ञान रहता है तथा उनकी प्राप्ति में वे सतत् प्रयत्नशील रहते हैं,

(ii) संगठन एवं व्यक्ति एक ही दिशा में कार्य करते हैं,

(iii) संगठन के उद्देश्य स्पष्ट होते हैं एवं सभी को ज्ञात होते हैं,

(iv) संगठन के उद्देश्यों का एक निश्चित अवधि के अन्तराल पर समीक्षा की जाती है, एवं आवश्यक होने पर इनमें संशोधन भी किया जाता है,

(v) प्रबन्धन द्वारा सूचना को ऐसे स्वरूप में एवं आवृत्ति पर नियंत्रित किया जा सकता है जिससे स्वनियंत्रण ज्यादा प्रभावी हो जाता है एवं निर्णय जल्दी लिये जा सकते हैं,

(vi) प्रबन्धन के प्रत्येक स्तर को अपेक्षित परिणाम की प्रत्याशा में स्पष्ट कर दिया जाता है, साथ ही साथ कार्य मानक भी बता दिये जाते हैं,

(vii) यह प्रबन्धक की प्रेरणा बढ़ाने में भी सहायक है।

3.7.2 उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के निर्माण के चरण :

इस प्रबन्धन के विकास के निम्न चरण हो सकते हैं :–

(1) पूरे ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र का पूर्ण अध्ययन एवं संगठन के सामान्य उद्देश्यों का निर्धारण,

(2) संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संगठनात्मक ढाँचे में उपयुक्त परिवर्तन/संशोधन करना,

(3) वरिष्ठ अधिकारी अपने अधीनस्थों के लिए लक्ष्यों का निर्धारण करते हैं, कनिष्ठ अधिकारी भी कार्य सम्पादन के लिए लक्ष्य प्रस्तुत करते हैं एवं उन क्षेत्रों का चयन करते हैं जिसमें वे प्रभावी भूमिका का निर्वाह कर सकें

(4) वरिष्ठ अधिकारी अपने अधीनस्थ द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव पर विचार–विमर्श कर संयुक्त रूप से लक्ष्यों का निर्धारण करते हैं,

(5) वर्तमान में सम्पादित किये जा रहे कार्यों से लक्ष्य के रूप में सम्पादित किये जाने वाले कार्यों की तुलना करते हैं एवं आवश्यकतानुसार लक्ष्यों में संशोधन करते हैं। अनुपयुक्त लक्ष्यों को इस स्तर पर निकाल दिया जाता है ताकि संसाधनों का व्यर्थ उपयोग रोका जा सके,

(6) योजना के अन्तर्गत पूर्व निर्धारित समय पर सभी अधीनस्थों के कार्य सम्पादन का समीक्षा उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के सन्दर्भ में की जाती है,

(7) वर्णित उद्देश्यों के सन्दर्भ में सम्पूर्ण संगठन की उपलब्धियों की समीक्षा की जाती है, तथा विसंगति प्राये जाने पर पूरे प्रक्रिया की प्रथम चरण से समीक्षा की जाती है।

3.7.3 उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के लाभ

उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के लाभों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है, प्रथम संगठन की दृष्टि से एवं द्वितीय व्यक्तिगत प्रबन्धक की दृष्टि से।

(क) ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र की दृष्टि से

- वास्तव में महत्वपूर्ण व लाभ आधारित कार्यों पर व्यक्ति एवं समूह रूप में ध्यान देना,
- प्रबन्धकों को कम व्यय पर उत्तम प्रबन्धन प्रशिक्षण,
- कर्मचारियों के चारित्रिक एवं उद्देश्यात्मक भाव में उनकी भागीदारी के कारण, विकास,
- प्रबन्धन नियंत्रण एवं प्रबन्धन कार्य मानक में सुधार,
- उच्च कार्य क्षमता एवं दक्षता वाले कर्मचारियों की पहचान जिससे भविष्य के लिए विश्वसनीय एवं मजबूत प्रबन्धन योजना बनायी जा सके,
- उपयुक्त परिणाम में आ रही बाधाओं की पहचान एवं उनमें समाधान के लिए संशोधित योजना बनाना,
- संगठन के विभिन्न विभागों या इकाइयों के प्रयासों में समन्वय।

(ख) व्यक्तिगत प्रबन्धक की दृष्टि से उद्देश्यात्मक प्रबन्धन के निम्न लाभ हैं :–

- निर्णय लेने में सुधार एवं सरलता,
- न्यूनतम कठिनाइयाँ,
- व्यक्तिगत योगदान के सुअवसर एवं अधिक उत्तरदायित्व वहन करने की योग्यता का विकास,
- स्वयं एवं वरिष्ठ की उपलब्धियों की पहचान,
- पुरस्कार एवं प्रोन्नति के अनेक अवसर।

3.7.4 बाधाएं

यद्यपि उद्देश्यात्मक प्रबन्धन द्वारा सूचना संकलन के अनेक लाभ हैं लेकिन इसके अपनाने से कुछ समस्याएं भी आती हैं। उद्देश्यात्मक प्रबन्धन सोच एवं क्रियाविधि में अत्यन्त कठोर होता है। प्रबन्धन में हमेशा नम्यता की आवश्यकता होती है। लिखित उद्देश्यों की प्रक्रिया को इस सीमा तक कठोर न रखा जाय कि वे विपरीत रूप से प्रभावित करने लगें।

यदि उद्देश्यात्मक प्रबन्धन को सावधानीपूर्वक लागू नहीं किया गया है तो यह कर्मियों को अनुचित ढंग से अभिप्रेरित करेगा। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के सन्दर्भ में एक सामान्य समस्या यह है कि ग्रन्थालयी प्रायः समूह में कार्य करना चाहते हैं, जबकि उद्देश्यात्मक प्रबन्धन वरिष्ठ अधिकारियों के दो के समूह अथवा व्यक्ति पर जोर देता है।

3.8 मूल्यांकन तकनीक

मूल्यांकन किसी भी प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण पक्ष होता है। इसके अन्तर्गत कार्य अथवा परिणाम की सूचना संगठन के निर्धारित उद्देश्यों के साथ तुलना की जाती है जिससे विशिष्ट समय में वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए आवश्यक परिवर्तन किये जा सकें। यह भी आंकलन किया जाता है कि परिवर्तन सही दिशा में है या नहीं एवं किस सीमा तक ये परिवर्तन प्रभावी है।

मूल्यांकन के लिए दो वस्तुएं महत्वपूर्ण होती हैं :–

(i) संगठन के विशिष्ट एवं स्पष्ट उद्देश्य,

(ii) सटीक एवं आसान/उपकरण, जिनसे जाँच की जा सके।

उद्देश्यों में निहित कमी को मूल्यांकन प्रक्रिया में रेखांकित किया जाना चाहिए। अतः मूल्यांकन प्रक्रिया में उद्देश्यों को एक आधार रूप में आवश्यकता होती है। मूल्यांकन प्रक्रिया में उन्हीं उपकरणों को कार्य जाँच के लिए प्रयुक्त किया जाना चाहिए जो उपयोग में आसान, सटीक एवं विश्वसनीय हों।

मूल्यांकन के उद्देश्य :

प्रबन्धन में किसी कार्य अथवा सेवा के मूल्यांकन का तात्पर्य उसके मूल्य अथवा उपयोगिता निर्धारण से होता है। मूल्यांकन को समीक्षा, मूल्य निर्धारण, जाँच उपयोगिता आदि अर्थ में लिया जाता है। मूल्यांकन के निम्न उद्देश्य हो सकते हैं :–

(क) अपेक्षित परिणामों को किसी सीमा तक प्राप्त किया जा सका है, इस तथ्य का निर्धारण करना इसका प्राथमिक उद्देश्य है,

(ख) कार्यान्वयन के पूर्व उद्देश्यों को निर्धारित कर लिया जाता है,

(ग) किसी विशिष्ट सफलता एवं असफलता के कारण का निर्धारण करना,

(घ) सफलता के पीछे छिपे सिद्धान्तों का अनावरण करना,

(ङ) उपयोगिता बढ़ाने के लिए तकनीकों की खोज करना,

(च) अग्रिम शोध के लिए आधार की स्थापना करना,

(छ) प्रणाली के उद्देश्यों को पुनः परिभाषित करना।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में दो प्रकार के मूल्यांकन का प्रयोग प्रायः दृष्टिगोचर होता है :–

– स्थूल मूल्यांकन

– सूक्ष्म मूल्यांकन

स्थूल मूल्यांकन के अन्तर्गत मात्र सम्पादित कार्य विवरणों को सम्मिलित किया जाता है। इसका उद्देश्य यह निर्धारित करना होता है कि कोई प्रणाली कितनी अच्छी तरह कार्य कर रही हैं। इसमें ग्रन्थालय अथवा सूचना प्रणाली के कार्य करने का ढंग अथवा इसकी असफलताओं को विचार में लिया जाता है एवं सारे अवयवों/उप विभागों के विवरणों विस्तार से सम्मिलित नहीं किए जाते हैं।

मूल्यांकन की विधियाँ :

मूल्यांकन की प्रक्रिया अत्यन्त जटिल होती है। मूल्यांकन की अनेक विधियाँ हैं, जिन्हें ग्रन्थालय एवं सूचना के सन्दर्भ में लागू किया जा सकता है। महत्वपूर्ण मूल्यांकन विधियाँ निम्न हैं :–

1. प्रयोगात्मक मूल्यांकन :

प्रयोगात्मक मूल्यांकन की इस विधि का प्रयोग उन स्थलों पर किया जाता है जहाँ किसी सभ्यता के कुछ विशेष पक्षों का अलग से अध्ययन किये जाने की आवश्यकता होती है। इनमें उन सभी तत्त्वों पर नियंत्रण करने पर जोर दिया जाता है जो परिणाम को प्रभावित कर सकते हैं। इस विधि का प्रयोग सूचना प्रणाली के सूचना पुनर्प्राप्ति प्रणाली के सिद्धान्तों को प्रमाणित करने के लिए किया जाता है।

2. गुणात्मक मूल्यांकन :

गुणात्मक मूल्यांकन के अन्तर्गत वे अनेक तकनीकें सम्मिलित हैं, जिनमें व्यवहार अध्ययन एक सामान्य पक्ष होता है, जैसे सूचना खोज एवं व्यवहार में लाने का ढंग। इस विधि में उपयोगकर्ता के

RIL-091

दृष्टिकोण पर सर्वाधिक ध्यान दिया जाता है, जो मूल्यांकन का एक प्रधान पक्ष होता है। इसमें प्रयुक्त डेटा सूक्ष्म एवं विस्तृत अवसर प्रदान है। उनमें से कुछ मूल्यांकन तकनीकें निम्न हैं :–

- साक्षात्कार
- प्रश्नावली
- अवलोकन
- परीक्षा

3. निर्णय विश्लेषण :

मूल्यांकन के सन्दर्भ में निर्णय विश्लेषण विधि, किसी उपयुक्त निर्णय पर पहुँचने के लिए एक तथ्यपरक प्रक्रिया प्रदान करता है, जो स्वयं में एक अच्छा विकल्प हो सकता है। इस विधि से कई विकल्पों में एक बेहतर निर्णय पर पहुँचा जा सकता है। उपयोगकर्ता के सभी विचारों को ध्यान में लिया जाता है। ग्रन्थालय एवं सूचना कार्य से जुड़े सभी प्रकार की सामग्रियों एवं सेवाओं के चयन के लिए जाँच सूची (चेक लिस्ट) का उपयोग किया जाना, निर्णय विश्लेषण का एक दूसरा स्वरूप है।

4. उपयोगकर्ता अध्ययन :

ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान से जुड़े महत्वपूर्ण विषयों में उपयोगकर्ता अध्ययन एक है। इस विषय पर बहुत शोध कार्य हुआ है एवं अभी हो रहा है।

किसी भी सूचना प्रणाली में उपयोगकर्ता के व्यवहार का अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण है। पाठक के सूचना आवश्यकताओं की संतुष्टि सभी प्रणालियों का अन्तिम लक्ष्य होता है। किसी सूचना सेवा से कैसे सूचनाएं पाठकों द्वारा प्राप्त की जाती है एवं इनमें इनको कितनी सफलता मिलती है अर्थात् किस सीमा तक उपयोगकर्ता संतुष्ट हो पाता है, इन्हीं तथ्यों का अध्ययन इस विधि का मूल मन्त्र है।

5. लागत–वसूली विश्लेषण :

किसी सूचना प्रणाली अथवा सेवा में वहाँ के संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। संसाधनों का सम्बन्ध सीधे वित्तीय स्रोत से होता है। इन सभी संसाधनों में व्यय होने वाले वित्त को लागत कह सकते हैं। इसमें छः पक्ष सम्मिलित होते हैं :– लागत, उपयोगिता, लाभ, लागत–उपयोगिता, लागत–लाभ एवं लागत–कार्य–लाभ।

विभिन्न तकनीकें :

मूल्यांकन करने की अनेक तकनीकें उपलब्ध हैं। इन तकनीकों का प्रयोग अलग–अलग स्थितियों में अलग–अलग होता है। यह विभिन्नता सूचना संगठन के प्रकार श्रेणी अथवा सम्बद्ध उपयोगकर्ताओं के कारण होती है। इनमें से कई तकनीकें वैज्ञानिक प्रबन्धन पर आधोरित हैं। इनमें से कई तकनीकों के बारे में हम पूर्व में भी बता चुके हैं। मूल्यांकन प्रक्रिया में प्रयुक्त की जाने वाली कुछ तकनीकें निम्न हैं :–

(क) निष्पादन/प्रदर्शन मांप (Performance Measurement) :

इस तकनीक का प्रयोग यह जाँचने के लिए किया जाता है कि सूचना प्रणाली या सूचना सेवा किस सीमा तक निश्चित सिद्धान्तों की तुलना में कार्य कर रही है। सूचना सेवाएं किस तरह संचालित की जा रही हैं। कुछ निष्पादन मांप तकनीकें हैं, लागत–लाभ विश्लेषण, निर्णय विश्लेषण, सर्वेक्षण/निरीक्षण विधियाँ जैसे निरीक्षण, साक्षात्कार, प्रश्नावली आदि।

(ख) पुनर्प्राप्ति मांप/जाँच (Retrieval Measures) :

किसी भी सूचना पुनर्प्राप्ति की उपयोगिता/ प्रभावोत्पादकता की जाँच में दो बिन्दु महत्वपूर्ण होते हैं। ये दो मांप बिन्दु हैं : रिकाल (वापस बुलाना एवं प्रिसिज़न (परिशुद्धता/सूक्ष्मता)। रिकाल के द्वारा

इस तथ्य को परखा जाता है कि प्रणाली किसी प्रश्न के प्रत्युत्तर में अपने अन्दर निहित सूचनाओं में से कितनी सूचनाएं पुनर्प्राप्त कर लेती है। जब कि प्रिसिजन यह बताता है कि प्रणाली द्वारा उपलब्ध करायी गयी सूचनाओं में परिशुद्ध/सटीक कितनी है। खोज परिणाम में शुद्धता एवं लिये गये समय के आधार पर प्रणाली की उपयोगिता प्रमाणित होती है। .

(ग) सूचनाओं की गुणवत्ता :

सूचना प्रणाली द्वारा उपलब्ध करायी गयी सूचनाओं की गुणवत्ता भी उसके मूल्यांकन का आधार प्रस्तुत करती है। कुछ आधार निर्धारित कर गुणवत्ता की जाँच की जाती है। ये आधार किसी विशेष आवश्यकता पर निर्भर करते हैं। प्रलेख के प्रकार (जैसे प्रत्रिका लेख, समाचार पत्र की कतरन, सम्मेलन प्रतिवेदन आदि), तिथि के द्वारा, जैसे पिछले कुछ वर्षों में प्रकाशित प्रलेख, भाषा के द्वारा जैसे अंग्रेजी में प्रकाशित प्रलेख आदि के आधार पर सूचनाओं की गुणवत्ता की जांच की जा सकती है।

(घ) असफलता विश्लेषण :

प्रणाली की कमियों को खोजकर, इंगित कर उसमें सुधार के आवश्यक प्रयास किये जाते हैं। पुनर्प्राप्ति प्रणाली में नयी खोज कौशल के निर्माण के लिए यह विश्लेषण उपयोगी है।

(ङ.) निष्पादन मूल्यांकन (Performance Evaluation) :

इस मूल्यांकन के अन्तर्गत इस बात की जाँच की जाती है कि कोई सूचना प्रणाली या सूचना सेवा कितना अच्छा कार्य कर रही है। कुछ पूर्व निर्धारित मानदण्डों के आधार पर कार्य प्रणाली की कुशलता की जाँच करते हैं। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत पूर्व निर्धारित उद्देश्यों एवं मानकों के आधार पर प्रणाली द्वारा सम्पदित किये जा रहे कार्यों/सेवाओं का मूल्यांकन करते हैं।

निष्पादन मूल्यांकन के सही संचालन से अनेक महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। इसमें प्रणाली के सभी अवयवों/पक्षों के सेवाओं का अलग–अलग परीक्षण किया जाता है एवं सेवाओं का समग्र भाव से भी जाँच की जाती है।

विपणन शोध (Marketing Research) :

विपणन शोध का उद्देश्य बाजार की जाँच, पहचान एवं परख है। इसमें बाजार की जाँच, बाजार का स्वभाव, मूल्य सम्बन्धी शोध, विज्ञापन की उपयोगिता की जाँच एक पूरे विपणन समुदाय का अध्ययन सम्मिलित है।

विपणन शोध से हमें वर्तमान उपयोक्ताओं, सम्भावित उपयोक्ताओं एवं बाजार के विषय में अच्छी जानकारी रखने में सहायता मिलती है। इससे सामयिक उत्पादों एवं सेवाओं के मूल्यांकन में भी मदद मिलती है जिसके आधार पर ग्रन्थालय एवं सूचना सेवाओं में गुणात्मक परिवर्तन करना सम्भव होता है। बाजार के विषय में शोध करने के लिए हम प्रयोगात्मक, पर्यवेक्षण एवं निगरानी आदि स्वरूपों को अपना सकते हैं।

लागत उपयोगिता विश्लेषण :

कार्य/सेवा निष्पादन के स्तर एवं इस स्तर को प्राप्त करने में लगी लागत के बीच सम्बन्ध को लागत उपयोगिता कहते हैं। एक विशेष निष्पादन स्तर को प्राप्त करने के लिए अनेक विधियों का उपयोग किया जा सकता है। जो प्रणाली जितना अधिक लागत उपयोगिता सिद्ध करती है उतना ही कम खर्चीली अथवा लागत वाली मानी जाती है।

ग्रन्थालय एवं सूचना सेवा की लागत उसमें प्रयुक्त संसाधनों के परिप्रेक्ष्य में आंकी/मांपी जाती है। लागत के अन्तर्गत निश्चित लागत एवं परिवर्तनीय लागत, दोनों पर विचार किये जाने की आवश्यकता होती है। लागत–उपयोगिता विश्लेषण में प्रयुक्त संसाधनों के मुकाबले उपयोगिता को बढ़ाने का

यत्न किया जाता है। किसी ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के सेवा की लागत उपयोगिता निम्न तरीके से उन्नत की जा सकती है :–

1. प्रणाली की प्रचालन लागत को कम करते हुए वर्तमान निष्पादन स्तर को बनाये रखकर,
2. प्रणाली की प्रचालन लागत को स्थिर रखते हुए औसत कार्य निष्पादन स्तर को बढ़ाकर।

लागत उपयोगिता के अन्तर्गत हम निम्न पक्षों का मूल्यांकन करते हैं :–

(क) लागत

(ख) सार्थकता

(ग) लाभ

(घ) लागत–उपयोगिता

(ङ) लागत–लाभ

(च) लागत–कार्य निष्पादन–लाभ।

ग्रन्थालय एवं सूचना प्रबन्धन की दृष्टि से कार्य निष्पादन एवं लाभ का वित्त सम्बन्धी आकार महत्वपूर्ण होता है।

बिब्लियोमेट्रिक्स (Bibliometrics) :

बिब्लियोमेट्रिक्स के अन्तर्गत लेखक, प्रकाशन एवं साहित्य उपयोग आदि अध्ययन परम्पराओं का सांख्यिकीय विश्लेषण किया जाता है। विभिन्न आधारों पर साहित्य उपयोग की इस सांख्यिकीय विधि का प्रयोग ग्रन्थालयों एवं सूचना क्षेत्र में मूल्यांकन के लिए किया जा रहा है। इसकी अनेक तकनीकों की पहचान की गयी है जिनका प्रायोगिक उपयोग ग्रन्थालयों में किया जा रहा है। बिब्लियोमेट्रिक्स में प्रयुक्त विभिन्न तकनीकें, जिनका उपयोग ग्रन्थालयों में किया जा रहा है, निम्न हैं :–

(क) एक सामयिकी/पत्रिका एवं लेखक के विभिन्न लेखों, अलग–अलग जगह पर आये, के निर्धारण के लिए उद्धरण विश्लेषण का उपयोग।

(ख) किसी विशेष विषय के विभिन्न शोध क्षेत्रों की पहचान के लिए उद्धरण विश्लेषण का उपयोग।

(ग) प्रकाशित हो रहे प्रलेखों के संख्या के आधार पर किसी विषय क्षेत्र में हो रही प्रगति अथवा ह्रास की पहचान के लिए भी इस तकनीक का प्रयोग सम्भव है।

डेल्फी तकनीक (Delphi Technique) :–

यह तकनीक सूचना प्रबन्धकों के लिए अत्यन्त सहायक है। इससे प्रबन्धकों एवं निर्णयकर्ताओं को बेहतर भविष्यवाणी करने एवं सलाह में मदद मिलती है। डेल्फी तकनीक उस वार्तालाप को बढ़ावा देने का एक रास्ता है जिससे किसी भविष्यवाणी अथवा निर्णय की गुणवत्ता को उन्नत किये जाने की सम्भवना होती है।

इस तकनीक का प्रयोग प्रौद्योगिकी, शिक्षा एवं अन्य क्षेत्रों में भविष्यवाणी के लिए विस्तृत रूप से किया जा रहा है। इस तकनीक का प्रयोग एक मूल्यांकन तकनीक के रूप में भी किया जा सकता है।

3.9 सूचना प्रणालियों एवं सेवाओं का मूल्यांकन (Evaluation of Information Systems and Services)

किसी ग्रन्थालय सूचना केन्द्र की प्रणाली का विकास एवं उसका मूल्यांकन महत्वपूर्ण होते हैं। ग्रन्थालय अथवा सूचना प्रणाली के मूल्यांकन के लिए विभिन्न तकनीकों का प्रयोग होता है। ये

तकनीकें मूल्यांकन में व्यावहारिक तौर पर कितनी उपयोगी हैं, इसका अध्ययन आवश्यक है।

संग्रह मूल्यांकन :

किसी ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र का संग्रह सबसे महत्वपूर्ण पक्ष होता है। क्योंकि सारे ग्रन्थालय क्रियाकलापों एवं सेवाओं का आधार उसका संग्रह ही होता है। अतः संग्रह का मूल्यांकन अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। संग्रह के मूल्यांकन की तकनीकों में संग्रह में प्रलेखों की संख्या एक उपयोगकर्ता की दृष्टि से उनकी गुणवत्ता की जाँच महत्वपूर्ण है। संग्रह मूल्यांकन के महत्वपूर्ण अभिगम निम्न हैं:–

(क) मात्रात्मक :

- संग्रह के आकार के आधार पर,
- श्रेणीकरण की विभिन्न विधियों द्वारा संग्रह के आकार के आधार पर,
- आधुनिक विकास दर के आधार पर,
- संग्रह पर व्यय के द्वारा, इसमें प्रत्येक व्यक्ति व्यय एवं पूरे बजट के सन्दर्भ में संग्रह पर होने वाला व्यय सम्मिलित होता है।

(ख) गुणात्मक/गुणवत्तापरक :

उपयोग के विश्लेषण द्वारा संग्रह की गुणवत्ता की जाँच की जाती है :–

- संग्रह उपयोग का विश्लेषण
- परिचालन आँकड़े
- ग्रन्थालय के अन्दर उपयोग

पुनर्प्राप्ति प्रणालियों का मूल्यांकन (Evaluation of Retrieval Systems) :

सूचना प्रणाली में निहित सूचना, उपयोगकर्ता द्वारा मांगे जाने पर, उपयोग के लिए उपलब्ध कराना पुनर्प्राप्ति प्रणाली के अन्तर्गत आता है। पुनर्प्राप्ति में सूचना का सटीक होना अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इससे अत्यन्त कम समय में वांछित सूचना मिल जानी चाहिए तथा प्रणाली उपयोग में अत्यन्त सरल होनी चाहिए। किसी भी प्रकार के सूचना स्रोत के रूप में उपलब्ध सूचना प्राप्त किया जाना चाहिए।

पुनर्प्राप्ति प्रणालियों के मूल्यांकन में जिन तकनीकों का उपयोग होता है वे हैं :–

(क) गुणवत्ता मूल्यांकन तकनीक

(ख) विशिष्ट विषय अध्ययन

(ग) असफलता विश्लेषण आदि।

पुनर्प्राप्ति प्रणाली के मूल्यांकन में निम्न तथ्यों पर आधारित मूल्यांकन सम्मिलित है :–

1. वाङ्मयात्मक खोज प्रणालियों का मूल्यांकन,
2. मुद्रित अनुक्रमणिकाओं का मूल्यांकन,
3. डेटाबैंक का मूल्यांकन,
4. ग्रन्थालय सूची एवं ग्रन्थालय डेटाबेस का मूल्यांकन,
5. सूचना के चयनित प्रसारण प्रणाली का मूल्यांकन।

प्रलेख प्रदायक प्रणाली का मूल्यांकन :

सूचना प्रणालियों के अन्तर्गत प्रलेख प्रदायक प्रणाली का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इस प्रणाली का

सम्बन्ध ऐसी सेवा विधि से है जिसमें पुस्तक,पत्रिका, लेख आदि किसी रूप में उपलब्ध प्रलेख को उपयोगकर्ता के संज्ञान में लाया जाता है एवं उपलब्ध कराया जाता है, जिसकी उपलब्धता का ज्ञान पुनर्प्राप्ति प्रणाली से नहीं हो पाता है।

प्रलेख प्रदायक प्रणाली के मूल्यांकन में दो पक्षों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है :—

प्रथम प्रलेख की उपलब्धता, अर्थात् उपयोगकर्ता के स्थानीय ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र में क्या—क्या मिल सकता है।

द्वितीय वास्तविक रूप में प्रलेख को उपलब्ध कराना। इसके मूल्यांकन में असफलता विश्लेषण, उपलब्धता अध्ययन, प्रश्नावली, साक्षात्कार, सर्वेक्षण आदि तकनीकों का उपयोग किया जाता है।

सूचना सेवाओं का मूल्यांकन (Evaluation of Information Services):

सूचना सेवाओं के मूल्यांकन का अर्थ सेवाओं का सभी सम्भाव्य उपायों से परीक्षण एवं जाँच है जो उपयोगकर्ताओं को आवश्यकतों से सम्बन्धित हो। सूचना सेवाओं के मूल्यांकन में उपयागकर्ता केन्द्र में होता है अर्थात् उपयोगकर्ता एवं उसकी आवश्यकता को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। सूचना सेवाओं के मूल्यांकन में अनेक मानदण्डों का उपयोग किया जा सकता है। निम्न उपायों से सूचना सेवाओं का मूल्यांकन किया जा सकता है :—

1. कर्मचारियों का मूल्यांकन :

किसी सूचना सेवा में कर्मचारियों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। अतः सेवा का मूल्यांकन करते समय सर्वप्रथम ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र के कर्मचारियों के कार्य सम्पादन पर विचार किया जाना चाहिए। किसी सूचना सेवा में विशिष्ट कार्य सम्पादन के लिए व्यक्तिगत कर्मचारी के कार्य का मूल्यांकन किया जाता है।

2. सूचना सेवाओं का स्थूल—स्तरीय मूल्यांकन :

किसी संगठन अथवा ग्रन्थालय के कार्य सम्पादन का एक साथ समग्र रूप में मूल्यांकन स्थूल—स्तरीय मूल्यांकन कहलाता है। अधिकतर ग्रन्थालय/सूचना केन्द्रों में सम्पन्न की जा रही प्रत्येक सेवा का अलग—अलग मूल्यांकन नहीं किया जाता है, बल्कि इन्हें ग्रन्थालय/सूचना सेवा के समग्र स्तर पर ग्रन्थालय आँकड़े, ग्रन्थालय सर्वेक्षण आदि माध्यमों से मूल्यांकित किया जाता है।

3. उपयोगकर्ता अध्ययन (User Studies)

किसी सेवा का सर्वोत्तम मूल्यांकन उपयोगकर्ता के दृष्टिकोण से ही किया जा सकता है। चूँकि ये हमारी प्रणाली के केन्द्र बिन्दु के रूप में कार्य करते हैं। अतः सेवा के मूल्यांकन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। उपयोगकर्ता अध्ययन की अनेक तकनीकें प्रचलित हैं — निरीक्षण, साक्षात्कार, प्रश्नावली, डायरी विधि आदि।

4. प्रत्यक्ष मूल्यांकन (Direct Assessment) :

सेवा प्रदान करते समय उपयोगकर्ता से सीधे वार्तालाप द्वारा किसी सूचना सेवा का मूल्यांकन किया जाता है। उपयोगकर्ता समूह से उनकी सेवा सम्बन्धी प्रतिक्रिया प्राप्त कर सेवा की सफलता अथवा असफलता का निर्धारण किया जाता है।

5. अद्यतन जागरुकता सेवा का मूल्यांकन (Evaluation of Current Awareness Services)

सूचना सेवा के मूल्यांकन के अन्तर्गत अद्यतन जागरुकता सेवा का महत्वपूर्ण स्थान है

RIL-091

किसी सूचना सेवा के समग्र प्रक्रिया में इसकी भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। अतः मूल्यांकन करते समय अद्यतन जागरुकता सेवा पर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता होती है। यह सेवा अत्यन्त व्यक्तिगत सेवा होती है जिसमें किसी विशिष्ट पाठक के आवश्यकता के प्रत्येक पक्ष को ध्यान में रखा जाता है। लागत–उपयोगिता एवं प्रक्रिया या प्रणाली विश्लेषण आदि तकनीक इसके लिए उपयोग में लायी जाती है।

3.10 निष्कर्ष

इस इकाई में आपको किसी ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र मे मूल्याकन के लिए प्रयुक्त विभिन्न तकनीकों के बारे में बताया गया। ग्रन्थालय अनेक प्रकार की सेवा प्रदान करते हैं। अतः उनके मूल्यांकन के लिए किसी एक तथ्य को मूल्यांकन का आधार नहीं बनाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि मूल्यांकन के लिए अनेक तथ्यों को आधार बनाया जाय।

इस सम्बन्ध में कोई ऐसी तकनीक विकसित किये जाने की आवश्यकता है जो प्रत्येक ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र की सभी सेवाओं का मूल्यांकन कर सके। आवश्यकता ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र की प्रकृति के अनुरुप वर्तमान मूल्यांकन मानदण्डों में सुधार की आवश्यकता है।

ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र के मूल्यांकन से ग्रन्थालय प्रबन्धकों को सूचना संगठन के दीर्घ अवधि के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता मिलती है। यह उपयोगकर्ता को संतुष्ट करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं।

RIL-091

इकाई 4 : मानव संसाधन विकास
HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT

संरचना :

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 मानव संसाधन

4.3 मानव संसाधन विकास

4.4 मानव संसाधन विकास प्रणाली

4.5 मानव संसाधन विकास एवं भारतीय ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र

4.6 निष्कर्ष

4.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

(i) मानव संसाधन का तात्पर्य एवं महत्व बताना

(ii) प्रबन्धन प्रणाली में मानव संसाधन विकास की भूमिका से अवगत कराना

(iii) मानव संसाधन के विकास के विभिन्न पक्षों की चर्चा करना

(iv) मानव संसाधन विकास प्रणाली का ज्ञान कराना

(v) ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में मानव संसाधन विकास की भूमिका से अवगत करांना है।

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी संगठन/संस्था में मूल रूप से तीन संसाधन सम्मिलित होते हैं : कर्मचारी, सामग्री एवं विधि /तकनीक। संस्था के संचालन में ये तीनों वस्तुएं आवश्यक होती हैं। संचालन एवं विकास के लिए आवश्यक संसाधनों में मानव संसाधन सबसे महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है। संगठन अथवा संस्था की सफलता वहाँ के कर्मचारियों पर निर्भर करती है। मानव संसाधन अन्य संसाधनों के प्रभावी उपयोग को सुनिश्चित करता है। कुशल कर्मठ कर्मचारियों के अभाव में संस्था में एक उत्तम वातावरण का विकास करना सम्भव नहीं है।

अन्य संगठन/संस्था की तरह ग्रन्थालय के संचालन एवं विकास के लिए कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है। ग्रन्थालय में तीन आवश्यक तत्त्व सम्मिलित होते हैं—कर्मचारी, प्रलेख एवं उपयोक्ता। इन तीन तत्त्वों में कर्मचारियों का सर्वाधिक महत्व है। अत: कर्मचारियों का उपर्युक्त प्रबन्धन एवं विकास महत्वपूर्ण हो गया है। आधुनिक प्रबन्धन ने इसे एक नये विचार के रूप में गम्भीरता से अध्ययन करना प्रारम्भ किया है ताकि विभिन्न नई तकनीकों एवं विधियों के माध्यम से मानव संसाधन का सर्वोतम

RIL-091

4.2 मानव संसाधन

कर्मचारी अथवा मानव संसाधन किसी संगठन या संस्था का सबसे महत्वपूर्ण एवं आवश्यक तत्त्व है। कर्मचारी से अर्थ कार्य करने वाले व्यक्तियों से होता है। किसी ग्रन्थालय में कर्मचारियों का व्यवस्थापन करना ही कर्मचारी प्रबन्धन कहलाता है। किसी भी प्रबन्धन का सबसे उपयोगी पक्ष उसका कर्मचारी होता है। संगठन के उद्देश्य के प्रति कर्मचारी का समर्पण प्राप्त करना ही सफलता का द्योतक है। कर्मचारियों का विश्वास प्राप्त करने के लिए प्रबन्धन की ओर से यथेष्ठ प्रयास किये जाने चाहिए। स्वाभाविक है कि प्रबन्धन एवं कर्मचारी के बीच अत्यन्त मधुर एवं विश्वास का सम्बन्ध होना चाहिए।

औद्योगिक क्रान्ति के पूर्व प्रबन्धन का क्षेत्र सीमित था औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप प्रबन्धन का क्षेत्र विस्तृत होता गया इसके अन्तर्गत मजदूर, मिस्त्री, कारीगर आदि से आगे विभिन्न प्रकार के कर्मचारी सम्मिलित हो गए इनमें पूर्ण प्रशिक्षित एवं अपने कार्य सम्पादन में तकनीकी रूप से कुशल कर्मचारियों की संख्या अधिक हो गयी है। कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कारक थे जिनसे मानव संसाधन अथवा कर्मचारियों का विकास महत्वपूर्ण हो गया। ये कारक थे :

- उद्योगों/उपक्रमों अथवा संगठनों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि
- प्रौद्योगिकी में महत्वपूर्ण परिवर्तन
- विभिन्न व्यावसायिक एवं मजदूर संगठनों की स्थापना
- कर्मचारियों के कल्याण कार्यों में शासन का झुकाव/दबाव आदि।

उपरोक्त परिस्थितियों में कर्मचारियों एवं प्रबन्धन के बीच सामंजस्य एवं सहयोग के लिए यह आवश्यक हो गया कि कर्मचारियों के विकास के लिए विभिन्न उपाय अपनाये जाएं, जिससे कर्मचारियों का व्यक्तिगत हित एवं संस्था का अपना उद्देश्य दोनों सम्भव हो।

4.3 मानव संसाधन विकास

मानव संसाधन विकास कर्मचारी प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक पक्ष है। मानव संसाधन विकास का तात्पर्य कर्मचारियों के सहयोग की ऐसी प्रक्रिया से है जिससे उपक्रम/संगठन का कर्मचारी अधिकतम योग्यता एवं क्षमता प्राप्त करता है। कर्मचारी प्रबन्धन के दो मुख्य पक्ष हो सकते हैं :

(क) मानव संसाधन विकास

(ख) कर्मचारी/मानव संसाधन नियोजन।

सफल कर्मचारी प्रबन्धन के लिए मानव संसाधनों के विकास की प्रक्रिया अपनाना आवश्यक है। यद्यपि मानव संसाधनों का उचित नियोजन भी कम महत्वपूर्ण नहीं है।

मानव संसाधन के विकास की यह प्रक्रिया नियोजित ढंग से अनवरत चलायी जानी चाहिए। प्रबन्धन द्वारा कर्मचारियों को दिया जाने वाला सहयोग बहुआयामी होता है।

आवश्यकता एवं उद्देश्य :

औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप उद्योगों एवं उपक्रमों की स्थापना में अत्यधिक वृद्धि हुई। इन उद्योगों/संगठनों के संचालन के लिए आवश्यक संसाधनों में मानव संसाधन सबसे महत्वपूर्ण प्रमाणित

हुआ। प्रयुक्त प्रौद्योगिकी में परिवर्तन एवं विकास होते गये। स्वाभाविक था कि इन संगठन/उपक्रम से सम्बद्ध कर्मचारियों के ज्ञान एवं दक्षता को उन्नत करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। साथ ही संगठन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के प्रति उनका समर्पण व्यक्तिगत भागीदारी के रूप में सामने आया।

संगठन अथवा उपक्रम में सम्मिलित प्रत्येक कर्मचारी को उसकी योग्यता के अनुसार विकास के अवसर मिलने चाहिए। कर्मचारी प्रबन्धन की सफलता का आधार व्यक्ति विशेष की संतुष्टि है। किसी भी कर्मचारी की संतुष्टि हेतु उसकी इच्छाओं का पूर्ण होना आवश्यक होता है। मानव संसाधनों के विकास के कार्यक्रमों बिना यह सम्भव नहीं है।

कर्मचारियों के विकास एवं कल्याण से सम्बन्धित योजनाओं एवं कार्यक्रमों में सरकार की रुचि एवं संगठित हो रहे कर्मचारियों/श्रमिकों के समूहों ने भी कर्मचारी/मानव संसाधन विकास को आवश्यक बना दिया।

प्रत्येक प्रकार के संगठन के लिए मानव संसाधन विकास की आवश्यकता निम्न कारणों से है :–

(क) उत्पादों एवं सेवाओं में उच्च गुणवत्ता के लिए;

(ख) उन्नति एवं विकास के लिए ;

(ग) परिवर्तनों के लिए ;

(घ) स्थिरता के लिए ;

(ङ) अपने क्षेत्र में अपनी भूमिका को महत्वपूर्ण बनाने के लिए ;

(च) उपभोक्ता संतुष्टि के माध्यम से साख एवं सम्मान पाने के लिए।

किसी भी संगठन को अपने लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति में उसके कर्मचारियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सभी संगठन एवं उपक्रम यह चाहते हैं कि औद्योगिक क्षेत्र में उनकी अपनी साख एवं महत्ता हो। यह साख व सम्मान तभी प्राप्त हो सकता है जब वहाँ के उत्पाद एवं सेवाएं उच्च गुणवत्ता युक्त हों तथा उपभोक्ता पूरी तरह सन्तुष्ट हो। उच्च गुणवत्ता के उत्पाद एवं सेवाओं के लिए वहाँ के कर्मचारियों का कुशल एवं योग्य होना आवश्यक है। प्रबन्धन अपने इन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति के क्रम में मानव संसाधन विकास अपनाते हैं।

कर्मचारियों की क्षमताओं एवं योग्यताओं के विकास का मुख्य उद्देश्य प्रबन्धन द्वारा संगठन/संस्था के लक्ष्यों को प्राप्त करना होता है। मानव संसाधन के विकास के द्वारा उनका व्यक्तिगत विकास होता है एवं उनकी कार्य क्षमता में बढ़ोत्तरी होती है जो लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होती है। संक्षेप में मानव संसाधन विकास द्वारा निम्न उद्देश्यों को प्राप्त करना है :–

(1) कर्मचारियों में विभिन्न कार्यों के सम्पादन के लिए वांछित योग्यता एवं क्षमता विकसित करना, यह क्षमता उनके वर्तमान कार्य एवं भावी भूमिका में महत्वपूर्ण हो सकती है ;

(2) उनकी सामान्य क्षमताओं का विकास एवं उनकी आन्तरिक शक्ति अथवा सामर्थ्य को उनके स्वयं के लिए तथा संगठन के विकास के उद्देश्य से उपयोग करना ;

(3) संगठन में कार्य संस्कृति का विकास करना

(4) सहयोग एवं समन्वय (व्यक्तिगत एवं संगठनात्मक) का वातावरण तैयार करना ;

(5) प्रबन्धन एवं कर्मचारियों के बीच मधुर सम्बन्ध विकसित करना।

(6) प्रशिक्षण, कार्य प्रशंसा, उचित पुरस्कार, क्षमता विकास, कार्य परिवर्तन, प्रोत्साहन आदि सुविधा प्रदान करना।

RIL-091

4.4 मानव संसाधन विकास प्रणाली

किसी भी संगठन/संस्था की सफलता काफी सीमा तक उसके कुशल एवं कर्मठ कर्मचारियों पर निर्भर करती है। उसे अपनी योजना को क्रियान्वित करने के लिए कर्मचारियों की अत्यन्त आवश्यकता पड़ती है। हम कह सकते हैं कि कर्मचारी अथवा मानव संसाधन संगठन के सभी संसाधनों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। बिना मानव संसाधन के विभिन्न संसाधनों का उपयोग लक्ष्य प्राप्ति के लिए, नहीं किया जा सकता है। इसलिए मानव संसाधन विकास प्रणाली को अच्छी तरह विकसित किया जाना चाहिए। निम्न रेखाचित्र में मानव संसाधन विकास की उप–प्रणालियों/उपकरणों, का सम्बन्धित विभिन्न प्रक्रियाओं, परिणामों का अन्तर्सम्बन्ध प्रदर्शित किया गया है।

क्र. सं.	तकनीक/उपकरण	प्रक्रिया	परिणाम	संगठनात्मक प्रभावशालिता
I.	2.	3.	4.	5.
I.	मानव संसाधन विकास विभाग	कार्मिकों की भूमिका में स्पष्टता	अधिक सक्षम	उच्च उत्पादकता
II.	निष्पाद मूल्यांकन	प्रत्येक कर्मचारी के विकास की योजना	अधिक विकसित भूमिका	विकास
III.	समीक्षा वार्तालाप प्रतिसूचना	कार्य सम्पादन के लिए योग्यता सम्बन्धी जागरुकता	उच्च क्षमता वाले कार्यों का सम्पादन	लागत कमी
IV.	भूमिका विश्लेषण अभ्यास	अनुकूलन	समस्याओं का अधिक समाधान	अधिक लाभ
V.	क्षमता विकास अभ्यास	अधिक विश्वास	मानव संसाधन का बेहतर उपयोग	लक्ष्य प्राप्ति आसान
VI.	प्रशिक्षण नीति	सहयोग एवं समूह कार्य	उच्च कार्य संतुष्टि एवं	अच्छी साख
VII	संचार नीति	आधिकारिक प्रक्रिया	आन्तरिक संसाधनों का बेहतर उत्पादन	अनुकूल वातावरण
VIII.	पुरस्कार	महत्व का रेखांकन या पहचान		

उपर्युक्त चार्ट यह प्रदर्शित करता है कि मानव संसाधन विकास के किस तकनीक/उप प्रणाली/उपकरण से क्या प्रभाव अथवा परिणाम प्राप्त होता है एवं इस परिणाम का संगठन के स्तर पर क्या प्रभाव होता है। प्रत्येक उपकरण से सम्बन्धित प्रक्रिया भी तालिका में दी गयी है। यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि संगठन की सफलता अनेक तथ्यों/विशेषताओं पर निर्भर करती है। ये तथ्य हैं: वातावरण, प्रौद्योगिकी, शीर्षस्थ प्रबन्धन की कार्य-प्रणाली एवं अन्य स्तरीय प्रबन्धकों की भागीदारी एवं गहरा जुड़ाव आदि।

ऐसे संगठन/उपक्रम जिन्होंने मानव संसाधन विकास कार्यक्रम विधिवत अपना रखा है एवं जिनके कर्मचारी प्रशिक्षित, योग्य, समर्पित, संतुष्ट होंगे, निश्चित रूप से उन संगठनों की तुलना में बेहतर परिणाम देंगे जिनमें पास न तो कर्मचारी कल्याण योजना है न तो योग्य कर्मचारी। हम कह सकते हैं,

RIL-091

संगठन को अपनी बेहतर साख उच्च गुणवत्ता, उच्च उत्पादकता आदि लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए मानव संसाधन विकास एक महत्वपूर्ण उपकरण है।

प्रक्रिया के रूप में मानव संसाधन विकास :

मानव संसाधन विकास एक ऐसी महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसे संस्थान/संगठन में हित के अनवरत चलाये रखना चाहिए। इसे उपकरणों, तकनीकों का एक समूह बताना पर्याप्त नहीं है। यह उपकरण एवं तकनीक में साथ-साथ एक प्रक्रिया भी है। प्रशिक्षण, कार्य सम्पादन की प्रशंसा, परामर्श आदि प्रविधियाँ एवं तकनीकें प्रक्रिया को उन्नत करने एवं सुविधाजनक ढंग से सम्पन्न करने के लिए ही होती है। इन प्रविधियों, उपकरणों एवं तकनीकों की समय-समय पर उनकी प्रभावशालिता एवं सक्षमता की जाँच की जाती है। ताकि समयानुकूल उनमें संशोधन अथवा परिवर्तन किया जा सके। निकास की इस प्रक्रिया को योजना बनाकर, उनके लिए संसाधनों का आवंटन कर एवं मानव संसाधन को बहुमूल्य प्रमाणित करने वाले सिद्धान्तों को अपनाकर संगठनों/संस्थाओं द्वारा संचालित किया जा सकता है।

मानव संसाधन विकास का विचार निम्न तीन मौलिक तथ्यों से प्रभावित है :–

(क) संगठन/संस्था में कार्य करने वाला व्यक्ति बहुमूल्य संसाधन होता है इसलिए उनके विकास के लिए प्रयत्न किया जाना चाहिए।

(ख) मानव संसाधन की विशिष्ट विशेषताएं होती हैं जो उन्हें अन्य संसाधनों से अलग करती है। अतः उन्हें कर्मचारियों के साथ वह व्यवहार सम्भव नहीं है जो अन्य संसाधनों के साथ किया जाता है।

(ग) मानव संसाधन के साथ सम्बन्ध मात्र व्यक्तिगत कर्मचारी तक सीमित नहीं होता बल्कि संगठन के अन्य मानव इकाइयों एवं प्रक्रियाओं को समाहित करता है।

मानव संसाधन विकास के प्रति मानव अभिगम निम्न प्रकार होता है :–

(1) **व्यक्तिगत कर्मचारी**– स्व प्रबन्धन, क्षमता निर्माण, नवीनता

(2) **भूमिका** – अधिकतम दबाव, सम्बन्ध, स्वतन्त्रता

(3) **कर्मचारी**– शीर्ष प्रबन्धन सम्बन्ध-विश्वास, पारस्परिकता, संचार

(4) **समूह/दल** – सामंजस्य, संसाधन उपयोगिता

(5) **आन्तरिक दल** – पहचान, सहयोग

(6) **संगठन** – विकास, प्रभाव स्व-नवीनीकरण।

उपर्युक्त विचार/तथ्य मानव संसाधन विकास प्रणालियों जैसे समीक्षा, पेशा, प्रशिक्षण, कार्य संस्कृति, स्व-नवीनीकरण प्रणालियों पर अध्यारोपित किये जाते हैं। इन प्रणालियों एवं विचारों का विवरण निम्न हैं :–

व्यक्तिगत कर्मचारी :

मानव संसाधन विकास कर्मचारी के व्यक्तिगत विकास पर बल देता है। अलग–अलग कर्मचारी की क्षमता का विकास कर सम्मिलित रूप से उनकी अधिकतम कार्य क्षमताओं का संगठन के विकास एवं उन्नति के लिए उपयोग किया जाता है। व्यक्तिगत विकास में इन तीन पक्षों स्व–प्रबन्धन, क्षमता निर्माण एवं नवीनता/आधुनिकता का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

RIL-091

भूमिका :

किसी संगठन में कर्मचारी द्वारा धारित पद उसकी भूमिका को इंगित करता है। पद के अनुसार अलग-अलग व्यक्तियों की भिन्न-भिन्न भूमिका निर्धारित होती है। अलग-अलग कर्मचारी की भूमिका का स्वतन्त्र परीक्षण होना चाहिए।

भूमिका में तीन पक्ष सम्मिलित होते हैं : अधिकतम कार्य दबाव, सम्बन्ध एवं स्वतन्त्रता। अधिकतम कार्य दबाव का तात्पर्य किसी व्यक्ति को उसकी अधिकतम कार्य क्षमता के स्तर तक पहुचाने के लिए विकसित करना है। सम्बन्ध का तात्पर्य विमिन व्यक्तिगत कर्मचारियों के बीच, दल के बीच, विभाग के अन्दर अथवा बाहर सम्बन्धों से है। यहाँ स्वतन्त्रता किसी कर्मचारी को नयी परिस्थितियों में अपने विचार रखने एवं समस्याओं के समाधान में व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से कार्य करने के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए।

कर्मचारी-प्रबन्धन सम्बन्ध :

नियोजक एवं कर्मचारी का सम्बन्ध किसी संगठन के संघटनात्मक ढाँचे का मूल आधार होता है। उनमें आपस में मालिक कर्मचारी का सम्बन्ध न होकर, पर्यवेक्षक-कर्मचारी का सम्बन्ध विकसित किया जाना चाहिए। विश्वास, पारस्परिकता एवं संचार इस सम्बन्ध के मूल तत्त्व हैं।

दल :

समूह अथवा दल कार्य ही किसी संगठन को सफल बना सकता है। समूह कार्य को प्रभावित करने वाले कारक हैं : सामंजस्य, संसाधन उपयोगिता। इनके अभाव में टीम वर्क का विकास नहीं किया जा सकता है।

आन्तरिक दल :

संगठन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न दलों/समूहों में, जैसे एक विभाग के विभिन्न दलों के बीच, विभिन्न विभागों के बीच एवं विभिन्न विभागीय दलों का उच्च विभागों के साथ सम्बन्ध आवश्यक है।

संगठन :

किसी संगठन को, वातावरण में हो रहे परिवर्तनों के प्रति जागरुक रहना चाहिए। प्रौद्योगिकी परिवर्तन, उत्पादों एवं सेवाओं में विविधता सम्बन्धी परिवर्तनों को अंगीकार से ही सफलता पायी जा सकती है। विकास, परिवर्तन एवं नवीनीकरण तथ्यों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

मूल्यांकन/समीक्षा प्रणाली :

मूल्यांकन प्रणाली में तीन मुख्य पक्ष सम्मिलित होते हैं : कार्य निष्पादन, क्षमता एवं कार्य निष्पादन प्रशिक्षण। प्रायः कार्य निष्पादन प्रणाली का उपयोग व्यक्तिगत कर्मचारी एवं दल के निष्पादन कार्यों की जाँच अथवा समीक्षा के लिए किया जाता है।

व्यवसाय :

व्यवसाय प्रणाली का सम्बन्ध व्यक्तिगत कर्मचारी के व्यावसायिक विकास से है। इसके मुख्य पक्ष हैं : व्यावसायिक विकास योजना, व्यावसायिक नियोजन एवं परिवीक्षण। व्यावसायिक प्रणाली के अन्तर्गत इन पक्षों का विकास किया जाता है।

प्रशिक्षण प्रणाली :

कर्मचारी का ज्ञान एवं दक्षता बढ़ाने की यह एक श्रेष्ठ तकनीक है। अधिकतर संगठनों/संस्थानों में कर्मचारियों की कार्य कुशलता बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण दिये जाते हैं पहला संगठन के अन्तर्गत प्रशिक्षित कार्मिकों द्वारा दूसरा संगठन के बाहर विभिन्न व्यावसायिक निकायों अथवा संस्थाओं

RIL-091

द्वारा। प्रशिक्षण के उपरान्त प्रशिक्षित कर्मचारियों को मूल्यांकन करने के बाद उन्हें उपयुक्त कार्यों में लगाया जाना चाहिए, जिससे प्राप्त प्रशिक्षण का लाभ उठाया जा सके।

कार्य प्रणाली :

कार्य प्रणाली का सम्बन्ध विभिन्न स्तर के कार्यों एवं उनके सम्बद्ध पक्षों से है। प्रणाली के अन्तर्गत प्रत्येक स्तर जैसे प्रबन्धकीय, प्रक्रिया पर कार्यों का परीक्षण किया जाना चाहिए। इसके अन्तर्गत कार्य विश्लेषण, कार्य की गुणवत्ता, उत्पाद एवं सेवाओं की गुणवत्ता आदि सम्मिलित किये जाते हैं।

कार्य संस्कृति :

किसी संगठन की सफलता के लिए कार्य संस्कृति का विकास अत्यन्त आवश्यक है। यदि संगठन के सभी वर्गों के कर्मचारियों के मध्य उचित बिचार विनिमय के अवसर हो एवं अच्छे कार्यों के लिए लोगों की पहचान की जाती हो, तो वहाँ कार्य संस्कृति का वातावरण बनाना अत्यन्त आसान हो जाता है। व्यक्तिगत एवं सामूहिक पुरस्कार तथा प्रोत्साहन आदि अनेक पक्ष ऐसे हैं जिनको अपनाकर संगठन के लिए उपयुक्त कार्य वातावरण का निर्माण किया जा सकता है।

यह महत्वपूर्ण है कि मानव संसाधन विकास से सम्बन्धित प्रणालियों, उपकरणों एवं तकनीकों की समय-समय पर समीक्षा की जाय जिससे उनमें समयानुकूल परिवर्तन किये जा सकें। संगठन के उन्नयन एवं समृद्धि के लिए इनका परिवर्धन पक्षों से सम्बन्धित आँकड़े प्राप्त एवं विश्लेषित किये जा सकते हैं जिनका उपयोग व्यक्तिगत कर्मचारी एवं संगठन दोनों के उन्नयन एवं विकास के लिए किया जा सकता है।

4.5 मानव संसाधन विकास एवं भारतीय ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र

भारत में अधिकतर ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र किसी संगठन अथवा संस्था के एक अंग के रूप में कार्य करते हैं एवं वह संगठन/संस्था ही कर्मचारियों से सम्बन्धित सभी कार्य देखती है। ऐसे में स्वाभाविक है कि ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों का मानव संसाधन के विकास सम्बन्धी योजनाओं से कोई लेना-देना नहीं होता है। शायद ही देश में कोई ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र ऐसा होगा जहाँ मानव संसाधन विकास, पूर्व में उल्लिखित, का प्रत्यक्ष प्रभाव दृष्टिगोचर हो।

संगठन के अन्तर्गत गठित प्रशासनिक विभाग ही कर्मचारियों से सम्बन्धित वेतन, भत्ते, प्रोन्नति, अनुशासन, प्रशिक्षण, कार्य प्रशंसा आदि कार्यों को देखता है। प्रायः देखा जाता है कि व्यवहार में कुछ ही मानव संसाधन विकास की योजनाएं लागू होती हैं, वो भी एक विशेष स्तर तक के कर्मचारियों के लिए उपयोगी होती हैं। निम्न श्रेणी के कार्मिकों को इनका कम ही लाभ मिल पाता है। किसी भी ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र में वर्तमान में मात्र कर्मचारियों के कल्याण से सम्बन्धित कोई विभाग स्थापित नहीं दिखता। बहुत ही कम संगठन एवं संस्थाएं हैं जहाँ वास्तविक अर्थों में कर्मचारी विकास की योजना प्रतिपादित सिद्धान्तों के अनुरूप कार्यान्वित हो रही है।

वर्तमान समय में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं। उनके संग्रह एवं सेवाविधियों में काफी अन्तर आ गया है। ग्रन्थालय क्षेत्र में कम्प्यूटर के अनुप्रयोग ने क्रियाकलापों, उपयोक्ताओं, सेवाओं के स्वरूप में काफी परिवर्तन ला दिया है एवं ग्रन्थालयों की भूमिका का क्षेत्र विस्तृत हो गया है। ग्रन्थालय प्रबन्धन से जुड़े लोगों से सामान्य लोगों की अपेक्षाएं बढ़ गयी हैं। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के प्रबन्धन से जुड़े लोगों के लिए कम्प्यूटर के उपयोग का ज्ञान, विभिन्न इलेक्ट्रानिक प्रलेख स्रोतों का ज्ञान, इण्टरनेट पर खोज प्रक्रिया सम्बन्धी ज्ञान आवश्यक हो गया है। ऐसी बदली हुई परिस्थितियों एवं परिवर्धित भूमिका के परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक हो गया है कि उनके विकास पर पूरा ध्यान दिया जाय। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के कर्मचारियों का व्यक्तिगत विकास करके ही वांछित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

RIL-091

मानव संसाधन विकास कार्यक्रम के कुछ पक्ष ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों को अपना लक्ष्य प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। सम्बन्धित पक्ष निम्नलिखित हैं :–

(1) कर्मचारी नियोजन

(2) उपयोक्ता संतुष्टि

(3) अभिप्रेरणा

(4) उत्पाद एवं सेवाओं की गुणवत्ता

(5) विकास सम्बन्धी निरीक्षण

(6) ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों से परिचय

(7) नये ज्ञान एवं दक्षता की प्राप्ति

(8) कार्मिकों के उचित नियोजन के लिए कार्य विश्लेषण

(9) निष्पादन समीक्षा।

व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण से जुड़े संस्थाओं को भी मानव संसाधन विकास के क्षेत्र के शोध में अपना योगदान देना चाहिए। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में समय की मांग के अनुरूप विभिन्न क्षमता के कर्मचारियों की आवश्यकता सम्बन्धी अध्ययन के लिए योजनाएं बनायी जानी चाहिए। कर्मचारियों की आवश्यकता सम्बन्धी अध्ययन में वर्तमान के साथ-साथ भविष्य की आवश्यकताओं एवं गतिविधियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए। विभिन अभिप्रेरणा सम्बन्धी कार्यक्रमों के माध्यम से ग्रन्थालय व्यवसाय में गुणवत्तापरक सूचना प्रणालियों एवं सेवाओं तथा उच्चता की प्राप्ति को सम्मिलित कियां जाना चाहिए।

4.6 निष्कर्ष

मानव संसाधन विकास कर्मचारी प्रबन्धन का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है। संगठन में विविध कार्यों के निष्पादन के लिए कर्मचारी रूपी संसाधन ही उत्तरदायी होते हैं। इनके अभाव में किसी संगठन/संस्थान के संचालन की कल्पना नहीं की जा सकती है।

किसी संगठन के लिएं अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मानव संसाधन विकास आवश्यक होता है। इसमें अनेक विधियाँ एवं तकनीकें सम्मिलित होती हैं। इन्हें विभिन्न उप प्रणालियों, उपकरणों एवं तकनीकों से संगठित किया जाता है। अनेकानेक माध्यमों से कर्मचारी की योग्यता एवं क्षमता का विकास इसका मूल उद्देश्य है। मानव संसाधन विकास योजनाओं के माध्यम से कर्मचारी का व्यक्तिगत विकास एवं संगठनात्मक विकास दोनों सुनिश्चित करने का प्रयत्न किया जाता है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के सन्दर्भ में मानव संसाधन विकास के कुछ पक्ष जैसे–कर्मचारी नियोजन, संतुष्टि, अभिप्रेरणा, सेवाओं की गुणवत्ता, कार्य सम्पादन समीक्षा आदि महत्वपूर्ण एवं उपयोगी प्रतीत होते हैं।

RIL-091

इकाई 5 : कार्मिक नियोजन
PERSONNEL PLANNING

संरचना :

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 कार्मिक संसाधन नियोजन

5.3 कार्मिक नियोजन प्रक्रिया

5.4 बदलता परिदृश्य एवं दृष्टिकोण

5.5 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में कार्मिक नियोजन

5.6 निष्कर्ष

5.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको–

- कार्मिक नियोजन की आवश्यकता एवं उद्देश्य बताना,
- कार्मिक नियोजन के विभिन्न पक्षों से अवगत कराना,
- नियोजन के कार्य एवं क्षेत्र को दर्शाना,
- ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के परिप्रेक्ष्य में कार्मिक नियोजन की जानकारी प्रदान करना है।

5.1 प्रस्तावना

कार्मिक प्रबन्धन के क्षेत्र अत्यन्त व्यापक एवं महत्वपूर्ण हैं। कर्मचारियों का संगठन के हित के लिए उचित समायोजन एवं नियोजन ही कार्मिक नियोजन है। मानव संसाधन अथवा कर्मचारी किसी भी संगठन/संस्था की सफलता या असफलता उसके कर्मचारियों की योग्यता, निष्ठा एवं कर्मठता पर निर्भर करती है। सफलता प्राप्त करने के लिए कार्मिक का प्रबन्धन एक कठिन कार्य है। कार्मिक प्रबन्धन विज्ञान की वह शाखा है, जिसमें व्यक्तियों के अनुप्रयोग का समुचित अध्ययन किया जाता है। इसके अन्तर्गत संगठन/उपक्रम को सुचारु रूप से चलाने के लिए कर्मचारियों की ऐसी व्यवस्था की जाती है जिससे कर्मचारियों की शक्ति का दुरुपयोग न होकर अधिक से अधिक उत्पादन अथवा सेवा कार्य किया जा सके।

कार्मिक नियोजन एवं मानव संसाधन विकास प्रबन्धन के दो महत्वपूर्ण कार्य क्षेत्र हैं। इसके पूर्व इकाई 4 में हम मानव संसाधन विकास का अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में प्रबन्धन के द्वितीय

महत्वपूर्ण क्षेत्र कार्मिक नियोजन के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। बिना कार्मिक नियोजन के प्रबन्धन के क्षेत्र में वांछित सफलता नहीं प्राप्त की जा सकती है। किसी भी प्रबन्धक को संगठन को सुचारु रूप से संचालित करने के लिए कार्मिक नियोजन के विभिन्न अवयवों, कार्यान्वयन विधियों एवं तकनीकों का ज्ञान आवश्यक है। इस इकाई में कार्मिक नियोजन के विभिन्न पक्षों की चर्चा प्रबन्धन की दृष्टि से की गयी है।

5.2 कार्मिक नियोजन

कार्मिक नियोजन का तात्पर्य कर्मचारियों अथवा मानव संसाधनों का संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु उचित व्यवस्थापन से है। एक प्रबन्धक का महत्वपूर्ण कार्य मानव संसाधनों का नियोजन होता है। यह प्रबन्धन की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त मानव संसाधनों को उपलब्ध कराने में सहायता करती है, इसमें वर्तमान एवं भविष्य में होने वाली कार्मिक आवश्यकता को ध्यान में रखा जाता है।

यह कार्मिक प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण घटक है। जिसके अन्तर्गत कार्मिक प्रबन्धक को वर्तमान के साथ–साथ मानव संसाधनों की स्थिति का ज्ञान हो जाता है। यह स्थिति निम्न प्रकार हो सकती है:–

(क) क्या मानव संसाधनों की संख्या घटेगी ?

(ख) क्या यह संख्या बढ़ेगी ?

(ग) क्या यह संख्या यथावत रहेगी ?

(घ) क्या उपलब्ध कार्मिकों को कोई नवीन शिक्षण या प्रशिक्षण देने की आवश्यकता होगी ?

विभिन्न प्रकार के संगठनों/उपक्रमों में वर्तमान अथवा भविष्य में होने वाली कार्मिकों की आवश्यकता का निर्धारण किया जाता है, इन आवश्यकताओं की तुलना वर्तमान मानव संसाधन से करके चयन किये जाने वाले कर्मचारियों की संख्या एवं उनके प्रकार का निश्चय किया जाता है।

कार्मिक नियोजन में उपयुक्त व्यक्तियों की भर्ती एवं चयन संगठन के बाहर अभ्यर्थियों में से अथवा संगठन के योग्य एवं कर्मठ कर्मियों में से की जा सकती है एवं संगठन के हित में उनके बेहतर उपयोग के लिए संगठनात्मक ढाँचे में उपयुक्त पदों पर नियुक्त किया जाता है। वर्तमान कार्मिकों में सर्वोत्तम का चयन करते समय संगठन को कर्मचारियों के हित की रक्षा की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी वहन करनी पड़ती है।

कार्मिक नियोजन की आवश्यकता एवं उद्देश्य :

कार्मिक नियोजन एक ऐसी विश्लेषणात्मक क्रियाकलाप है जो किसी संस्था को जो अपना लक्ष्य प्राप्त करना चाहती है, के मानव संसाधनों को उनके चयन, कार्य विभाजन, उपयोग एवं विकास करके गतिशील बनाने के लिए निर्देशित करता है। मानव संसाधनों की आवश्यकता के उचित ज्ञान के लिए कार्मिक नियोजन आवश्यक है। मानव संसाधन नियोजन निम्न कारणों से आवश्यक है :–

(1) मानव संसाधन सम्बन्धी उपयोगी योजनाओं के लिए

(2) मानव संसाधनों के उत्तम एवं प्रभावी उपयोग के लिए

(3) कर्मचारियों के पूर्व विकास एवं संतुष्टि के लिए

(4) वर्तमान एवं भविष्य की मानव संसाधन सम्बन्धी आवश्यकता के ज्ञान के लिए

(5) संगठन के लिए अत्यन्त उपयोगी पात्र व्यक्तियों की भर्ती एवं चयन के लिए।

कार्मिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सर्वाधिक उपयोगी व्यक्तियों

अथवा कर्मचारियों की उपलब्धता एवं विकास सुनिश्चित करना है। कर्मचारियों के समग्र प्रबन्धन के रूप में मानव संसाधन नियोजन उपयोगी होता है। इसके अन्तर्गत विभिन्न गतिविधियों का संचालन किया जाता है जैसे भर्ती योजना बनाना, आवश्यकता के अनुरूप अभ्यर्थियों का चयन करना, उनको उचित कार्यों में लगाना, प्रशिक्षण देना एवं उनका विकास करना आदि। मानव संसाधनों की उपयुक्त योजना के अभाव में यह सम्भव नहीं हो पाता है। उपर्युक्त सभी क्रियाकलापों के लिए योजना एक निर्देशक के रूप में कार्य करती है एवं इनका संचालन तार्किक एवं सरल ढंग से किया जाता है।

संगठन के हितों के लिए कार्य करने वाले कर्मचारियों की संतुष्टि भी महत्वपूर्ण होती है। जिस संगठन में मानव संसाधनों के उपयोग सम्बन्धी नीतियाँ एवं योजनाएं होंगी वही अपने कर्मचारियों का पूर्ण विकास कर सकेंगी जिससे संतुष्ट होकर कर्मचारी संगठनात्मक उद्देश्यों के लिए अधिकाधिक योगदान कर सकेंगे। कर्मचारियों को यह ज्ञात होना चाहिए कि संगठन को उनकी योग्यता एवं क्षमता की पहचान है एवं अवसर आने पर उन्हें महत्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपी जा सकती है। मानव संसाधनों के नियोजन में कर्मचारियों की इन आकांक्षाओं को उचित सम्मान देकर एवं उनकी भागीदारी सुनिश्चित कर संगठन के लिए उपयुक्त कार्य संस्कृति एवं अधिकतम कर्मचारी योगदान सुनिश्चित किया जा सकता है।

5.3 कार्मिक नियोजन प्रक्रिया

कार्मिक नियोजन की प्रक्रिया में अनेक तत्त्व सम्मिलित होते हैं। ये विभिन्न अवयव संयुक्त रूप से प्रक्रिया का निर्माण करते हैं।

कार्मिक/मानव संसाधन नियोजन प्रक्रिया में निम्न तत्त्व होते हैं:—

(क) मानव संसाधन की आवश्यकता का आकलन

(ख) मानव संसाधनों की भर्ती एवं चयन

(ग) पदस्थापन

(घ) कार्मिक विकास

(ङ) निष्पादन का समग्र मूल्यांकन/जाँच।

कार्मिक आवश्यकता का आकलन :

कार्मिक नियोजन प्रक्रिया का प्रथम चरण वर्तमान एवं भविष्य में होने वाली मानव संसाधनों अथवा कार्मिकों की आवश्यकता का आकलन करना है। यह कार्य संगठन/संस्था के समग्र उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है। संगठन कभी-कभी अपने उद्देश्यों को परिवर्तित कर देते हैं जिससे मानव संसाधनों की संख्या एवं प्रकृति बदलती रहती है। यदि संगठन अपना विस्तार कर रहा है तो उसे अधिक कार्मिकों की आवश्यकता होगी, यदि वह संकुचित हो रहा है तो कम कार्मिकों की आवश्यकता होगी। ऐसे में संगठन को कार्मिकों की संख्या बढ़ाने के लिए भर्ती करनी होगी एवं घटाने के लिए कार्मिकों की छटनी करनी होगी।

ग्रन्थालय एवं सूचना क्षेत्र के विस्तार एवं जटिलताओं के कारण ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के लिए अपने कार्मिक आवश्यकता का आकलन करना महत्वपूर्ण बन गया है। आधुनिक समय में ग्रन्थालयों को ऐसे कार्मिकों की आवश्यकता हो रही है जो मांग के अनुरूप विभिन्न प्रकृति की जिम्मेवारियों का निर्वाह कर सके। उनमें विभिन्न शैक्षणिक आधार, कौशल, तकनीकी क्षमता आदि की आवश्यकता है। आजकल के ग्रन्थालय कार्मिकों में ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान की योग्यता के साथ कम्प्यूटर एवं संचार प्रौद्योगिकी में अपेक्षित योग्यता एवं अनुभव की आवश्यकता है जिससे वे अपने उत्तरदायित्व का निष्ठा पूर्वक निर्वाह कर सकें।

RIL-091

किसी ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र की कार्मिक आवश्यकता का आकलन उसकी गतिविधियों, योजनाओं, परियोजनाओं एवं लक्ष्यों को, जिन्हें एक विशिष्ट अवधि में प्राप्त किया जाना है, ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। सूचना के बदलते सन्दर्भ में अनेक नयी गतिविधियों एवं सेवाओं, जैसे ऑन लाइन खोज, सी डी –रोम, सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का विपणन आदि को सम्पन्न करने के लिए विभिन्न श्रेणी के कार्मिकों का आकलन आवश्यक है। इस आकलन में विभिन्न तकनीकों, जैसे कार्य विश्लेषण, कार्य विवरण एवं कार्य–मूल्यांकन का उपयोग किया जा सकता है। बड़े संगठनों में कार्मिकों की आवश्यकता का आकलन मानक प्रचलित तकनीकों के आधार पर किया जाता है। प्रचलित तकनीकों में विशेषज्ञ आकलन तकनीक एवं इकाई मांग आकलन तकनीक महत्वपूर्ण है। प्रथम में एक विशेषज्ञ, प्रायः संगठन का प्रधान, अपने ज्ञान एवं अनुभवों के आधार पर कार्मिकों की आवश्यकता का आकलन करता है। विशेषज्ञ डेल्फी तकनीक का उपयोग कर इसे अत्यन्त प्रभावी बना सकते हैं। दूसरे में कार्य इकाई का प्रधान अपने इकाई में कार्यों के सम्पादन के लिए कार्मिकों का आकलन करता है। यह आकलन संगठन के निचले स्तर पर किया जाता है अतः कार्मिकों की मांग का वास्तविक आकलन सम्भव होता है। शीर्ष प्रबन्धन विभिन्न इकाइयों की कार्मिक मांगों का समन्वय कर समग्र कार्मिक आवश्यकता का आकलन करता है।

भर्ती एवं चयन :

किसी भी संस्थान में कर्मचारियों की भर्ती कर उनका चयन करना होता है। भर्ती एवं चयन में थोड़ा अन्तर है, भर्ती एक क्रिया है जबकि चयन एक प्रक्रिया है। भर्ती एक ऐसी क्रिया है जिससे संगठन वांछित प्रकार के व्यक्तियों की बड़ी संख्या को आकर्षित कर योग्य एवं वांछित कार्मिकों की उपलब्धता सुनिश्चित करता है। रोजगार सम्बन्धी विज्ञापन के प्रत्युत्तर में प्राप्त आवेदनों की उनकी योग्यता पर आधारित जाँच कर विशेष पदों के लिए सर्वाधिक योग्य आवेदकों का चुनाव करना चयन कहलाता है।

भर्ती एवं चयन में निम्न चरण सम्मिलित होते हैं :–

(क) ऐसे पदों का निर्धारण जिन पर भर्ती की जानी है

(ख) समाचार–पत्रों एवं पत्रिकाओं में विज्ञापन

(ग) प्राप्त आवेदन–पत्रों की जाँच करना।

वर्तमान समय में कर्मचारियों के चयन हेतु विभिन्न प्रक्रियाएं अपनायी जाती हैं। कभी-कभी प्रथम चरण के रूप में प्राप्त आवेदनों की बड़ी संख्या को देखते हुए प्राथमिक साक्षात्कार लिया जा सकता है। प्राथमिक साक्षात्कार में सफल हुए व्यक्तियों से आवेदन-पत्र भरवाकर उनकी जाँच की जाती है। विश्लेषण के बाद ऐसे व्यक्तियों के आवेदन-पत्रों को छांट लिया जाता है जो कार्य विशेष के लिए सभी तरह से उपयुक्त हों।

चयन की विभिन्न प्रक्रियाओं में परीक्षण करना भी एक महत्वपूर्ण विधि है। ये परीक्षण व्यक्ति की योग्यता आदि ज्ञात करने के लिए किये जाते हैं। वर्तमान में निम्न प्रकार के परीक्षण प्रचलित हैं :–

(i) योग्यता परीक्षण

(ii) बुद्धि परीक्षण

(iii) अभिरुचि परीक्षण

(iv) व्यक्तित्व परीक्षण

(v) साक्षात्कार

(vi) शारीरिक जाँच।

आजकल भारत में अधिकतर संगठन/संस्थान योग्य एवं कुशल कार्मिकों के चयन के लिए लिखित

परीक्षा एवं साक्षात्कार का सहारा लेते हैं, लेकिन मात्र व्यक्तिगत साक्षात्कार भी चयन का प्रचलित आधार बना हुआ है। साक्षात्कार एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए आयोजित विचारों का आदान-प्रदान होता है। अभ्यर्थी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की परख साक्षात्कार के माध्यम से सम्भव है। भर्ती एवं चयन की यह प्रक्रिया प्रायः संगठन के कार्मिक विभाग द्वारा कार्मिक प्रबन्धक की देख-रेख में सम्पन्न की जाती है। चयन के बाद चयनित आवेदक को चयन सम्बन्धी पत्र प्रेषित किया जाता है एवं उसे एक निश्चित अवधि में संगठन में पदभार ग्रहण करने के लिए कहा जाता है।

नव नियुक्त का स्वागत एवं पदस्थापन :

चयन प्रक्रिया द्वारा चयनित श्रेष्ठ कर्मचारी को उपयुक्त पद पर नियुक्त किया जाता है। उपयुक्त पद पर स्थापित करने के साथ ही नये कर्मचारी को संगठन के बारे में तथा उसके उद्देश्यों के बारे में ज्ञान कराया जाता है। उसको संगठन में महत्वपूर्ण व्यक्तियों एवं जिस इकाई में उसकी नियुक्ति हुई है वहाँ के कर्मचारियों से परिचय कराया जाता है। यह परिचय औपचारिक अथवा अनौपचारिक हो सकता है।

पदस्थापन में उस नवागत को उसके दायित्वों से परिचय कराया जाता है साथ ही उसको प्रेम एवं सम्मान देकर यह आभास कराया जाता है कि उसकी नियुक्ति उचित संगठन में हुई है। यद्यपि भारत में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में नये कर्मचारी की नियुक्ति के उपरान्त उसे संस्था/ग्रन्थालय से जोड़ने पर कम ही ध्यान दिया जाता है। अतः भविष्य में नवागत कर्मचारियों को संगठन/ग्रन्थालय से उपयुक्त ढंग से संयुक्त करने के लिए इस प्रकार ध्यान दिया जाना चाहिए।

कार्मिक विकास :

कार्मिक नियोजन के अन्तर्गत कार्मिक विकास एक महत्वपूर्ण पक्ष है। एक महत्वपूर्ण दायित्व के रूप में कार्मिक विकास का कार्य अनेक कार्यक्रमों के माध्यम से किया जाता है। संगठन/ग्रन्थालय के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्मिक विभाग को योजना बनानो पड़ती है, जिससे कर्मचारियों का बेहतर उपयोग कर लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। मानव संसाधन प्रबन्धक द्वारा कार्मिक विकास के लिए निम्न कार्यक्रमों की योजना बनायी जाती है :–

1. निष्पादन मूल्यांकन
2. प्रशिक्षण एवं विकास
3. बदलते परिदृश्य एवं दृष्टिकोण
4. संचार।

निष्पादन मूल्यांकन :

निष्पादन मूल्यांकन किसी व्यक्तिगत कर्मचारी की भूमिका का व्यवस्थित मूल्यांकन है जो उसकी कार्य/भूमिका सम्बन्धी अच्छाइयों एवं कमजोरियों को दर्शाता है। संगठन में कार्यरत कर्मचारियों के कार्यों का अलग-अलग मूल्यांकन करना कार्मिक नियोजन का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है। कर्मचारी प्रभावी रूप से अपनी भूमिका का निर्वहन करने में सक्षम हो इसके लिए समय-समय पर कर्मचारियों की भूमिका का मूल्यांकन करते रहना चाहिए। कर्मचारियों के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन कर्मचारी एवं संगठन/ग्रन्थालय दोनों की दृष्टियों से किया जाना आवश्यक है।

निष्पादन मूल्यांकन के लाभ :

(क) इससे कर्मचारी को अपनी दक्षता का सही ज्ञान हो जाता है,

(ख) इसके आधार पर कर्मचारी अपनी भूमिका को उन्नत बना सकते हैं,

(ग) निष्पादन मूल्यांकन द्वारा उपलब्ध हुई जानकारी के आधार पर कर्मचारियों के प्रशिक्षण एवं विकास सम्बन्धी आवश्यकताओं का पता लगाया जा सकता है एवं उस आधार पर

RIL-091

प्रशिक्षण एवं विकास कार्यक्रम तैयार किये जा सकते हैं,

(घ) कार्मिक नियोजन के लिए यह मूल्यांकन अत्यन्त महत्वपूर्ण सूचनाएं उपलब्ध कराता है।

निष्पादन मूल्यांकन के लिए विभिन्न प्रचलित मानकों को आधार बनाया जाता है एवं उन मानकों के परिप्रेक्ष्य में कर्मचारी की दक्षताओं की जाँच की जाती है। पूर्व में स्थापित समान प्रकृति के कार्यों के मानकों से कर्मचारी द्वारा सम्पादित किये जा रहे कार्यों की तुलना की जाती है। निष्पादन मूल्यांकन के आधार पर कर्मचारियों को पदोन्नति, उन्नत वेतनमान एवं पुरस्कार आदि की सुविधा प्रदान की जाती है।

प्रशिक्षण एवं विकास :

कर्मचारियों की उचित शिक्षा एवं प्रशिक्षण कार्मिक विकास का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है। किसी संगठन/ग्रन्थालय में कर्मचारियों की कार्यकुशलता एवं क्षमता में वृद्धि के लिए उचित शिक्षा एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है। प्रशिक्षण आदि द्वारा कर्मचारियों का उचित विकास कर उच्च उत्पादकता एवं सेवा में गुणवत्ता आदि प्राप्त किया जाता है।

कार्मिक नियोजन में कर्मचारियों के प्रशिक्षण एवं विकास की योजना को आवश्यक रूप से सम्मिलित किया जाता है। इसमें कार्मिकों का ज्ञान बढ़ाने की विस्तृत सोच जाग्रत करने के लिए औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था की जाती है एवं व्यावहारिक दक्षता बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है। योजना एवं कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने के लिए विभिन्न विधियों एवं तकनीकों के अनुप्रयोग का विकास प्रशिक्षण द्वारा सम्भव होता है जो संगठन/ग्रन्थालय के लक्ष्यों की प्राप्ति एवं समग्र विकास में सहायक सिद्ध होते हैं। प्रायः निम्न प्रकारों से प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है :–

(क) आन्तरिक प्रशिक्षण

(ख) वाह्य प्रशिक्षण

(ग) उक्त मिश्रण।

किसी भी संगठन/ग्रन्थालय के कार्मिक नियोजन में कर्मचारियों के प्रशिक्षण एवं विकास की अपनी भूमिका होती है। इसके निम्नलिखित लाभ हैं :–

1. प्रशिक्षण एवं विकास कर्मचारियों के व्यक्तिगत विकास में सहायक सिद्ध होता है,
2. इससे कर्मचारियों का मनोबल बढ़ता है,
3. यह संगठन/ग्रन्थालय के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक है,
4. यह उत्पादन की गुणवत्ता बढ़ाने एवं साख बढ़ाने में सहायक हैं।

5.4 बदलता परिदृश्य एवं दृष्टिकोण

आज के इस वैज्ञानिक युग में प्रत्येक वस्तु एवं उससे जुड़ी प्रौद्योगिकी तेजी से बदल रही है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के इस विकास ने सभी प्रकार के संगठनों को प्रभावित किया है। जो इन परिवर्तनों को अंगीकार नहीं करता उसका समाज के साथ चलना कठिन हो जाता है। परिवर्तनों के प्रति सामान्यतया तीन दृष्टिकोण हो सकते हैं – सकारात्मक, नकारात्मक एवं उदासीन।

किसी भी संगठन/ग्रन्थालय की समृद्धि, विकास एवं उसके उत्पादों अथवा सेवाओं की गुणवत्ता मुख्य रूप से इस तथ्य पर निर्भर करती है कि वह कितना संसाधनयुक्त एवं प्रगतिशील है। समृद्धि एवं विकास के लिए परिवर्तनों के प्रति सकारात्मक रुख अपनाना आवश्यक है। किसी संगठन/ग्रन्थालय सफलता में उसके कर्मचारियों की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ऐसी

RIL-091

स्थित में स्वाभाविक है संगठन के कर्मचारी भी प्रगतिशील सोच के हों एवं परिवर्तनों के प्रति उनका रुख सकारात्मक हो। परिवर्तनों को अंगीकार करने में कर्मचारियों के प्रशिक्षण एवं विकास के साथ-साथ अन्य महत्वपूर्ण कारक भी कार्य करते हैं।

बदलते परिदृश्य में संगठन की सफलता के लिए यह आवश्यक हो गया है कि व्यक्तिगत कर्मचारी एवं उनके समूह परिवर्तन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनायें। इस दृष्टिकोण के विकास के लिए कार्मिक नियोजन में उपयुक्त प्रावधान किया जाना चाहिए जिससे बदलाव के प्रति पूरा परिदृश्य सकारात्मक हो जाय। इसका सम्बन्ध व्यक्ति के पूर्ण मानसिक एवं वैचारिक दृष्टि से है। मनुष्य का दृष्टिकोण वास्तव में मनोवैज्ञानिक धारणाएं हैं जो परिवर्तनों को सकारात्मक अथवा नकारात्मक ग्रहण कर सकती है। किसी भी विषय पर लोगों की अपने विचार एवं धारणाएं होती है। प्रस्तावित परिवर्तन में विषयवस्तु के विषय में ज्ञान भी धारणाओं के निर्माण में सहायक है। आवश्यक परिवर्तनों के प्रति उपयुक्त दृष्टिकोण का विकास कार्मिक विकास का एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक कार्यक्रम है। संगठन में वांछित परिवर्तनों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण के लिए निम्न विधियाँ विकसित की गयी हैं : परिवर्तन के अनुकूल स्थिति का निर्माण, वातावरण में परिवर्तन, निर्देशन, चयन द्वारा परिवर्तन, विचार-विमर्श द्वारा परिवर्तन, प्रशिक्षण सम्प्रेषण, प्रभाव द्वारा परिवर्तन आदि।

संचार/सम्प्रेषण :

मानव क्रियाकलाप की प्रत्येक प्रणाली का आधार सूचनाओं का सम्प्रेषण होता है। सम्प्रेषण के अभाव में कोई उद्देश्यपूर्ण कार्य नहीं किया जा सकता है। संचार/सम्प्रेषण का महत्व निम्न कथन से स्पष्ट होता है—"सम्प्रेषण एक संगठन में उतना ही आवश्यक है जितना शरीर में रक्त।" लोगों के मध्य विचार-विमर्श से सम्प्रेषण सम्पन्न होता है लेकिन इसे नियमित रूप से संचालित किया जाना चाहिए न कि आकस्मिक रूप से। सम्प्रेषण की निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं :—

1. सम्प्रेषण प्रक्रिया संगठन को एक धागे में बांध कर रखती है,
2. सम्प्रेषण दिमागी प्रक्रिया है,
3. यह ऊपर से नीचे की ओर होता है,
4. यह नीचे से ऊपर की ओर होता है,
5. सम्प्रेषण उच्च प्रबन्धन एवं अधीनस्थ कार्मिकों के मध्य मधुर सम्बन्धों का निर्माण करता है,
6. यह क्षितिजीय होता है,
7. सम्प्रेषण सभी लोगों के सूचित होने से सम्बन्धित है।

किसी संगठन/ग्रन्थालय में सम्प्रेषण के लिए निम्न दो माध्यमों का उपयोग किया जाता है :—

(क) लिखित संचार

(ख) मौखिक संचार

लिखित संचार किसी भी संगठन की कार्य प्रणाली का विशेष अंग होता है। विभिन्न प्रकार के प्रतिवेदन, परियोजना प्रतिवेदन, वित्तीय प्रतिवेदन, मासिक या त्रैमासिक प्रतिवेदन, अधीनस्थों द्वारा उच्च अधिकारियों के लिए प्रार्थना-पत्र लिखना एवं उच्चाधिकारियों का अपने अधीनस्थों को आदेश प्रेषित करना, आन्तरिक बुलेटिन एवं सूचनाएं इसके उदाहरण हैं। लिखित सम्प्रेषण एक अभिलेख बन जाता है एवं उत्तर देयता अथवा दायित्व को बढ़ाता है। लिखित की तुलना में मौखिक सम्प्रेषण शीघ्र होता है। इसमें प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता दोनों आमने-सामने होते हैं, अतः संदेहों का तुरन्त निराकरण सम्भव है। लेकिन इसकी कुछ कमियां भी हैं जैसे उत्तरदेयता की कमी, प्रमाण का अभाव एवं बार-बार परिवर्तन की सम्भावना आदि।

मानव संसाधन के विकास के नियोजन सम्प्रेषण/संचार के निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए :—

(1) ऐसी सूचनाएं जिन्हें प्रबन्धक अपने कर्मचारियों को अच्छी तरह अवगत कराना चाहता है उसमें संगठन/ग्रन्थालय के उद्देश्य, योजनाएं एवं कार्यक्रम सम्मिलित रहते हैं,

(2) लक्ष्यों की प्राप्ति एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में कर्मचारियों का पूर्ण सहयोग अपेक्षित होता है,

(3) विभिन्न श्रेणी के कर्मचारियों के मध्य एक दूसरे के विचारों, दृष्टिकोण, का आदान-प्रदान, ये विचार विशेष कार्यक्रमों, परियोजनाओं एवं क्रियाकलापों से सम्बन्धित होते हैं।

(4) अन्तर्संगठनात्मक सम्प्रेषण, जिससे संगठन को अपनी भूमिका प्रभावी एवं महत्वपूर्ण बनाने में सहायता मिलती है,

(5) व्यवसाय में गतिशीलता एवं नवीनता के लिए विभिन्न व्यावसायिक सम्मेलनों, कार्यशालाओं आदि में भागीदारी सुनिश्चित करना।

पिछले वर्षों में लिखित एवं मौखिक सम्प्रेषण की अनेक विधियों एवं तकनीकों का विकास हुआ है साथ ही साथ औपचारिक एवं अनौपचारिक संचार विधियों, सन्देश भेजे जाने वाले संचार माध्यमों में भी काफी प्रगति हुई है। सम्प्रेषण में इन सभी पक्षों को योजना के अन्तर्गत विशिष्ट कार्यक्रमों एवं क्रियाकलापों में सम्मिलित किया जाना चाहिए। सम्प्रेषण की उपर्युक्त विशेषताओं एवं विधियों को योजना में सम्मिलित कर कार्मिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

5.5 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में कार्मिक नियोजन

भारत में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र सामाजिक संगठन के रूप में जाने जाते हैं। इनका मुख्य उद्देश्य समाज के लोगों की सेवा करना है न कि धन अर्जित करना। कुछ ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र ऐसे हैं जो अपनी सेवाओं का मूल्य वसूल करते हैं। अधिकतर सूचना केन्द्र किसी संगठन/संस्थान के एक अंग के रूप में कार्य करते हैं जैसे शोध एवं विकास संगठन, विश्वविद्यालय, शासकीय विभाग आदि। ये सभी अपने पैतृक संगठन के कार्मिक नीतियों एवं योजनाओं के अनुसार संचालित एवं नियन्त्रित होते हैं। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के कर्मचारियों के लिए अलग से कार्मिक नियोजन सम्बन्धी नीति एवं योजना की परम्परा नहीं है। यद्यपि परिस्थितियों में थोड़ा परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है तथा सम्भव है आगामी वर्षों में ग्रन्थालय कर्मचारियों के विकास सम्बन्धी नीतियों का अलग निर्माण हो।

संभवतः आने वाले वर्षों में सूचना की प्रकृति, स्वरूप, मांग, जटिलता, सेवाओं की गुणवत्ता पर बल, विपणन विशेषताओं, धन का अभाव आदि तथ्यों से प्रेरित होकर ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र अपने संगठनात्मक ढाँचे एवं कार्य करने के ढंग में परिवर्तन के लिए विवश हो जायें। ऐसी स्थिति में ये केन्द्र व्यापारिक एवं व्यावसायिक संगठनों की तरह अपने उत्पादों एवं सेवाओं का उचित मूल्य वसूल करेंगे। स्वाभाविक है ऐसी स्थिति में कार्मिक विकास की आवश्यकता की योजना एवं कार्यक्रम महत्वपूर्ण होगा।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के लिए कार्मिक विकास की योजना के अभिकल्पन में निम्न बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित करना होगा—

(1) वर्तमान एवं भविष्य के लिए मानव संसाधन की आवश्यकता का आकलन,

(2) नये कर्मचारियों की भर्ती एवं चयन के लिए परिणामोन्मुख प्रक्रिया का विकास,

(3) नये कर्मचारियों को ग्रन्थालय के लक्ष्य एवं अन्य कर्मचारियों से परिचित कराकर उनके साथ सम्मान व प्रेम का व्यवहार एवं उनकी योग्यता एवं दक्षता का उपयोग,

RIL-091

(4) कर्मचारियों की दक्षता एवं उपयोगिता में वृद्धि के लिए एक निश्चित अन्तराल पर निष्पादन मूल्यांकन की पद्धति का विकास,

(5) उपयुक्त विधियों एवं तकनीकों का उपयोग कर कर्मचारियों के प्रति सम्मान एवं बेहतर भविष्य के लिए आशान्वित कराने वाली कार्मिक विकास की नीतियों का निर्माण,

(6) उपयोक्ता संतुष्टि को मुख्य उद्देश्य मानकर सूचना उत्पादों एवं सेवाओं में गुणवत्ता सुनिश्चित करना।

5.6 निष्कर्ष

कर्मचारी किसी भी संगठन का केन्द्रीय पक्ष होता है। बिना उपयुक्त कार्मिक नियोजन के इनका समुचित उपयोग नहीं किया जा सकता है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्मिक नियोजन को उचित महत्व दें। वर्तमान एवं भविष्य मे वांछित मानवसंसाधन की आवश्यकता के उचित आकलन के लिए कार्मिक नियोजन आवश्यक हैं।

आज के इस बदलते परिदृश्य में कार्मिक नियोजन में व्यक्तिगत कर्मचारियों के विकास के लिए आवश्यक प्रावधान किया जाना चाहिए। संगठन की सफलता के लिए परिवर्तन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाना आवश्यक है।

RIL-091

इकाई 6 : सहभागी प्रबन्धन एवं सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन

PARTICIPATIVE MANAGEMENT AND TOTAL QUALITY MANAGEMENT (TQM)

संरचना :

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 सहभागी प्रबन्धन

6.3 सम्पूर्ण गुणवत्ता के तत्त्व

6.4 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र तथा सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन

6.5 मूल्यांकन अध्ययन

6.6 गुणवत्ता सुधार योजनाएं

6.7 निष्कर्ष

6.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :—

(क) सहभागी प्रबन्धन के तात्पर्य एवं विशेषताएं समझाना,

(ख) सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का अर्थ, उद्देश्य एवं पक्ष बताना,

(ग) सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के तत्त्व एवं उपयोगिता का बोध कराना,

(घ) ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन के परिप्रेक्ष्य में गुणवत्ता सुधार योजनाओं का वर्णन करना है।

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

पिछले कुछ वर्षों में प्रबन्धन के क्षेत्र में अनेक नये विचारों एवं अवधारणाओं का जन्म हुआ। सूचना एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तीव्र गति से हो रहे परिवर्तनों एवं अन्य परिवर्तनों ने इन नवीन अवधारणाओं के लिए उपयुक्त वातावरण प्रदान किया। राजनीतिक क्षेत्र में प्रबल जनतान्त्रिक धारणाओं के अनुकूल प्रबन्धन में सामूहिक भागीदारी की वकालत की जा रही है। जापान में इन नवीन विचारधाराओं को जन्म देने एवं उन्हें आत्मसात करने में विशेष रुचि दिखाई दी।

प्रबन्धन की इन नवीन धारणाओं में सहभागी प्रबन्धन एवं सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का विशेष जोर दिखाई देता है। इन नवीन धारणाओं में मानव संसाधन को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है। सम्पूर्ण

गुणवत्ता प्रबन्धन में गुणवत्ता एवं मानव संसाधन को आधार मानते हुए वैज्ञानिक प्रबन्धन के आधारभूत किन्तु केवल उपयोगी सिद्धान्तों को अपनाया गया है।

6.2 भागीदारी अथवा सहभागी प्रबन्धन

ऐसा प्रबन्धन जिसमें संगठन के प्रत्येक गतिविधि में कर्मचारी भागीदारी करते हैं, भागीदारी प्रबन्ध कहलाता है। भागीदारी प्रबन्धन एक आधुनिक प्रबन्धन विचार है जिसका विकास जापान में हुआ वैज्ञानिक प्रबन्धन की तरह भागीदारी प्रबन्धन का विचार भी काफी महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है भागीदारी प्रबन्धन संगठन में मानवीय पक्ष पर विशेष जोर देता है। इस प्रकार के प्रबन्धन में संगठ के कर्मचारी, चाहे वे किसी पद पर हों, संगठन में गुणवत्ता के निर्धारण में अपना योगदान करते हैं

भागीदारी प्रबन्धन को सहभागिता द्वारा प्रबन्धन अथवा लोकतन्त्र द्वारा प्रबन्धन के नाम से भी जान जाता है क्योंकि इस प्रकार के प्रबन्धन में कर्मचारियों की यथेष्ट भागीदारी होती है। साथ ही समाज का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य व्यक्ति भी इसमें सम्मिलित किये जाते हैं। सहभागिता प्रबन्धन सहभागिता एवं प्रबन्धन दो शब्द हैं जिसका सामान्य अर्थ है प्रबन्धन में भागीदारी। इसमें प्रबन्धक की भागीदारी तो स्वतः स्पष्ट है, लेकिन यहाँ सहभागिता कर्मचारियों के सन्दर्भ में है, जिसका तात्पर होता है, प्रबन्धन की ऐसी विधा जिसमें संगठन के प्रबन्धन कार्यों में सामान्य कर्मचारियों की भागीदार सुनिश्चित हो।

इस प्रबन्धन की मुख्य विशेषताएं निम्न हैं :–

(1) ऐसा विश्वास है कि संगठन का कर्मचारी, कर्मचारी होने के साथ-साथ एक मनुष्य भी है।

(2) न्यास में विश्वास

(3) प्रबन्धक के रूप में व्यक्ति देने वाला अधिक है लेने वाला कम

(4) कर्मचारियों को आजीविका के लिए धन की आवश्यकता है न कि वे धन प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं।

(5) गुणवत्ता इसका मुख्य आधार है।

लाभ :

प्रबन्धन में सहभागिता के निम्नलिखित लाभ हैं :–

(क) भागीदारी प्रबन्धन सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन को आधार प्रदान करता है।

(ख) अधिकतम उत्पादकता एवं सेवाओं में गुणवत्ता सुनिश्चित हो जाती है।

(ग) कर्मचारी को अपना महत्व समझ में आने पर कार्य करना अधिक रुचिकर हो जाता है क्योंकि सभी कर्मचारी एक साथ मिलकर कार्य करते हैं।

(घ) संगठन के समग्र उत्पादन एवं साख में वृद्धि होती है।

6.3 सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन

सम्पूर्ण गुणवत्ता का विचार प्रबन्धन विचारधारा का क्रान्तिकारी विचार है। इस विचार के जन्मदाता प्रोफेसर कारु इशिकावा (Professer Karou Ishikawa) के अनुसार प्रबन्धन की इस नयी प्रणाली में वैज्ञानिक प्रबन्धन तथा भागीदारी प्रबन्धन के सभी लाभकारी एवं उपयोगी तत्त्वों को एक साथ संयुक्त कर दिया गया है एवं उनकी कमियों को छोड़ दिया गया है। पूरे जापान में औद्योगिक प्रतिष्ठानों में इस नयी प्रणाली को प्रयोग में लाया जा रहा है, क्योंकि जापान ने वैज्ञानिक प्रबन्धन की

RIL-091

कमियों को देखते हुए अपने औद्योगिक प्रतिष्ठानों के पुनर्निर्माण के लिए सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन को अपनाया।

प्रबन्धन की इस नवीन विचारधारा में गुणवत्ता अत्यन्त महत्वपूर्ण है। गुणवत्ता को वस्तु अथवा व्यक्ति की विशेषता के रूप में देखा जाता है जिससे उस वस्तु अथवा व्यक्ति के स्वभाव एवं व्यवहार का निर्धारण किया जाता है। गुणवत्ता (Quality) को विशेषण, गुण, उपयोगिता का पर्यायवाची माना जाता है। प्रबन्धन में गुणवत्ता का तात्पर्य उत्पाद अथवा सेवाओं में विशिष्टता प्रदान करने से है। जब आधुनिक प्रबन्धन में गुणवत्ता की बात की जाती है तब इसका तात्पर्य होता है उपभोक्ता की दृष्टि से संगठन द्वारा किया जाने वाला कार्य अर्थात् जिसके आधार पर उपभोक्ता उस संगठन विशेष एवं उसके उत्पादों को सर्वश्रेष्ठ मान सकें।

सम्पूर्ण गुणवत्ता का तात्पर्य होता है कि किसी संगठन का व्यवस्थापन उसके उपयोगकर्ताओं के अनुसार व्यवस्थित करना। यहाँ पर गुणवत्ता सिर्फ उत्पादों तक सीमित नहीं है तथा न ही मात्र सेवा पर, अपितु सम्बन्धित कार्यों में बराबर गुणवत्ता होनी चाहिए। किसी भी संगठन की सम्पूर्ण गुणवत्ता उसके उपयोगकर्ताओं को संतुष्टि पर जोर देती है। उत्पादन में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उपयोगकर्ताओं को संतुष्ट करने वाले सभी बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाय। गुणवत्ता का सम्बन्ध मात्र उत्पादन से नहीं होता। गुणवत्ता के मानदण्ड, समय, वातावरण व उपयोगकर्ताओं इत्यादि द्वारा बदलते रहते हैं।

गुणवत्ता के विभिन्न पक्ष :

गुणवत्ता को किसी उत्पाद अथवा सेवा के कुछ पक्षों तक सीमित नहीं किया जा सकता है बल्कि इसे समग्रता के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। यद्यपि उपयोक्ता अथवा उपभोक्ता की दृष्टि से किसी उत्पाद अथवा सेवा के विभिन्न पक्ष हो सकते हैं। गुणवत्ता के विभिन्न पक्ष निम्नवत हैं :–

(क) उपयोगिता

(ख) टिकाऊपन

(ग) विश्वसनीयता

(घ) आवरण

(ङ) विक्रय के बाद सेवा एवं सहयोग

(च) उत्पादों अथवा सेवाओं की विविधता

(छ) सेवा की गति

(ज) अभिकरण अथवा कम्पनी की प्रतिष्ठा

(झ) सूचना देने की व्यवहार कुशलता एवं प्रशिक्षण

उपर्युक्त वर्णित सभी पक्षों को गुणवत्ता के अन्तर्गत समाहित किया जा सकता है। किसी भी सेवा अथवा उत्पाद की गुणवत्ता में उत्पादक अभिकरण की प्रतिष्ठा बहुत उपयोगी होती है। इस प्रतिस्पर्धा के युग में उपयोक्ता की दृष्टि से गुणवत्ता बनाना एवं इसे भविष्य में बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है। इस साख एवं प्रतिष्ठा को किसी एकल प्रयास से प्राप्त नहीं किया जा सकता बल्कि इसमें यथासम्भव अधिकतम पक्षों के समुचित समायोजन से गुणवत्ता प्राप्त की जा सकती है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के उद्देश्य :

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का मुख्य उद्देश्य संगठन का व्यवस्थापन उसके उत्पादों या सेवाओं को उपयोगकर्ताओं की आवश्यकता के अनुरूप करना है। इस तरह वह बाजार में अपनी स्थिति मजबूत कर सकेगा। सम्पूर्ण गुणवत्ता को अपने प्रबन्धन का आधार बनाने वाले संगठन निम्न सिद्धान्तों को अपनाते हैं :–

RIL-091

1. लगातार संगठन का विकास एवं उत्थान जो उसके समकक्ष अन्य प्रतिस्पर्धियों के बराबर अथवा अधिक हो।
2. उच्च गुणवत्तापरक उत्पादों का उत्पादन एवं लगातार उसमें बढ़ोत्तरी के प्रयास।
3. सभी सम्बन्धित लोगों की पूर्ण भागीदारी।
4. कीमतों में कमी के साथ गुणवत्ता में सुधार।

किसी संगठन के उत्थान के लिए यह आवश्यक होता है कि वह अपने अन्य प्रतिस्पर्धियों के गुणवत्ता विकास कार्यक्रमों का सूक्ष्म निरीक्षण करें एवं प्रयास करके उनके बराबर अथवा अधिक विकास कर लें। इस कार्य हेतु समय से कार्यवाही अथवा विकास किया जाना अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। उपर्युक्त प्रविधियों से प्रतिस्पर्धियों के गुणवत्ता विकास की सूचनाओं को प्राप्त करना, उनका उपयोग करना संगठन के उत्थान में सहायक होता है।

मूल्यों में कमी एवं गुणवत्ता में सुधार समग्र गुणवत्ता प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। इन दोनों विशेषताओं को एक साथ प्राप्त किया जा सकता है। यद्यपि कभी-कभी इनमें आपस में संघर्ष भी होता है। अतः इनमें सामन्जस्य आवश्यक होता है। संगठन में कार्य कर रहे सभी लोगों की भागीदारी समग्र गुणवत्ता के लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक होता है। इनमें पद, प्रतिष्ठा एवं शक्ति को भागीदारी का आधार नहीं बनाया जाता है। सभी वर्ग के प्रत्येक कर्मचारी व अधिकारी संगठन को अपने कार्यक्षेत्र में सर्वोत्तम योगदान के लिए प्रयत्न करते हैं। मानव एवं व्यावहारिक पक्ष समग्र गुणवत्ता प्रबन्धन की महत्वपूर्ण विशेषता है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन में मानवीय पक्ष को आधारभूत मानने के पीछे यह विश्वास है कि अपने जीवन में प्रसन्न, खुश, आदर प्राप्त कर्मचारी ही अपने कार्य को सर्वोत्तम ढंग से निष्पादित कर सकते हैं एवं संगठन को सर्वश्रेष्ठ संगठन बना सकते हैं।

6.4 सम्पूर्ण गुणवत्ता के तत्व

समग्र गुणवत्ता में निम्न चार तत्व सम्मिलित होते हैं :–

(क) प्रणालियाँ

(ख) प्रक्रियाएं

(ग) प्रबन्धन

(घ) लोग।

प्रणालियाँ :

गुणवत्ता प्रणालियों के सिद्धान्त विभिन्न विशिष्ट संगठनों द्वारा तैयार प्रलेखों जैसे आई एस ओ 9,000 ; बी. एस. 5,750 ; एलाइड क्वालिटी, एश्योरेन्स पब्लिकेशन्स, फेडेरल, ड्रग एशोसियेशन आफ अमेरिकन पब्लिकेशन्स एवं अन्य द्वारा उपलब्ध कराये जाते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय मानव संगठन ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उत्पादों का निर्माण किया है। इसमें विभिन्न उत्पादों एवं सेवाओं से सम्बन्धित गुणवत्ता मानकों का विवरण निहित है। इसी प्रकार भारत एवं ब्रिटेन ने क्रमशः BIS 14000 एवं BS 5750 मानक अपने राष्ट्रीय व्यापार गतिविधियों के संचालन के लिए बनाये हैं जो कि ISO 9000 से मिलता जुलता है। ISO 9000 का वास्तविक महत्व कार्य संस्कृति का निर्माण करने, कार्य विधि को मानक बनाने एवं उपभोक्ताओं की अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने में सभी कर्मचारियों को सम्मिलित करना है। इन उपायों को वास्तविक अर्थों में लागू करने से गुणवत्ता में सुधार एवं मूल्यों में कमी आदि गुणों को प्राप्त किया जा सकता है।

प्रक्रियाएं :

प्रक्रियाओं को अधिक व्यवस्थित एवं संगठित किये बिना गुणवत्ता को प्राप्त नहीं किया जा सकता। प्रणाली का अच्छा होना भी महत्व नहीं रखता यदि प्रक्रिया ठीक न हो। ऐसा माना जाता है कि जापान में सम्पूर्ण गुणवत्ता के अभिगम को प्राप्त करने के लिए लाखों कर्मचारियों को शिक्षित किया एवं उन्हें प्रशिक्षण प्रदान किया जिसके द्वारा ये कर्मचारी कार्य से सम्बन्धित समस्या को समाप्त करने के योग्य हो गये जिससे वांछित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

प्रबन्धन :

समग्र गुणवत्ता प्राप्त करने में प्रबन्धन की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। प्रबन्धन की विभिन्न प्रणालियों में भागीदारी प्रबन्धन अत्यन्त उपयोगी प्रमाणित हो रहा है जिसमें कर्मचारियों की प्रबन्धन में पूर्ण भागीदारी एवं उनका विकास सुनिश्चित किया जाता है। उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार एवं उपयोगकर्ताओं की पूर्ण संतुष्टि के लिए कर्मचारियों का प्रबन्धन के साथ अत्यन्त घनिष्ठ एवं सप्रेम सहयोग होना चाहिए। समग्र गुणवत्ता का अन्तिम उद्देश्य है :– उपयोगकर्ताओं की पूर्ण संतुष्टि। यह कार्य कर्मचारियों की कार्य संतुष्टि एवं उनके समूह भावना से काम करने से ही प्राप्त होगा।

लोग :

सहभागी प्रबन्धन वह क्रियाविधि है जिसमें संगठन के सभी कर्मचारी एक साथ मिलकर संस्था के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कार्य करते हैं। इस प्रकार की व्यवस्था में सबसे महत्वपूर्ण उपाय है –गुणवत्ता वृत्त (Quality circle) का निर्माण करना। यह व्यक्तिगत भागीदारी को समाप्त करता है एवं समूह भावना एवं कार्य को प्रोत्साहित करता है। समय-समय पर यह गुणवत्ता की जाँच करता रहता है एवं उपयोगकर्ताओं से मिलकर उसमें और सुधार की सम्भावनाओं की खोज करता है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता के चारों तत्वों को चार्ट द्वारा निम्न रूप में स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया जा सकता है :

समग्र गुणवत्ता

प्रणालियाँ	प्रक्रियाएं	प्रबन्धन	लोग
ISO 9000	प्रक्रिया क्षमता	विधि	गुणवत्ता वृत्त
BIS 14000	प्रक्रिया विकास	समस्या समाधान	सुझाव
BS 5750	प्रक्रिया नियन्त्रण	समूह भावना	प्रबन्धन में भागीदारी
	सम्पूर्ण उत्पादन		
	अनुरक्षण		
	समय पक्ष पर नियंत्रण		

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की उपयोगिता एवं लाभ :

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन में सभी कर्मचारियों की भागीदारी द्वारा एक नवीन कार्य संस्कृति का निर्माण किया जाता है। इस नये सांस्कृतिक परिवर्तन के वातावरण में लोग कार्य में रुचिपूर्वक प्रवृत्त होते हैं जिससे संगठन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करना सरल हो जाता है। संक्षेप में इस प्रबन्धन के निम्न लाभ होते हैं :–

RIL-091

1. कार्य करना अधिक रुचिकर हो जाता है, क्योंकि सभी कर्मचारी एक दूसरे के साथ मिलकर नये कार्य वातावरण में कार्य करते हैं ;
2. सामान्य उत्पादन में वृद्धि होती है ;
3. कर्मचारियों की उपस्थिति अधिकतम होती है क्योंकि उनमें कार्य रुचि अधिक होती है एवं इससे उनको संतुष्टि मिलती है ;
4. समूह भावना का विकास होता है एवं
5. उत्पादों एवं सेवाओं की गुणवत्ता में वृद्धि एवं कीमतों में कमी होती है।

6.4 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र तथा सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन

हमें विदित हो चुका है कि सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का मुख्य आधार सहभागी प्रबन्धन है। प्रबन्धन में सभी वर्ग के कर्मचारियों की भागीदारी द्वारा उत्पादों व सेवाओं में गुणवत्ता विकास एवं लागत में कमी प्राप्त की जा सकती है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र भी अपने प्रबन्धन में सम्पूर्ण गुणवत्ता के मानकों को अपनाकर अपनी सेवाओं में अधिक गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं एवं सूचना उत्पादों एवं सेवाओं पर आने वाली लागतों को कम कर सकते हैं।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में सम्पूर्ण गुणवत्ता के सिद्धान्तों को अपनाने के पूर्व इसकी उपयोगिता की जाँच की जानी चाहिए। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में सम्पूर्ण गुणवत्ता का परीक्षण निम्न तीन बिन्दुओं पर किया जा सकता है :–

(i) सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की उपयोगिता एवं महत्व,

(ii) गुणवत्ता सुधार के प्रयास, जिन्हें ग्रन्थालयों में अपनाया जा सकता है,

(iii) कर्मचारियों के गुणवत्ता सुधार योजनाओं के माध्यम से वांछित प्रयास।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की आवश्यकता एवं महत्व :

आज से पच्चीस वर्ष पूर्व ग्रन्थालय का अर्थ उस केन्द्रीय स्थान से था जहाँ पर पुस्तकों को उपयोग के लिए रखा जाता था लेकिन जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया एवं नई-नई तकनीकें विकसित होती गयी, जिसके फलस्वरूप ग्रन्थालय की अवधारणा भी बदल गयी। कालान्तर में ग्रन्थालय एवं सूचना में उत्पाद एवं सेवाओं में भी परिवर्तन आ गया। इस क्षेत्र से जुड़े लोग नवीन कार्य पद्धति एवं कम्प्यूटरीकृत ग्रन्थालय सेवा की अवधारणा को अपना रहे हैं। हम धीरे-धीरे सूचना विज्ञान से सूचना प्रौद्योगिकी में प्रवेश कर गये हैं। इसके कई अवयवों जैसे माइक्रो कम्प्यूटर, दूरसंचार, इण्टरनेट, इलेक्ट्रानिक मेल इत्यादि का उपयोग किया जा रहा है। ग्रन्थालयों में जो सामग्री लिखित अभिलेखों/पुस्तकों के रूप में होती थी, वह अब इलेक्ट्रनिक माध्यमों, जैसे फ्लापी, सी0डी0 रोम, माइक्रो फिल्म इत्यादि के रूप में आने लगी। हम निरन्तर औद्योगिक समाज से सूचना समाज की ओर अग्रसर हो रहे हैं। सूचना समाज, जो सूचना का अपार भण्डार है एवं प्रति मिनट उसमें हजारों की संख्या में सूचनाएं जुड़ती जा रही हैं, हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण हो गया है।

वर्तमान परिवेश में यदि हम सम्पूर्ण गुणवत्ता के अभिगम को नहीं अपनायेंगे तो सूचना समाज की अवधारणा को पूरा नहीं कर पायेंगे एवं न ही हम उन लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेंगे जिसके लिए इसकी स्थापना की गयी है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों द्वारा उपलब्ध सूचना उत्पादों एवं सेवाओं में यदि गुणवत्ता नहीं है तो इनका कोई महत्व नहीं रह जायेगा। अतः ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के उपयोगकर्ताओं को सही तथा अच्छी सेवा प्रदान करने के लिए एवं उनकी अधिकतम संतुष्टि के लिए समग्र गुणवत्ता अभिगम का अपनाया जाना आवश्यक है। सूचना एवं सूचना प्रौद्योगिकी में हो रहे नित नये परिवर्तनों का सामना करने के लिए सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एक महत्वपूर्ण उपकरण प्रमाणित

हो सकता है। विभिन्न श्रेणी के उपयोगकर्ताओं की विभिन्न सूचना मांगों को कर्मचारियों के सामूहिक प्रयास से ही पूरा किया जा सकता है। इसमें प्रौद्योगिकी का उचित उपयोग भी सम्मिलित है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के प्रबन्धन में सभी वर्ग के कर्मचारियों को सम्मिलित कर उनको उचित सम्मान देकर भविष्य के कठिन लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। भविष्य में किसी भी प्रकार के संगठन के प्रबन्धन के लिए सहभागी प्रबन्धन महत्वपूर्ण प्रमाणित होगा। जबकि सभी कर्मचारियों की प्रबन्धन में उचित भागीदारी तो सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का मूल आधार है।

गुणवत्ता सुधार :

विगत वर्षो से निरन्तर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सूचना प्रणाली एवं सेवाओं में गुणवत्ता सुधारने के प्रयास किये जा रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप विशिष्ट विषयों के राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के मानकों का विकास दृष्टिगोचर होता है। गुणवत्ता के सुधार सम्बन्धी प्रयासों से विकसित मानक एवं विशिष्टीकरण उपयोग प्रमाणित हो रहे हैं। सूचना संग्रहण एवं मूल्यांकन, उपयोगकर्ता अध्ययन, व्यक्तिगत योगदानों का मूल्यांकन आदि अनेक पक्षों में मूल्यांकन अध्ययनों के फलस्वरूप अनेक उपकरण एवं तकनीकें विकसित हुई जो उच्च गुणवत्तापरक सूचना स्रोतों के उत्पादन में जागरुकता का संचार करने में सहायक सिद्ध हुई।

6.5 मूल्यांकन का अध्ययन

सूचना क्षेत्र में गुणवत्ता सुधार का प्रभाव मुख्य रूप से दो रूपों में दृष्टिगोचर हुआ–

(क) सूचना पद्धति एवं सेवाओं का मूल्यांकन

(ख) मूल्य आधारित सूचना प्रणालियाँ एवं सेवाएं

मूल्यांकन अध्ययन के निम्न तीन मुख्य उद्देश्य हैं :

1. अच्छे उत्पादों एवं सेवाओं की व्यवस्था :

इस प्रकार के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य प्रचीन प्रणालियों एवं सेवाओं के तर्कसंगत मूल्यांकन का विकास जिससे उनकी कमियों को दूर किया जा सके। इसमें नये प्रकार की पुनर्प्राप्ति आपरेशन प्रणाली के सूक्ष्म पक्षों पर आधारभूत शोध एवं अध्ययन सम्मिलित होते हैं।

2. प्रदत्त सेवाओं की जाँच :

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं की समय-समय पर जाँच की जानी चाहिए जिससे कि उनका सही मूल्यांकन किया जा सके एवं इसके प्रभाव के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सके। इस जाँच अध्ययन से यह भी निर्धारित किया जाता है कि वर्तमान सेवाओं को विस्तृत एवं बहुमुखी किये जाने की आवश्यकता है अथवा नहीं।

3. प्रणाली की क्षमता एवं विश्वसनीयता :

किसी ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली का उसकी विश्वसनीयता एवं क्षमता का मूल्यांकन सूचना प्रबन्धन एवं उसके उपयोगकर्ता दोनों के लिए महत्वपूर्ण होता है। अतः इसमें दोनों की अपेक्षाओं एवं अनुभवों को स्थान दिया जाता है। प्रणाली अभी कैसा कार्य कर रही है एवं इसका बेहतर उपयोग कैसे किया जा सकता है, इन तथ्यों को इसके मूल्यांकन का आधार बनाया जाना चाहिए।

4. मूल्य आधारित सूचना माडल :

राबर्ट एस0 टेलर ने इस प्रकार का माडल विकसित करने में पर्याप्त रुचि दिखाई। इन्होंने सूचना प्रणालियों एवं सेवाओं की समझ एवं मूल्यांकन के लिए एक माडल विकसित किया, जो मूल्य आधारित सूचना माडल कहलाया। इसका चार प्रकार की प्रक्रियाओं में उपयोग किया गया। ये हैं संगठन, विश्लेषण, जजमेण्ट एवं निर्णय। यह माडल सूचना प्रणालियों की गुणवत्ता एवं उपयोगिता दोनों की

RIL-091

जाँच में सामान्य रूप से उपादेय है।

6.6 गुणवत्ता सुधार योजनाएं

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में आधुनिक परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में ग्रन्थालय एवं सूचना व्यावसायियों को शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए एक योजना के विकास का कार्य आवश्यक है। बिना समुचित व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण के गुणवत्ता सुधार के लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर सकते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर मानव शक्ति को संगठित व व्यवस्थित करने एवं सूचना केन्द्रों को उचित ढंग से संचालित करने के लिए इस प्रकार का विकास एवं सुधार योजना बनाना एवं उसको संचालित करना आवश्यक है जिससे कि भविष्य में ग्रन्थालय एवं सूचना कर्मचारी गुणवत्ता मुक्त उत्पाद एवं सेवा प्रदान करने के योग्य हो सकें।

व्यावसायिक संगठनों द्वारा नए विकसित हो रहे क्षेत्रों पर प्रशिक्षण के लिए संक्षिप्त पाठ्यक्रम व कार्यक्रम संचालित किये जाने चाहिए जिससे कर्मचारी अपने व्यावसायिक ज्ञान को अद्यतन कर सकें एवं आधुनिक तकनीकों को आत्मसात कर सकें। भारत में राष्ट्रीय स्तर की संस्थाएं जैसे इन्सडाक, डी आर टी सी इत्यादि अनेक प्रकार के पूर्णकालिक एवं अंशकालिक प्रशिक्षण प्रदान कर रहे हैं जिसके द्वारा ग्रन्थालय एवं सूचना व्यवसायी अपने आपको अद्यतन रख पा रहे हैं। यह व्यवस्था गुणवत्ता युक्त सूचना उत्पादों एवं सेवाओं को प्रदान करने में अत्यन्त सहायक हैं। भारत में सूचना संस्थाओं एवं संगठनों को मानव संसाधन विकास की नीतियाँ एवं योजनाएं बनानी चाहिए जो मेधावी एवं दक्ष लोगों को आकर्षित कर सकें।

6.7 निष्कर्ष

सम्पूर्ण गुणवत्ता का विचार प्रबन्धन विचारधारा में एक नवीन क्रान्ति है जिसमें वैज्ञानिक प्रबन्धन एवं सहभागी प्रबन्धन दोनों की विशेषताओं को एक साथ संयुक्त किया गया है। सहभागी प्रबन्धन मानव पक्ष को अत्यधिक महत्वपूर्ण पक्ष मानता है एवं सभी स्तर के कर्मचारियों की प्रबन्धन में भागीदारी सुनिश्चित कर गुणवत्ता विकसित करता है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता का विचार ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणालियों एवं सेवाओं के परिप्रेक्ष्य में उपयोगी हो सकता है। भविष्य में सूचना व्यावसायियों द्वारा सेवाओं एवं प्रणालियों की चुनौतियों का सामना करने के लिए मानव संसाधन के लिए गुणवत्ता सुधार कार्यक्रमों का अपनाया जाना आवश्यक है।

RIL-091

इकाई 7 : सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का विपणन, विपणन युक्तियाँ

MARKETING OF INFORMATION PRODUCTS & SERVICES, MARKETING STRATEGIES

संरचना :

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 सूचना विचार

7.3 सूचना एक विपणनीय वस्तु

7.4 सूचना का उत्पादन

7.5 सूचना की माँग एवं आपूर्ति

7.6 वितरण एवं विपणन

7.7 भारतीय परिदृश्य

7.8 सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का मूल्य निर्धारण

7.9 मूल्य निर्धारण नीति

7.10 विपणन युक्तियाँ

7.11 विपणन कार्यक्रम एवं मूल्यांकन

7.12 निष्कर्ष

7.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई का उद्देश्य आपको निम्नलिखित तथ्यों की जानकारी प्रदान करना है :–

(क) सूचना के विचार तात्पर्य एवं विपणनीय वस्तु के रूप में इसकी विशेषताओं से परिचय।

(ख) सूचना उत्पादन के विभिन्न स्रोतों, मांग एवं आपूर्ति, वितरण एवं विपणन की जानकारी।

(ग) सूचना उत्पादों की मुख्य निर्धारण नीति, शुल्क के लिए उपुयक्त सेवाओं से परिचय।

(घ) विपणन युक्तियों, विपणन कार्यक्रम एवं मूल्यांकन से सम्बन्धित विवरण।

RIL-091

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

आधुनिक युग सूचना का युग है। औद्योगिक क्रान्ति के बाद सूचना के क्षेत्र में क्रान्ति ने समाज के सभी क्षेत्रों को समान रूप से प्रभावित किया है। चाहे उद्योग जगत हो अथवा शिक्षा जगत अथवा शोध एवं विकास का क्षेत्र हो सभी जगह सूचना की महत्ता स्वीकार कर ली गयी है।

सूचना की उपयोगिता एवं महत्त्व ने इसे विपणन की वस्तु बना दिया है। आज के युग में इसे विपणन की वस्तु के रूप में देखा जा रहा है। अन्य उपयोगी वस्तुओं की तरह सूचना का भी क्रय विक्रय किया जा सकता है, क्योंकि सूचना की उपयोगिता होती है। सूचना के विपणन एवं अन्य उपयोगी वस्तुओं के विपणन में प्रधान अन्तर यह है कि अन्य उपयोगी वस्तुओं के क्रय-विक्रय के समय वस्तुओं का स्वामित्व क्रेता से विक्रेता को हस्तांतरित हो जाता है एवं विक्रेता के पास वह वस्तु नहीं रहती। जबकि सूचना के क्रय विक्रय से सूचना का स्वामित्व क्रेता से विक्रेता को हस्तांतरित होता है किन्तु वह सूचना विक्रेता के साथ क्रेता के पास भी रहती है।

विपणन योग्य अन्त वस्तुओं की तरह सूचना उत्पाद एवं सेवाओं की बाजार में मांग है। यह मांग कई पक्षों से प्रभावित होती है जैसे मूल्य, प्रधानता, आय, अपेक्षाएं, जनसंख्या, मौसम, प्रौद्योगिकी एवं अन्य वस्तुओं की कीमत। सूचना की मांग तभी होती है जब उपभोक्ताओं के लिए उसकी उपयोगिता एवं मूल्य हो। सूचना सेवाओं एवं उत्पादों के विपणन का विचार एक नवीन विचार है। अनेक संगठन/संस्थाएं इस दिशा में सकारात्मक प्रयास कर रही हैं यद्यपि सूचना के बाजार की आवश्यकता सम्बन्धी शोध की आवश्यकता है।

7.2 सूचना विचार

सूचना को विपणनीय वस्तु अथवा उत्पाद के रूप में विचार करने से पूर्व इसके सामान्य अर्थ को समझना आवश्यक है। यद्यपि सूचना को परिभाषित करना अत्यन्त कठिन है। अलग-अलग विद्वानों ने इसे अलग-अलग ढंग से परिभाषित किया है। लेकिन कुछ विशेषताएं सबमें समान रूप से पायी जाती हैं। सामान्य अर्थ में वर्गीकृत एवं विश्लेषित डेटा, जिसका उपयोग निर्णय लेने के कार्य में किया जाता है सूचना कहलाती है। जब डेटा के विभिन्न समूहों में सम्बन्ध स्थापित हो जाता है तो वह सूचना बन जाती है। हम कह सकते हैं कि डेटा के साथ अर्थ संयुक्त कर देने से यह सूचना हो जाता है। बहुधा डेटा, सूचना एवं ज्ञान का एक ही अर्थ में प्रयोग किया जाता है तथापि इनमें कुछ अन्तर अवश्य है। तथ्य, आंकड़ों का समूह डेटा कहलाता है जो प्रायः असंगठित होता है। संगठित एवं तार्किक क्रम में व्यवस्थित हो जाने से यह सूचना बन जाता है। यह कहा जा सकता है कि सूचना, डेटा से अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि उद्देश्यपूर्ण कार्यों के लिए डेटा को संगठित करना पड़ता है। दूसरों को सूचित करने का कार्य ज्ञान कहलाता है, जानना अथवा ज्ञानवान होना सूचित होने का ही परिणाम है। निम्न के माध्यम से डेटा, सूचना एवं ज्ञान को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है :–

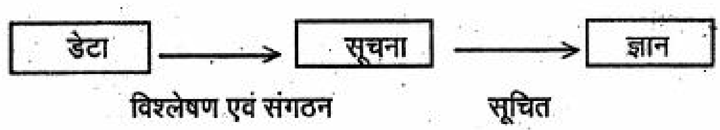

7.3 सूचना एक विपणनीय वस्तु

आज के युग में सूचना का महत्व सर्वत्र परिलक्षित होता है। जिसके पास सूचना है वह समृद्ध है। आज सूचनाओं के बल पर संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का सर्वाधिक धनी एवं समृद्ध देश बना हुआ है। अनेक देश ऐसे हैं जो सूचना की निरन्तर मांग प्रस्तुत कर रहे हैं। सूचनाओं से समृद्ध देश वांछित

RIL-091

सूचनाओं को आवश्यकता वाले देशों को विक्रय कर रहे हैं। स्वाभाविक है कि सूचना एक विपणन की वस्तु है। सूचना को वहन करने वाले विभिन्न उत्पादों, सेवा प्रणालियों एवं माध्यमों द्वारा प्रतिनिधित्व एक वस्तु के रूप में प्रदर्शित हैं।

मार्क पोरट (Marc Porat) के अनुसार "Information is a collection of many heterogenous goods and services that together comprise an activity in the country"

सूचना की निम्न विशेषताएं उसे विपणनीय वस्तु बनाती है :–

(1) **सार्वजनिक वस्तु की विशेषताएं :–** अन्य सार्वजनिक वस्तुओं जैसे जन ग्रन्थालय, सड़क, सुरक्षा की तरह सूचना को भी सार्वजनिक वस्तु माना जाता है। एक ही प्रकार की सूचना अथवा कोई विशिष्ट सूचना एक साथ कई लोगों के पास हो सकती है अर्थात् अनेक लोगों का स्वामित्व किसी एक ही सूचना पर हो सकता है। अतः सूचना में सार्वजनिक वस्तु की विशेषताएं पायी जाती हैं।

(2) **अविभाज्यता :–** सार्वजनिक वस्तु की तरह सूचना की आपूर्ति अथवा प्रसारण पूरे समाज तक किया जाता है अर्थात् पूरा समाज समग्र रूप से किसी सूचना का लाभ उठाता है। चयनित सूचना प्रसारण आदि सेवाओं में व्यक्ति विशेष को वांछित, विशेष सूचना उपलब्ध करायी जाती है। इस अर्थ में सूचना विपणन योग्य वस्तु के रूप में दृष्टिगत होती है।

(3) **असीमित :–** सूचना की एक महत्वपूर्ण विशेषता है इसका समाप्त न होना है जैसा कि अन्य वस्तुओं के सम्बन्ध में होता है। सूचना को क्रेता द्वारा विक्रेता को विक्रय कर देने पर भी सूचना क्रेता के पास बनी रहती है। जब कि अन्य वस्तुओं के विक्रय की स्थिति में स्वामित्व विक्रेता को स्थानान्तरित हो जाता है, क्रेता के पास वह वस्तु नहीं रह जाती है।

(4) **निहित अनिश्चितता :–** सूचनाओं के क्रय में स्वाभाविक रूप से खतरा बना रहता है, यह इसकी एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता है। सूचना का क्रेता जब तक यह जानता नहीं कि सूचना उसके लिए कितनी उपयोगी है तब तक उसका मूल्य निर्धारित करना अत्यन्त कठिन है। यदि क्रेता यह जान लेता है कि क्रय की जाने वाली सूचना क्या है? सूचना के बारे में जानकारी हो जाने पर उसे वह क्यों क्रय करेगा।

विपणन का उपयोगकर्ताओं से सीधा सम्बन्ध होता है। यह हमारे जीवन का एक प्रमुख अंग है। बाजार में वस्तुओं का क्रय विक्रय विपणन होता है। सूचना भी बाजार में विपणन के लिए उपलब्ध है। विभिन्न सूचना वाहकों जैसे सूचना उत्पाद, सेवाएं आदि का क्रय-विक्रय किया जा सकता है, अतः सूचना एक विपणनीय वस्तु है, यद्यपि यह अन्य वस्तुओं से थोड़ी भिन्न है।

(5) **समय तत्त्व :–** सूचना की वास्तविक उपयोगिता एवं मूल्य उसके समय से उपलब्धता पर निर्भर करता है। सूचना का समय के साथ गहरा सम्बन्ध है। एक निश्चित अवधि में सूचना अत्यन्त मूल्यवान हो सकती है एवं विशिष्ट अवधि के पश्चात् सूचना का मूल्य शून्य भी हो सकता है।

7.4 सूचना का उत्पादन

सूचनाओं के विपणन में इसका उत्पादन एवं इसकी मांग महत्वपूर्ण होती है। उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन एवं विपणन होता है जिनकी मांग होती है। अतः सूचना के विपणन में इसका उत्पादन एवं मांग स्वाभाविक रूप से निहित है।

व्यक्तियों अथवा संगठनों की गतिविधियों का परिणाम सूचनाओं के रूप में सामने आता है। समाज

के विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली घटनाएं, गतिविधियां सूचनाओं को जन्म देती है। सूचना के उत्पादन की यह प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है। सूचना उत्पादन के प्रमुख स्रोत निम्न हैं :–

(क) शोध एवं विकास संस्थान :

नयी सूचनाओं के उत्पादन में शोध एवं विकास संगठनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विश्व में सूचनाओं की एक बड़ी मात्रा संगठित शोध के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। मानव एवं समाज के कल्याण के उपयोग के लिए ज्ञान अथवा सूचना भण्डार को समृद्ध करने के लिए शोध एक अत्यन्त महत्वपूर्ण गतिविधि है। भारत में शोध एवं विकास गतिविधियाँ CSIR, ICSSR, DRDO, DRTC आदि शोध संगठनों द्वारा सफलतापूर्वक संचालित की जा रही है। हम कह सकते हैं कि शोध एवं विकास संगठन सूचना के सबसे बड़े उत्पादक हैं।

(ख) शासन/सरकार :

शासन एक अन्य महत्वपूर्ण सूचना उत्पादक स्रोत है। विभिन्न विभागों, मंत्रालयों द्वारा संचालित गतिविधियों से महत्वपूर्ण सूचनाएं उत्पन्न होती हैं। समाज के कल्याण एवं लाभ के लिए शासन द्वारा विभिन्न सामाजिक, राजीनतिक व आर्थिक गतिविधियाँ संचालित की जाती हैं जिनका सम्बन्ध देश के विकास योजनाओं से होता है। इन विभिन्न गतिविधियों के फलस्वरूप उपयोगी सूचनाओं का उत्पादन होता है।

व्यावसायिक एवं औद्योगिक संगठन :– व्यावसायिक एवं औद्योगिक गतिविधियों के फलस्वरूप भी काफी सूचनाएं उत्पन्न होती हैं। ये व्यावसायिक एवं औद्योगिक सूचनाएं नये उत्पादों आदि के रूप में हो सकती हैं।

व्यक्तिगत :– जैसे कवि, उपन्यासकार

मीडिया – महत्वपूर्ण घटनाएं अथवा गतिविधियाँ जो प्रतिदिन के जीवन में घटित होती है, उनकी सूचना मीडिया द्वारा दी जाती है जैसे समाचार-पत्र, पत्रिकाएं, दूरदर्शन, रेडियो आदि।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र :– ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों द्वारा प्रायः समाज में उत्पन्न सूचनाओं का संग्रह एवं संरक्षण किया जाता है। सूचना विस्फोट के कारण सूचना उपयोगकर्ता के लिए यह सम्भव नहीं रह गया है कि वह उन सभी तक पहुँच सके एवं वांछित सूचना प्राप्त कर सकें। सूचना केन्द्र उन सूचनाओं के चयन, प्रक्रिया आदि द्वारा उपयोगकर्ता को उसकी वांछित सूचना प्रदान करते हैं। यह प्रक्रिया सूचना उत्पाद एवं सेवाओं के द्वितीय प्रकार के सूचना उत्पादन का कार्य करती है। इस तरह ये अप्रत्यक्ष सूचना उत्पादक स्रोत हैं।

7.5 सूचना की मांग एवं आपूर्ति

किसी भी बाजार में मांग एवं आपूर्ति का महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रो0 बेनहम के अनुसार किसी दी हुई कीमत पर किसी वस्तु की मांग उस वस्तु की वह मात्रा है जो उस कीमत पर एक निश्चित समय में खरीदी जायेगी। किसी अन्य वस्तु की तरह सूचना उत्पादों एवं सेवाओं की कीमत इसकी मांग एवं आपूर्ति पर आश्रित होती है।

मांग एवं आवश्यकता :

मांग एवं आवश्यकता एक दूसरे से मिलती जुलती हैं, परन्तु फिर भी उनमें थोड़ा अन्तर है। माँग आवश्यकतानुसार प्रभावपूर्ण इच्छा को कहते हैं। आवश्यकता में तीन बातें होती हैं :– (i) किसी वस्तु की इच्छा होना, (ii) इच्छा को पूरा करने के लिए साधन/द्रव्य का होना, (iii) साधन को व्यय करने की तत्परता का होना।

किसी वस्तु की मांग के पीछे मानव आवश्यकता ही हैं। परन्तु मांग को आवश्यकता/इच्छा कहना

पर्याप्त नहीं है क्योंकि मांग सदैव एक निश्चित मूल्य पर एवं एक निश्चित समय में होती है। इस प्रकार मांग के लिए निम्न पाँच बातों का होना आवश्यक है: (क) इच्छा; (ख) इच्छा को पूरा करने के लिए साधन; (ग) साधनों को व्यय करने की तत्परता; (घ) निश्चित कीमत एवं निश्चित अवधि।

जहाँ तक सूचना बाजार का प्रश्न है, यह विचारणीय है कि लोग सूचना क्यों चाहते हैं? सूचना बाजार में विभिन्न प्रकार के उपयोक्ता विभिन्न प्रकार की सूचना आवश्यकताओं के बाजार में आते हैं। सूचना आवश्यकता विभिन्न पक्षों पर निर्भर करती हैं। अतः उनमें अन्तर स्वाभाविक है। यह भिन्नता उम्र, शिक्षा, आय एवं अन्य प्राथमिकताओं को लेकर हो सकती है। आय एवं कीमतें इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

सूचना उत्पाद एवं सेवा की मांगी जाने वाली मात्रा मुख्यतया तीन बातों पर निर्भर करती हैं :–

(अ) सूचना उत्पाद अथवा सेवा की कीमत,

(ब) सम्बन्धित वस्तुओं की कीमतें।

इन आधारों पर मांग को मूल्य मांग, आय-मांग एवं अलचीली मांग तीन प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है।

मूल्य मांग किसी वस्तु की उन मात्राओं को बताती है जो कि एक उपभोक्ता एक निश्चित समय में विभिन्न कल्पित मूल्यों पर खरीदने को तैयार है, यदि अन्य बातें समान रहती हैं। आय मांग किसी उत्पाद अथवा सेवा की उन मात्राओं को बताती है जो कि उपभोक्ता एक निश्चित समय में आय के विभिन्न स्तरों पर खरीदने को तैयार है, यदि अन्य बातें समान रहती हैं।

मांग नियम के अनुसार अन्य बातों के समान रहने पर उत्पाद की कीमतों में कमी से मांग बढ़ जाती है एवं कीमतों में वृद्धि से मांग घट जाती है। इस तरह हम पाते हैं कि सूचना उत्पाद एवं सेवाओं की कीमतें बढ़ने से उस उत्पाद/सेवा की मांग घट जाती है एवं कीमतों में कमी मांग को बढ़ाती है। यह तथ्य उत्पाद/सूचना कीमत एवं मांग के मध्य विलोम/विपरीत सम्बन्ध दर्शाता है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि मांग में परिवर्तन आनुपातिक हो। कभी-कभी कीमतों में परिवर्तन से मांग प्रभावित नहीं होती है अर्थात् मांग में परिवर्तन नहीं दिखाई देता है, इस स्थिति को अलचीली मांग कहते हैं।

सूचना उत्पादों एवं सेवाओं की मांग को निम्न पक्ष प्रभावित करते हैं :–

1. प्राथमिकताएं
2. आय
3. अपेक्षाएं
4. जनसंख्या
5. मौसम
6. प्रौद्योगिकी
7. सम्बन्धित वस्तुओं की कीमतें।

उपर्युक्त पक्षों में कोई परिवर्तन मांग के परिवर्तन में प्रभावी होता है।

7.6 सूचना का वितरण एवं विपणन

अन्य उत्पादों की तरह सूचना उत्पादों के विपणन एवं वितरित किये जाने की आवश्यकता होती है। सूचना के वितरण का विपणन से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

7.6.1 सूचना वितरण

सूचना के वितरण में दो अन्तर्निहित पक्ष होते हैं एक जो सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का उत्पादन करते हैं। दूसरे सूचना के उपयोगकर्ता, जिनकी अपनी विशिष्ट आवश्यकताएं होती हैं। सूचना विस्फोट के इस युग में उपयोगकर्ता को उसकी विशिष्ट आवश्यकतानुसार सूचनाएं उपलब्ध कराने के लिए उचित माध्यमों की आवश्यकता होती है। परम्परा से ग्रन्थालय सूचना उपलब्ध कराने वाले माध्यम अथवा मध्यस्थ के रूप में जाने जाते हैं। प्रौद्योगिकी में निरन्तर विकास के फलस्वरूप अनेक अन्य प्रकार के सूचना केन्द्रों की स्थापना हुई है।

सूचना वितरक के रूप में कार्य करने वाले ये केन्द्र वास्तविक उपयोगकर्ता को उसकी आवश्यकता के अनुरूप सूचना उत्पादकों के उपयोगी उत्पादों से जोड़ने का कार्य करते हैं। सूचना वितरक के रूप में कार्य करने वाले ये केन्द्र निम्न हैं :–

(क) प्रलेखन एवं सूचना केन्द्र

(ख) सूचना विश्लेषण केन्द्र (Information Analysis Centre)

(ग) निर्देशक केन्द्र (Referral Centre) ये एक प्रकार के सूचना डेस्क के रूप में कार्य करते हैं जो विभिन्न सूचना स्रोतों तक पहुँचाने में निर्देशक का कार्य करते हैं।

7.6.2 सूचना का विपणन

प्रचलन के अनुसार विपणन का अर्थ है–वस्तुओं का क्रय-विक्रय अथवा लेन-देन। सामान्यतया उत्पाद के विक्रय को विपणन के साथ संयुक्त कर दिया जाता है। विपण्न क्षेत्र के प्रसिद्ध विद्वान फिलिप कोटलर ने विनिमय को विपणन का केन्द्रीयपक्ष माना है। जब द्रव्य के माध्यम से उत्पादों एवं सेवाओं का क्रय-विक्रय किया जाता है तो उसे विनिमय कहा जाता है1 विपणन में निम्न तत्त्व सम्मिलित होते हैं :–

1. उत्पाद एवं सेवाएं
2. विक्रय
3. आवश्यकता या मांग
4. विज्ञापन
5. भौतिक वितरण
6. बाजार या उपयोगकर्ता समूह
7. उपयोगिता एवं गुणवत्ता
8. लेन-देन सौदे एवं सम्बन्ध
9. कीमत।

मात्र वस्तु का विक्रय ही विपणन नहीं होता अपितु उपरोक्त तथ्यों को भी विपणन में सम्मिलित किया जाता है।

वर्तमान समय में सूचना का आर्थिक महत्व बढ़ता जा रहा है एवं इसे विपणनीय वस्तु के रूप में देखा जा रहा है। अन्य उत्पादों की तरह सूचना का भी उत्पादन, विक्रय एवं उपभोग सम्भव है इसे बाजार में विभिन्न सूचना उत्पादों एवं सेवाओं के रूप में विपणन किया जा रहा है।

सूचना विपणन में निम्न चरण हो सकते हैं :–

प्रथम चरण – उपयोगकर्ता समूह की पहचान।

द्वितीय चरण :– उपयोगकर्ता समूह की आवश्यकताओं के अनुरूप उत्पादों एवं सेवाओं का उत्पादन।

तृतीय चरण :– वास्तविक उपयोगकर्ताओं को सूचना उत्पादों एवं सेवाओं से अवगत कराना।

चतुर्थ चरण :– उपयुक्त समय एवं स्थान पर इन सूचना उत्पादों की आपूर्ति करना।

जब हम सूचना उत्पादों एवं सेवाओं के विपणन की बात करते हैं तो हमारे सामने इनके मूल्य निर्धारण का प्रश्न आता है क्योंकि सूचना में भी विपणनीय सार्वजनिक वस्तुओं की विशेषताएं पायी जाती हैं। सूचना की विशेषताएं इसके विपणन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सूचना का विपणन इसमें निहित विशेषता के आधार पर अन्य विपणनीय उत्पादों से थोड़ा भिन्न हो जाता है।

7.7 भारतीय परिदृश्य

भारत में कुछ संस्थाओं एवं संगठनो ने सूचना उत्पादों एवं सेवाओं के विपणन के कार्य में प्रगति की है। इंसडाक, भारतीय राष्टीय वैज्ञानिक प्रलेखन केन्द्र, द्वारा इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया गया है। सूचना विपणन को पर्याप्त महत्व देते हुए इस केन्द्र ने विपणन एवं उपभोक्ता सेवाओं का एक पूर्ण विभाग स्थापित किया है। इंसडाक द्वारा निम्न सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का विपणन किया जाता है।

1. **वर्तमान** उत्पाद/सेवाएं
   - (क) साहित्य खोज
   - (ख) प्रलेख प्रति की आपूर्ति
   - (ग) अनुवाद सेवा
   - (घ) प्रतिलिपिकरण सेवा
   - (ङ) मुद्रण
   - (च) भारतीय विज्ञान सार
   - (छ) एनल्स ऑफ लाइब्रेरी साइंस एण्ड डाकूमेन्टेशन
   - (ज) नेशनल यूनियन केटलाग ऑफ साइन्टिफिक सीरिअल्स इन इंडिया
   - (झ) डायरेक्टरी ऑफ साइन्टिफिक रिसर्च इन्स्टीट्यूशन्स इन इण्डिया
   - (ञ) नेशनल इन्डेक्स आफ ट्रान्सलेशन
   - (ट) प्रशिक्षण योजनाएं (कम्प्यूटर अनुप्रयोग)
2. **नयी सेवाएं :–**
   - (क) साहित्य खोज (कम्प्यूटरीकृत)
     - (i) सीडी–रोम
     - (ii) कम्प्यूटरीकृत डाटाबेसेज़
     - (iii) व्यापारिक डेटाबेस आपूर्तिकर्ता
     - (iv) शैक्षणिक डेटाबेस
   - (ख) डेस्क टाप पब्लिशिंग (DTP) सेवाएं

RIL-091

(ग) लेखों का उद्धरण विश्लेषण

(घ) विशेषज्ञ सलाह सेवाएं

(ङ) वैज्ञानिक सम्मेलन कार्यवाहियों की निर्देशिका

(च) भारतीय वैज्ञानिक पत्रिकाओं की निर्देशिका

इंसडाक द्वारा संचालित ये सेवाएं रियायती दरों पर उपलब्ध करायी जाती हैं। इन उत्पादों एवं सेवाओं का प्रचार-प्रसार व्यक्तिगत सम्पर्कों एवं सूचना पुस्तिकाओं के प्रकाशन द्वारा किया जाता है। इंसडाक की ही तरह अन्य संस्थाएं अपने उत्पाद एवं सेवाओं के साथ बाजार में आ रही है।

कुल मिलाकर सूचना विपणन का भारतीय परिदृश्य उत्साहवर्धक नहीं है, जबकि इस क्षेत्र में विकसित देशों ने काफी प्रगति कर ली है। भारत में सूचना विपणन के विषय में लोगों को जागरुक एवं उत्साहित करने की आवश्यकता है।

7.8 सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का निर्धारण (Pricing of Information Products & Services)

परम्परागत धारणा के अनुसार सूचना उत्पाद एवं सेवाएं सामाजिक वस्तु है जिनको मुफ्त में सभी लोगों को उपलब्ध कराया जाना चाहिए। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र लाभ न अर्जित करने वाले सामाजिक संगठन के रूप में जाने जाते हैं एवं इनके कार्य सामाजिक सेवा कार्य की कोटि में आते हैं। आधुनिक युग में जब ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के बजट सीमित होते जा रहे हैं एवं पाठ्य सामग्रियों की कीमतों में अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है, उस स्थिति में सूचना सेवाओं को बिना किसी मूल्य के लोगों को उपलब्ध कराना कठिन हो गया है। स्वाभाविक है कि अपने आर्थिक स्थिति को दयनीय होने से बचाने के लिए सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का उचित मूल्य उपयोगकर्ताओं से वसूलने की धारणा को बल मिला।

मूल्य निर्धारण के प्रकार और तकनीक :

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र लाभ न अर्जित करने वाले संगठन हैं एवं उनका मुख्य उद्देश्य सामाजिक कल्याण के अपने अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करना है। अतः इनका मूल्य निर्धारण इन तीन उद्देश्यों पर आधारित होगा :–

(i) उत्पादन लागत के आधार पर

(ii) उत्पाद की मांग के आधार पर

(iii) प्रतिस्पर्धा पर आधारित।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र अपने उत्पादों के मूल्य निर्धारण में निम्न तीन में से किसी तकनीक का उपयोग करते है :–

(क) औसत लागत मूल्य निर्धारण

(ख) मूल्य विवेक

(ग) सीमान्त लागत मूल्य।

मूल्य निर्धारण में निम्न तथ्य महत्वपूर्ण हैं :–

1. किसी वस्तु या सेवा का मूल्य मांग एवं पूर्ति की शक्तियों द्वारा निर्धारित होता है। बाजार में वस्तु का मूल्य उस बिन्दु पर निश्चित होगा जहां पर मांग और पूर्ति बराबर हो जाती है।

RIL-091

2. मांग, पूर्ति एवं मूल्य तीनों परस्पर सम्बन्धित होते हैं।
3. मांग एवं पूर्ति की दशाओं में परिवर्तन होने से सन्तुलन मूल्य में परिवर्तन हो जाता है।
4. सन्तुलन मूल्य स्पर्द्धात्मक बाजार में मांग एवं पूर्ति की शक्तियों का केन्द्र बिन्दु होता है।

7.8.1 सन्तुलन मूल्य (Equilibrium Price)

वस्तु विशेष का मूल्य उस बिन्दु पर निश्चित होगा, जहाँ पर कि उसकी मांग एवं पूर्ति दोनों बराबर हो जाती है, इस मूल्य को सन्तुलन मूल्य कहा जाता है ; मांग एवं पूर्ति की ऐसी स्थिति में मात्राओं को सन्तुलन मात्राएं कहा जाता है तथा बाजार सन्तुलन की स्थिति में कहा जाता है।

उत्पाद की कीमत का निर्धारण मांग एवं पूर्ति के प्रतिवेदन द्वारा किया जाता है। किसी वस्तु का मूल्य मांग एवं पूर्ति दोनों शक्तियों द्वारा निर्धारित होता है।

बाजार में मांग एवं पूर्ति के परिवर्तनों का अध्ययन सन्तुलन विश्लेषण का मुख्य उद्देश्य है। इस विश्लेषण से भविष्य के लिए मांग एवं पूर्ति तथा मूल्य की भविष्यवाणी की जा सकती है।

7.8.2 मांग शक्ति (Demand Force)

किसी वस्तु की मांग क्रेताओं या उपभोक्ताओं द्वारा की जाती है। वस्तु या सेवा की उपयोगिता होने के कारण एक क्रेता उसकी मांग करता है। एक क्रेता किसी वस्तु की कितनी मात्रा खरीदेगा यह उसकी सीमान्त उपयोगिता पर निर्भर करता है, वह वस्तु के लिए सीमान्त उपयोगिता से अधिक मूल्य नहीं देगा।

किसी वस्तु की मांग "मांग के नियम" द्वारा नियन्त्रित होती है, अर्थात् ऊँची कीमत पर वस्तु की कम मात्रा एवं नीची कीमत पर वस्तु की अधिक मात्रा मांगी जाती है। जिस कीमत पर उत्पाद एवं सेवा की एक निश्चित मात्रा को क्रेता खरीदने को तैयार होता है जिसे मांग मूल्य कहते हैं।

7.8.3 पूर्ति शक्ति (Supply Force)

किसी वस्तु की पूर्ति उत्पादकों अथवा विक्रेताओं द्वारा की जाती है। चूँकि प्रत्येक सूचना उत्पाद के उत्पादन में कुछ न कुछ लागत आती है इसलिए प्रत्येक उत्पादक/विक्रेता अपने उत्पाद/सेवा का मूल्य कम से कम सीमान्त लागत के बराबर अवश्य लेगा ; दीर्घ काल में उत्पादन बन्द कर देगा। इस प्रकार पूर्ति पक्ष की ओर से सूचना उत्पाद की निचली सीमा सीमान्त लागत (अन्तिम इकाई के उत्पादन की लागत) द्वारा निर्धारित होती है।

उत्पादों के मूल्य निर्धारण में सीमान्त के विचार का महत्वपूर्ण योगदान है। उत्पाद की कीमत उसकी सीमान्त उपयोगिता के बराबर होने की प्रवृत्ति रखती है। सीमान्त उपयोगिता ही वस्तु की कीमत को प्रभावित करती है। सन्तुलन की स्थिति में सब सीमान्त उपयागिताएं बराबर होती हैं। सीमान्त प्रयोग तथा लागत एवं मूल्य मांग एवं पूर्ति के द्वारा निर्धारित होते हैं।

7.8.4 लागत लाभ विश्लेषण (Cost Benefit Analysis)

लागत लाभ विश्लेषण सूचना उत्पादों एवं सेवाओं के मूल्य निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। किसी उत्पाद की मांग उसके उपयोगिता पक्ष पर निर्भर करती है, जिसे एक उपभोक्ता उसका उपयोग कर लाभ अर्जित करता है। दूसरी तरफ उत्पाद की आपूर्ति उसके उत्पादन में आयी लागत

RIL-091

पर निर्भर करता है। इस प्रकार उत्पादन में आयी लागत एवं उपभोक्ता द्वारा उपभोग से प्राप्त लाभ का उत्पाद के मूल्य से गहरा सम्बन्ध प्रदर्शित होता है।

उपयोगिता का सम्बन्ध उत्पाद के उपभोग में उपभोक्ता की संतुष्टि से होता है। समग्र लाभ को उपभोक्ता के सम्पूर्ण संतुष्टि की मात्रा के रूप में देखा जाना चाहिए। जितना अधिक उपभोग उपभोक्ता द्वारा वस्तु/उत्पाद का किया जाता है उतना अधिक लाभ अथवा संतुष्टि प्रदर्शित होगी।

सूचना उत्पाद की पूर्ति में उसके उत्पादन की लागत का महत्वपूर्ण स्थान होता है। किसी उत्पाद के मूल्य ढाँचे के विकास में उसकी लागत आधार बिन्दु का कार्य करती है। किसी सूचना उत्पाद एवं सेवा की लागत उसके उत्पादन में सम्मिलित संसाधनों के निवेश के परिप्रेक्ष्य में आंकी जाती है।

अन्य उत्पादों की तरह सूचना उत्पादों एवं सेवाओं के उत्पादन में दो प्रकार की लागत सम्मिलित होती है।

1. निश्चित लागत (Fixed cost)
2. परिवर्तनीय लागत (Variable cost)

निश्चित लागत वह होती है, जिसमें परिणाम की मात्रा में परिवर्तन पर भी लागत स्थिर रहती है। सूचना उत्पादों के सन्दर्भ में डेटाबेस का क्रय एवं अनुरक्षण, कम्प्यूटर, भवन अनुरक्षण आदि निश्चित लागत होती है। परिवर्तनीय लागत में उत्पादित उत्पादों एवं सेवाओं की मात्रा अथवा परिणाम की मात्रा के आधार पर लागत में परिवर्तन होता रहता है। उदाहरण के लिये चयनित प्रसारण सेवा के सन्दर्भ में विभिन्न कम्प्यूटर प्रोफाइल के निर्माण के लिए वांछित कर्मचारियों की लागत, कम्प्यूटर प्रक्रिया की लागत, मुद्रित परिणाम, प्रसारण का डाक खर्च आदि परिवर्तनीय लागत है। किसी सूचना उत्पाद एवं सेवा पर आने वाली निश्चित लागत एवं परिवर्तनीय लागत के योग से उत्पादन की सम्पूर्ण लागत प्राप्त की जाती है।

7.9 सूचना उत्पादों एवं सेवाओं की मूल्य निर्धारण नीति

प्रायः दो प्रकार के संगठन अस्तिव में पाये जाते हैं एक जो अपने उत्पादों से अधिकतम लाभ अर्जित करते हैं दूसरे वे जो लाभ नहीं अर्जित करते हैं। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र, लाभ न अर्जित करने वाले संगठन अर्थात् सामाजिक संगठन की श्रेणी में आते हैं। इनका मुख्य उद्देश्य सामाजिक कल्याण होता है। सरकार द्वारा वित्त पोषित अथवा पैतृक संस्था के एक अंग के रूप में ये कार्य करते हैं जैसे विश्वविद्यालय।

व्यावसायिक सूचना संगठन अपनी सेवाएं उन्हीं लोगों तक सीमित रखते हैं जो इसके लिए भुगतान करते हैं। लाभ अर्जित करने वाले ये संगठन मुख्यतः निम्न सेवाएं प्रदान करते हैं :–

(क) सारकरण सेवाएं
(ख) वाङ्मयात्मक सेवाएं
(ग) अद्यतन जागरुकता सेवाएं
(घ) निर्देशिका निर्माण
(ङ) अनुवाद सेवाएं
(च) प्रकाशन, लेखन/सम्पादन
(छ) विशेषज्ञ सलाह सेवाएं
(ज) संग्रहण एवं पुनर्प्राप्ति सेवाएं
(झ) साहित्य खोज, आदि

लाभ न अर्जित करने वाले संगठनों में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र मुख्य हैं। इनका उद्देश्य सभी को उनका अधिकार समझते हुए सूचनाएं उपलब्ध कराना है। आज के कठिन वित्तीय दौर में ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों के सामने यह प्रश्न है कि उन्हें अपने उत्पादों एवं सेवाओं के लिए कीमत वसूलनी चाहिए अथवा नहीं। विद्वान में इस विषय में एकमत नही हैं।

सिकुड़ते बजट एवं बढ़ती कीमतों के दबाव में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र अब अपने उपयोगकर्ताओं से शुल्क वसूलने को बाध्य हैं। इसके निम्न तीन कारण हैं :–

(क) लागत वसूली के लिए

(ख) लाभ अर्जित करने के लिए

(ग) अगम्भीर उपयोगकर्ताओं को हतोत्साहित करने के लिए।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के वित्तीय अनुदान का उपयोगकर्ताओं की मांग के साथ सीधा सम्बन्ध नहीं है। उपयोगकर्ताओं से सेवा के बदले शुल्क वसूलने के निम्न लाभ हैं:–

1. उपयोगकर्ताओं से वसूला गया शुल्क ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के वित्तीय आधार को दृढ़ करता है। आय के इस अतिरिक्त स्रोत का उपयोग आवश्यक नई प्रौद्योगिकी प्राप्त करने एवं उपयोगकर्ताओं को अत्यन्त उच्च स्तर की सेवा प्रदान करने के लिए किया जा सकेगा।

2. प्राप्त शुल्क के माध्यम से उत्पन्न सूचनाएं ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों को लागत लाभ विश्लेषण को सम्पादित करने में सहायक होगी जो भविष्य में प्रभावी नियोजन के लिए उपयोग में लायी जायेंगी।

7.9.1 शुल्क के लिए उपयुक्त सेवाएं

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के सभी सेवाओं के लिए शुल्क लगाना उचित नहीं प्रतीत होता है। उपयोगकर्ता शुल्क के लाभों पर विचार के पश्चात् शुल्क के लिए उपयुक्त सेवाओं का परीक्षण आवश्यक है। निम्न ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र सेवाएं शुल्क के लिए उपयुक्त मानी जा सकती है :–

1. उच्च विशेषीकृत सेवाएं जिनमें व्यक्तिगत उपयोगकर्ता को अधिक लाभ होता है एवं समूह लाभ कम। उदाहरणार्थ कस्टोमाइज्ड बिब्लियोग्राफी, एस डी आई आदि।

2. ऐसी सेवाएं जिनका उपयोग कुछ विशेष लोगों द्वारा किया जाता हो।

3. ऐसी सेवाएं जिनका खर्च ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के लिए भारी पड़ रहा हो, जैसे आनलाइन खोज सेवा।

4. उन सेवाओं के लिए उन लोगों से कोई शुल्क नहीं लिया जाना चाहिए जो उनका उपयोग न करते हो, जैसे प्रतिलिपिकरण सेवा।

5. ऐसी सेवाएं जिनके सम्पादन में काफी समय लगता हो अथवा जिनका सम्पादित किया जाना कठिन हो, जैसे वाङ्मय सूची का संकलन, प्रलेखन, सूची निर्माण आदि।

6. ऐसे सेवाओं के लिए शुल्क लिया जाना चाहिए जिसमें कर्मचारियों के उत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार की विशेष आवश्यकता हो।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र द्वारा सेवाओं का शुल्क वसूलने में इस तथ्य का ध्यान रखा जाना चाहिए कि सूचना सेवाओं तक प्रवेश में इस अनावश्यक व्यवधान पैदा नहीं करना चाहिए। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र द्वारा निम्न सेवाओं के लिए प्रायः शुल्क लिया जाता है :–

(क) प्रतिलिपिकरण सेवा

(ख) चयनित सूचना प्रसारण सेवा

(ग) अन्तर्ग्रन्थालय ऋण

(घ) डेटाबेस खोज

(ङ) वाङ्मय सूचियों का संकलन

(च) अनुवाद सेवा

(छ) प्रलेख संप्रेषण

(ज) मुद्रण

(झ) विशेषज्ञ सलाह सेवा आदि।

यह निश्चित तथ्य है कि उपरोक्त सेवाओं को शुल्क युक्त कर लाभ नहीं अर्जित किया ज़ाता है। बल्कि थोड़ी लागत वसूली जाती है ताकि सूचना सेवाओं को अधिक बेहतर बनाया जा सके। विशेषकर उन्हीं सेवाओं का शुल्क वसूला जाता है जिनका उपयोग व्यक्तिगत उपयोगकर्ता अथवा एक छोटे संमूह द्वारा किया जाता है। इनमें समूह लाभ की बजाय व्यक्तिगत लाभ अधिक होता है।

7.10 विपणन युक्तियाँ (Marketing Strategies)

विपणन प्रबन्धन एक क्रिया है जिसके अन्तर्गत एक संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए ग्राहकों के साथ सम्बन्ध स्थापित किये जाते हैं एवं उन्हें वस्तुओं का विक्रय किया ज़ाता है । इस क्रिया को सम्पन्न करने में अनेक कार्य करने पड़ते हैं जैसे विज्ञापन, बाजार का विश्लेषण, आपूर्ति आदि । इन्हें सम्पन्न करने में अनेक युक्तियों की सहायता ली जाती है । इन्हें साधारणतया गोपनीय रखा जाता है ।

बाजार संभावनाओं का विश्लेषण

सूचना उत्पाद एवं सेवाओं की बाजार संभावनाओं का पता लगाने के लिए अनेक कार्य करने पड़ते हैं । इसमें निम्नलिखित विश्लेषण सम्मिलित होते हैं ।

1. बाजार का विश्लेषण
2. उपयोगकर्ता विश्लेषण
3. संगठनात्मक विश्लेषण
4. प्रतिस्पर्धात्मक विश्लेषण

उपयोगकर्ता विश्लेषण

विपणन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्त्व उपयोगकर्ता होता है । अतः उपयोगकर्ताओं अथवा ग्राहकों की आवश्यकताओं का सही—सही ज्ञान बाजार सम्भावना में अत्यन्त आवश्यक होता है । ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों का मुख्य उद्देश्य उपयोगकर्ताओं को सन्तुष्ट करना है । अतः ग्रन्थालय एवं सूचना सेवाओं के विभिन्न श्रेणी के उपयोगकर्ताओं की जानकारी विभिन्न सर्वेक्षण विधियों से प्राप्त कर लेनी चाहिए । सूचना उत्पादों के उपयोगकर्ताओं में ग्रन्थालयाध्यक्ष, सन्दर्भ ग्रन्थालयी, सूचना वैज्ञानिक, ग्रन्थालय विभाग के प्राध्यापक, छात्र सम्मिलित हो सकते हैं।

RIL-091

बाजार का विश्लेषण :

किसी भी उत्पाद के विपणन के लिए बाजार का विश्लेषण अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं प्रारम्भिक चरण होता है । वास्तविक बाजार के निरूपण से बाजार विश्लेषण प्रारम्भ होता है । ग्रन्थालय सेवाओं के अन्तिम बिन्दु पर स्थित उपयोगकर्ता सबसे महत्वपूर्ण बाजार है । सम्पूर्ण बाजार के छोटी–छोटी इकाइयों में बाँटना एवं विश्लेषण करना बाजार विश्लेषण का ही अंग होता है ।

संगठनात्मक विश्लेषण :–

कोई संगठन अपने उत्पादों एवं सेवाओं को बाजार में उतारने के पूर्व अपने उद्देश्यों पर विचार करता है एवं संगठन की कमजोरियों का विश्लेषण करता है। संगठन के साथ उपलब्ध संसाधनों एवं रुकावटों पर भी विचार करना आवश्यक होता है। इन विश्लेषणों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर संगठन उद्देश्य में सफलता प्राप्त कर सकता है।

प्रतिस्पर्धात्मक विश्लेषण :–

विपणन अभिगम में प्रतिस्पर्धियों एवं उनके उत्पादों की जानकारी काफी महत्वपूर्ण होती है। प्रतिस्पर्धियों में अन्य ग्रन्थालय/सूचना संगठन, ग्रन्थालय संघ, लाभ अर्जित करने वाले सूचना मध्यस्थ, आदि सम्मिलित होते हैं।

संक्षेप में बाजार सम्भावनाओं के विश्लेषण में उपयोगकर्ताओं का पता लगाना, बाजार का विश्लेषण करना, बाजार का चयन करना एवं बाजार को स्थित करना महत्वपूर्ण होता है।

सूचना आवश्यकताएं एवं विपणन नीति :

ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में विपणन एक नवीन विचार है। अमेरिका, इंग्लैण्ड आदि देशों में इसका व्यावहारिक उपयोग परिलक्षित होता है किन्तु भारत में मूर्तरूप लेने में समय लग सकता है। कुछ संगठनों ने इस दिशा में अल्प प्रगति की है।

सूचना की विशेषताएं इसे अन्य उत्पादों के विपणन से भिन्न युक्ति अपनाने को प्रेरित करती हैं। यद्यपि मूल विपणन की वही नीतियां सूचना विपणन में कुछ संशोधनों के साथ अपनायी जा सकती है। इसमें इस तथ्य का ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि ग्रन्थालय एवं सूचना, क्षेत्र मूल रूप से सामाजिक क्षेत्र है एवं इसकी सेवाएं सामाजिक सेवाओं की कोटि में आती है। अपने उपयोगकर्ताओं को संतुष्ट करना इनका प्रधान उद्देश्य होता है यद्यपि सभी उत्पादक को संतुष्ट करना इनका प्रधान उद्देश्य होता है यद्यपि सभी उत्पादक अपने उपभोक्ताओं को संतुष्ट करने का प्रयत्न करते हैं लेकिन इसके मूल में अधिकाधिक आर्थिक लाभ कमाने की भावना होती है जबकि सूचना सेवाएं इनसे भिन्न होती हैं।

पिछले तीन दशकों से सूचना सेवाओं के विपणन का परीक्षण किया जा रहा है, जिसमें आधुनिक विपणन विधियों को अपनाया जा रहा है जिसमें उपभोक्ताओं की आवश्यकता की पहचान, प्रचार, विज्ञापन, सेवाओं का विकास सम्मिलित है। निश्चित रूप से इन विधियों से सूचना सेवाओं के विस्तार में सहायता मिली है। इस तरह विपणन उपयोगकर्ताओं एवं सूचना संगठनों के बीच आदान–प्रदान को बढ़ावा देने वाले एक उपकरण के रूप में सामने आया है।

उपयोगकर्ताओं की सूचना आवश्यकताएं समझने के लिए निम्न विधियों का उपयोग किया जा सकता है:

(क) साक्षात्कार

(ख) प्रश्नावली

(ग) निरीक्षण

(घ) व्यक्तिवृत्त का अध्ययन (case study)

RIL-091

(ङ) उपयोगकर्ताओं से प्राप्त सुझाव।

लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस, ओ सी एल सी आदि अनेक संगठनों नें अपने सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का विस्तार विपणन के लिए कर दिया है। लेकिन उनकी विपणन नीति सार्वजनिक नहीं है। ये मांग पर शुल्क लेकर सूचनाएं उपलब्ध कराते हैं।

सूचना उपलब्धता के बारे में सूचना में निहित अनिश्चितता की भी इसके विपणन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। किस सूचना उत्पाद एवं सेवा से उपयोगकर्ता को कितनी एवं कैसी सूचना मिल पायेगी ? यह प्रायः अनिश्चित सा रहता है। उत्पाद के बारे में पूरी सूचना उपलब्ध हो जाने पर भी उसकी उपयोगिता कम होने का खतरा रहता है।

विपणन मिश्रण (Marketing Mix) :

विपणन मिश्रण में निम्नलिखित तत्त्व सम्मिलित होते हैं :–

1. उत्पाद
2. डिजाइन
3. मूल्य निर्धारण
4. प्रवर्तन/संचार
5. स्थान/वितरण
6. कर्मचारी।

विपणन मिश्रण के उपरोक्त तत्त्व विपणन प्रबन्धन में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। इसमें वास्तविक उपयोगकर्ताओं का प्रमुख स्थान होता है। प्रभाव बाजार स्थापन एवं संचालन के लिए प्रबन्धक को इनका आपस में एक दूसरे से सम्बन्ध जान लेना चाहिए।

सूचना की विपणन युक्ति उपरोक्त तत्त्वों एवं उनकी विशेषताओं पर आधारित होनी चाहिए। बाजार की आवश्यकता के अनुरूप इनमें आपस में संतुलन स्थापित किया जाना चाहिए। एक बार सम्पूर्ण युक्ति स्थापित हो जाने पर सूचना सेवा का आधार बनाना सरल हो जायेगा।

7.11 विपणन कार्यक्रम एवं मूल्यांकन

सूचना उत्पादों एवं सेवाओं के विपणन का विचार नया है अतः इसे कर्मचारियों द्वारा स्वीकार कर लेने के बाद ही आगे बढ़ाया जा सकता है । संगठन के सभी लोगों को वैचारिक धरातल पर सहमत होने के पश्चात संगठनों की वर्तमान स्थितियों का विश्लेषण एवं आंकलन करना चाहिए।

विपणन योजना के क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में निम्न तत्त्व सम्मिलित होते हैं :–

(1) विपणन परीक्षण (Marketing Audit)

(2) विपणन योजना (Marketing Programme)

(3) सेवा जीवंतता (Service Rejevenation)

विपणन परीक्षण (आडिट)

किसी भी विपणन योजना में सभी उपयोगी पक्षों को सम्मिलित करना आवश्यक होता है। विपणन परीक्षण इस अर्थ में विपणन योजना के लिए काफी उपयोगी होता है कि कोई तत्त्व छूटा नहीं है। परीक्षण में सर्वप्रथम संगठन को प्रभावित करने वाले स्थानीय पक्षों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। संगठन के उपयोगकर्ताओं का समूह इसका वर्तमान एवं भविष्य का आकार, विशेषताएं एवं

RIL-091

उपयोगकर्ताओं की माँग इसमें सम्मिलित होती है। उदाहरणार्थ एक विश्वविद्यालय ग्रन्थालय में विभिन्न विभागों/संकायों की भविष्य की शैक्षणिक योजनाओं को जानकर तदनुरूप भविष्य की सम्भावित मांग के अनुसार योजना बनायी जा सकती है।

दूसरे चरण में संगठन की वर्तमान विपणन प्रणाली, संगठन के दीर्घ एवं संक्षिप्त अविध के लक्ष्य, संसाधनों के विभाजन आदि तथ्यों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। अन्तिम चरण में विपणन योजना में सम्मिलित सभी पक्षों का नियमित पुनः आंकलन सुनिश्चित किया जाता है।

विपणन कार्यक्रम :

किसी विपणन कार्यक्रम में निम्न तत्त्व सम्मिलित किये जाते हैं :–

1. ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के उद्देश्यों का पुनः परीक्षण एवं निर्धारण।
2. संगठन की क्षमताओं के अनुरूप लक्ष्यों का निर्धारण।
3. उपयोगकर्ता समूह एवं उनकी आवश्यकताओं की पहचान।
4. विपणन में सम्मिलित किये जाने वाले सूचना उत्पादों एवं सेवाओं की पहचान, वसूले जाने वाले शुल्कों का निर्धारण।
5. उपलब्ध संसाधनों का सर्वेक्षण।
6. योजना विकास पैकेज का निर्धारण।
7. वरीयता क्रम में क्षेत्रों की पहचान।
8. उपयोगकर्ता प्रशिक्षण योजना का विकास।
9. मूल्यांकन प्रक्रिया का विकास।

मूल्यांकन :

विपणन कार्यक्रम की योजना में मूल्यांकन पक्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। मूल्यांकन पक्ष के अभाव में विपणन कार्यक्रम योजना की सफलता संदिग्ध हो जाती है। मूल्यांकन में निम्न चरण सम्मिलित किये जाते हैं :–

(क) मूल्यांकन के क्षेत्र का निर्धारण, यह कार्य प्रश्नावली बनाकर तथ्यों को एकत्रित करने से सम्पादित होता है। इसमें कार्य सम्पादन, लागत उपयोगिता, गुणवत्ता, उत्पाद अथवा सेवा को सम्पादित करने में लगा समय सम्मिलित किए जाते हैं।

(ख) मूल्यांकन कार्यक्रम का अभिकल्पन। कार्य योजना की तैयारी इसमें सम्मिलित होती है।

विपणन कार्यक्रम के क्रियान्वयन के पश्चात् कार्यक्रम का मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है। यह मूल्यांकन निम्न से सम्बन्धित होता है :–

(1) उद्देश्य

(2) उत्पाद एवं सेवाएं

(3) कार्य सम्पादन

(4) वितरण माध्यम

(5) विकास।

मूल्यांकन कार्यक्रम के क्रियान्वयन की कमियों को इंगित करता है एवं दूर करने में सहायक होता है। ग्रन्थालय एवं सूचना क्षेत्र में मूल्यांकन उपयोगकर्ता को उत्पादों एवं सेवाओं का अधिकतम लाभ

सुनिश्चित करता है ।

सेवा जीवन्तता एवं विविधता

वर्तमान समय में ग्रन्थालय एवं सूचना उत्पादों एवं सेवाओं में प्रौद्योगिकी के प्रभाव में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं । इन उत्पादों एवं सेवाओं का प्रभाव विपणन पर भी पड़ता है एवं बाजार भी इनके विकास को प्रभावित करता है । बाजार स्थिर होने पर विकास भी रुक जाता है लेकिन यदि विकास जारी रहता है तो भी सेवाओं अथवा बाजार की खोज आवश्यक हो जाती है ।

विपणन की उपर्युक्त स्थिति में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र निम्न विकल्प अपना सकते हैं :–

- यथास्थिति बनाये रखना
- नये बाजार की खोज
- नये क्षेत्रों में विविधता पैदा करना
- वर्तमान बाजार में नयी सेवाएं प्रदान करना ।

सूचना समाज में हो रहे परिवर्तनों के आधार पर कोई संगठन उपरोक्त में से कोई विकल्प अपना सकता है । उपयोगकर्ताओं के व्यवहार; तकनीकी विकास एवं शासकीय नीतियों में परिवर्तन से कोई विशिष्ट विकल्प चुनने का दबाव बनता है ।

ग्रन्थालय एवं सूचना सेवाओं को जीवंतता प्रदान करने अथवा नया रूप देने के लिए सेवा पुनर्चलन युक्तियां अपनायी जाती हैं । इसके अन्तर्गत मृतप्राय सेवाओं को नव जीवन प्रदान करना, उनके जीवन को बढ़ाना, आधुनिकता लाना आदि सम्मिलित होते हैं । सेवा में विविधता एवं जीवन्तता के लिए पुनः पुनः अभिकल्पन, पुनः प्रसारण/विज्ञापन आदि अनेक युक्तियां उपयोग में लायी जाती हैं ।

7.12 निष्कर्ष

सूचना विपणन का विचार एक आधुनिक एवं नवीन विचार है जिसे भारत में भी विभिन्न सूचना संगठनों द्वारा आजमाया जा रहा है। आज विपणन योग्य अन्य उत्पादों/सेवाओं की तरह सूचना उत्पादों एवं सेवाओं की बाजार में मांग है। सामान्यतः विपणन के विभिन्न प्रचलित सिद्धान्त एवं मानक सूचना विपणन के लिए भी उपयोगी हैं लेकिन सूचना की विशेषताओं के आधार पर इसकी अन्य वस्तुओं के विपणन से कुछ भिन्नता भी परिलक्षित होती है। सूचना विपणन वास्तविक उपयोगकर्ताओं को सूचना उत्पादों एवं सेवाओं द्वारा संतुष्टि प्रदान करने में सहायक है।

इस इकाई में विभिन्न विपणन युक्तियों जैसे बाजार विश्लेषण, उपयोगकर्ता विश्लेषण, संगठनात्मक, प्रतिस्पर्धात्मक विश्लेषण का विवरण निहित है। सूचना विपणन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्त्व उपयोगकर्ता होता है। अतः उसकी सूचना आवश्यकताओं का विश्लेषण एवं निरूपण अत्यन्त आवश्यक होता है। सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का मूल्य निर्धारण एक अन्य महत्वपूर्ण विपणन कारक है। घटते बजट एवं सामग्रियों की बढ़ती कीमतों के परिप्रेक्ष्य में ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों को अपने सेवाओं के बदले उपयोगकर्ताओं से कुछ शुल्क वसूलने की बाध्यता उपस्थित हो गयी है। भारतीय परिदृश्य में सूचना विपणन का वास्तविक व्यावहारिक परीक्षण अभी किया जाना है। इस दिशा में मात्र कुछ संगठनों ने थोड़ी प्रगति की है।

इकाई 8 : वित्तीय प्रबन्धन : बजट, लेखाकरण एवं लेखा परीक्षण

FINANCIAL MANAGEMENT : ACCOUNTING AND AUDITING

संरचना :

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 ग्रन्थालय की आय के स्रोत

8.3 बजट एवं इसके प्रकार

8.4 वित्तीय आकलन की विधियाँ

8.5 बजट का औचित्य प्रतिपादन

8.6 लेखाकरण

8.7 लेखा परीक्षण, उद्देश्य एवं प्रकार

8.8 निष्कर्ष

8.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई का उद्देश्य आपको निम्नलिखित का ज्ञान कराना है :–

(क) बजट की अवधारण एवं इसका उद्देश्य स्पष्ट करना

(ख) बजट के प्रकार एवं विभिन्न वित्तीय आंकलन की विधियों का ज्ञान कराना

(ग) प्रस्तुत बजट के औचित्य प्रतिपादन के आधारों को जानना

(घ) लेखाकरण एवं इसके उद्देश्यों से अवगत कराना एवं

(ङ) लेखा परीक्षण की अवधारणा व उद्देश्यों के साथ इसके विभिन्न प्रकारों से परिचित कराना है।

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

अन्य संस्थाओं की तरह ग्रन्थालय के व्यवस्थित संचालन के लिए वित्त की आवश्यकता होती है। वित्त की उचित व्यवस्था न होने से ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र की गतिविधियों एवं सेवाओं का संचालन सम्भव नहीं हो सकता है। ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र के सुसंचालन के लिए वित्त की व्यवस्था करने के कार्य को वित्तीय प्रबन्धन कहा जाता है।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र सार्वजनिक संस्था के रूप में कार्य करते हैं, इनका कार्य सूचना सेवा प्रदान करना होता है। ये धन कमाने के उद्देश्य से संचालित नहीं होते। सामान्यतया ग्रन्थालय किसी

संस्था अथवा संगठन से सम्बन्धित होते हैं। अतः पूर्व में इनको बजट आदि बनाने के कार्य से मुक्त रखा गया था। बाद में यह देखा गया कि बजट वित्तीय योजना के साथ–साथ एक नियंत्रण युक्ति भी है, इसको दृष्टिगत रखते हुए ग्रन्थालयी के लिए ग्रन्थालय बजट बनाना अनिवार्य हो गया।

बजट का तात्पर्य एक ऐसे वित्तीय प्रबन्धन से है, जिसमें सभी खर्चों, जैसे वेतन, प्रलेख, उपकरण आदि, को दर्शाया जाता है। आज के समय में घटते बजट ने ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के प्रबन्धकों को विवश कर दिया है कि वे अपने खर्चे घटायें तथा खर्च किये जा रहे धन की उपयोगिता सिद्ध करें। ऐसी स्थिति में बजट बनाने का कार्य कठिन होता जा रहा है। अब ऐसे बजट को प्राथमिकता दी जा रही है जिसमें ऐसी योजनाओं को सम्मिलित किया जा रहा है जिनमें कम से कम वित्तीय लागत पर अधिकाधिक आगम/उपयोगिता प्राप्त की जा सके।

8.2 ग्रन्थालय की आय के स्रोत (Sources of Finance)

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र को अपनी गतिविधियों, योजनाओं एवं सेवाओं को संचालित करने के लिए सतत् वित्त की आवश्यकता होती है। ग्रन्थालय के भवन निर्माण, प्रलेखों का क्रय, कार्मिकों के वेतन, बिजली, पानी, बैठने की व्यवस्था आदि सभी के लिए धन आवश्यक होता है। स्वाभाविक है कि धन को प्राप्त करने के साधन भी होते हैं अर्थात् जिन साधनों से ग्रन्थालय के संचालन के लिए धन एकत्रित किया जाता है उन्हें आय के स्रोत कहते हैं। विभिन्न श्रेणी के ग्रन्थालयों के आय के स्रोत भी भिन्न होते हैं। निम्न तालिका में विभिन्न श्रेणी के ग्रन्थालयों के आय के स्रोत दर्शाये गये हैं :–

क्र.सं	शैक्षणिक ग्रन्थालय	विशेष ग्रन्थालय	सार्वजनिक ग्रन्थालय
1.	2.	3.	4.
1.	विश्वविद्यालय/कालेज/स्कूल बजट	उनके पितृ संगठन से प्राप्त धन	पुस्तकालय कर
2.	वि.अ.आ.का अनुदान (UGC Grants)	परियोजनाओं के लिए आवंटित धन	शासकीय अनुदान
3.	शासकीय अनुदान	वित्त प्रदायक संगठन, जैसे एफ. आई.डी. यूनेस्को आदि	निधि एवं दान
4.	ग्रन्थालय शुल्क	संचित निधि	
5.	दण्ड (विलम्ब शुल्क आदि)	प्रकाशनों की विक्री	अन्य स्रोत
6.	प्रकाशनों की विक्री	सूचना/अनुवाद/प्रतिलिपिकरण सेवाओं के बदले प्रधन	
7.	प्रलेखन, प्रतिलिपिकरण सेवाओं का शुल्क	सदस्यता शुल्क	
8.	संचित निधि एवं दान	अन्य स्रोत	
9.	अन्य स्रोत		

उपयुक्त तालिका में दर्शाये गये वित्तीय स्रोतों में कुछ में मतैक्य नहीं है, जैसे सदस्यता शुल्क एवं सेवा शुल्क आदि के बारे में लोगों में मतभेद बना हुआ है। भारत में ग्रन्थालय विज्ञान के जनक डॉ0 रंगनाथन का मानना है कि ग्रन्थालयों, विशेषकर सार्वजनिक ग्रन्थालयों द्वारा अपने सेवा के बदले कोई शुल्क नहीं लिया जाना चाहिए। यद्यपि वर्तमान वित्तीय कठिनायों के दौर में अन्य विद्वानों का तर्क ग्रंथालय/सूचना सेवा के बदले कुछ धन प्राप्त करने के पक्ष में है।

8.3 बजट एवं इसके प्रकार

आगामी वर्ष की आय एवं व्यय की वित्तीय योजना का विवरण ही बजट है। चूँकि किसी भी ग्रन्थालय की आय एवं व्यय संबंधी कार्य सामान्य कार्य नहीं है। अतः इसके लिए पहले से ही आगामी वर्ष की आय एवं व्यय की योजना का अनुमान लगाना पड़ता है। आय एवं व्यय के इस वार्षिक अनुमान को ही हम ग्रन्थालय बजट कहते हैं। विल्सन एण्ड टॉबर के शब्दों में – आय-व्ययक (बजट) एक निश्चित समय के लिए ग्रन्थालय की अनुमानित आय एवं व्यय का वित्तीय लेखा है। यह एक विशिष्ट कार्य के लिए धन आवंटित किये जाने की योजना भी है।

बजट की विशेषताएं :

ग्रन्थालय का बजट बनाते समय निम्न तथ्यों पर ध्यान रखना होता है जिससे उसे आदर्श बजट का स्वरूप दिया जा सके :–

(i) लक्ष्यात्मक

(ii) समय पर

(iii) निश्चित अवधि

(iv) विभाजित आधार

(v) तथ्यों पर आधारित

(vi) पिछले वर्ष के बजट पर आधारित

(vii) आय के सुदृढ़ साधन

(viii) व्यय से सम्बन्धित उचित कारण

(ix) ग्रन्थालय सेवाओं पर सकारात्मक प्रभाव।

8.3.1 बजट के प्रकार

निम्न प्रकार के बजट हो सकते हैं :–

(क) लाइन/आईटम बजट

(ख) फार्मूला बजट

(ग) यूनिट-कास्ट बजट

(घ) लम्प-सम बजट

(ङ) प्रोग्राम बजट

(च) आपरेटिंग बजट

(छ) कैपिटल बजट

(ज) बैलेन्स सीट बजट

RIL-091

लाइन/आईटम बजट :

यह सबसे सामान्य प्रकार का बजट होता है। इस तरह के बजट में व्यय के मदों को विस्तृत भागों में विभाजित कर दिया जाता है, जैसे–वेतन, पुस्तकें एवं सामयिकी, उपकरण, जिल्दबन्दी एवं अन्य व्यय तथा जिन्हें पुनः उपवर्गों में विभाजित किया जाता है। बजट निर्मित करने की यह एक सामान्य एवं परम्परागत विधि है।

फार्मूला बजट :

एक अन्य प्रकार का बजट फार्मूला बजट है। इस प्रकार के बजट में संसाधनों का बंटवारा, दो अथवा अधिक विशेषताओं के बीच ज्ञात अथवा स्वीकृत किए गए सम्बन्धों पर आधारित होता है। उदाहरण के स्वरूप कोई संगठन अपने ग्रन्थालय के लिए किसी विशिष्ट फार्मूला के आधार पर धन उपलब्ध कराता है। इस फार्मूला के लिए आवश्यक डेटा छात्रों के पंजीकरण, शैक्षणिक प्रोग्राम, संकायों की संख्या, पहले से उपलब्ध संग्रह तथा अन्य तथ्यों से प्राप्त किये जाते हैं।

लम्प-सम बजट :

इस तरह के बजट में संगठन द्वारा एक निश्चित धनराशि ग्रंथालय को उपलब्ध करा दी जाती है। यह निश्चित धनराशि किसी ठोस आधार एवं तर्क पर आधारित न होकर मनमाने आधार पर निर्धारित होती है।

प्रोग्राम बजट (Program Budget) :

ग्रंथालय के विभिन्न क्रियाकलापों अथवा प्रोग्राम के अनुसार बजट निर्मित करने का विचार एक नवीन विचार है। बजट निर्माण की इस विधि में मुख्य केन्द्र बिन्दु ग्रंथालय के क्रियाकलाप होते हैं एवं धनराशि का प्रावधान प्रोग्राम अथवा ग्रंथालय सेवाओं के आधार पर निश्चित किया जाता है जिन्हें ग्रंथालय में आयोजित करने की योजना होती है। ऐसा बजट प्रोग्राम में आयी लागत के आधार पर बनाया जाता है एवं प्रतिवर्ष इस प्रकार के बजट में यह पहले से निश्चित करना पड़ता है कि क्या प्रारम्भ किये गये प्रोग्राम को आगे जारी रखना है या संशोधित करना है अथवा बिलकुल ही समाप्त करना है।

आपरेटिंग बजट :

ऐसा बजट जो किसी निश्चित अवधि, जैसे एक वर्ष के लिए ग्रंथालय के अनुमानित आय एवं व्यय का विवरण प्रस्तुत करता है, आपरेटिंग बजट कहलाता है। इसमें ग्रंथालय के वार्षिक व्यय जैसे वेतन प्रलेख क्रय, एवं अन्य खर्चों को दर्शाया जाता है।

कैपिटल बजट :

यह अनावर्ती प्रकार का होता है, इसमें अलग-अलग आइटम का कोई स्थान नहीं होता है। इसमें भवन, फर्नीचर एवं उपकरण जैसे सम्पत्तियों को सम्मिलित किया जाता है। यद्यपि पुस्तकें, पत्रिकाएं आदि ग्रंथालय की सम्पत्ति ही मानी जाती है फिर भी इन्हें कैपिटल बजट में सम्मिलित नहीं किया जाता है क्योंकि इनके क्रय के लिए प्रत्येक बजट में प्रावधान करना पड़ता है अर्थात इन पर होने वाला व्यय आवर्ती (Recurring) प्रकार का होता है।

बैलेन्स–सीट बजट :

यह एक ऐसा बजट है जिसमें यह सूचना रहती है कि लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किसी निश्चित तिथि तक व्यय किये गये धन का विवरण एवं अवशेष बचे धन का विवरण सम्मिलित रहता है।

RIL-091

लागत (Costs) :

लागत को कई ढंग से व्यक्त किया जा सकता है:–

- – निश्चित लागत
- – परिवर्तनीय लागत
- – प्रत्यक्ष लागत
- – अप्रत्यक्ष लागत।

निश्चित लागत (Fixed Costs) :

निश्चित लागत वह लागत है जो उत्पादन की मात्रा अथवा प्रक्रिया में थोड़े परिवर्तनों से प्रभावित नही होता ।

परिवर्तनीय लागत (Variable Costs) :

ऐसी लागत जो उत्पादन की मात्रा अथवा प्रक्रिया में अल्प परिवर्तनों से बदल जाती है, जैसे सामयिकी प्रकाशनों का क्रय।

प्रत्यक्ष लागत (Direct costs) :

ग्रंथालय के क्रिया कलापों से जुड़े प्रत्येक श्रेणी के कार्मिकों से जुड़ी लागत पूरी तरह प्रत्यक्ष लागत है।

अप्रत्यक्ष लागत (Associated Costs) :

आपरेशन से जुड़ी लागत जो सेवा लागत में परिवर्तित हो जाती है, अप्रत्यक्ष लागत कहलाती है।

ग्रंथालय व्यय (Library Expenditure) :

बजट बनाने में लागत विश्लेषण उद्देश्य के अनुसार अनुमानित खर्च पर आधारित हो सकता है। इसे दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है :–

मूल व्यय एवं व्यय आवर्ती अथवा अद्यतन

(क) **मूल व्यय (Capital Expenditure) :-** स्थान को क्रय करना, भवन निर्माण, उपकरण, साज–सज्जा एवं अन्य स्थायी सामग्रियों पर होने वाला मूल व्यय की श्रेणी में आता है।

(ख) **आवर्ती व्यय (Current Expenditure) :-** कर्मचारियों के वेतन, बिजली, पानी, टेलीफोन, परिवहन गाड़ियां एवं अन्य सामायिक व्यय आवर्ती अथवा अद्यतन व्यय कहलाते हैं।

व्यय को निम्न तीन श्रेणियों में रखकर भी इनका परीक्षण किया जा सकता है:–

1. प्रारम्भिक लागत (Start-up or Initial costs)
2. वार्षिक बजट (Annual operating budget)
3. भविष्य की आवश्यकताएं (Future need)

बजट बनाने के उद्देश्य (Objectives of Budgeting) :-

ग्रंथालय/सूचना केन्द्र प्रतिवर्ष अपनी आय एवं व्यय का अनुमान करके उसको नियोजित रूप में संचालित करने के लिए अपने बजट का निर्माण करते हैं। नियोजित आय एवं व्यय हेतु बजट का निर्माण आवश्यक है। बजट बनाने के निम्न उद्देश्य होते हैं:–

(1) बजट के माध्यम से किसी निश्चित अवधि के लिए वित्तीय स्थिति अर्थात आय एवं व्यय में संतुलन पहले से ही हो जाता है,

(2) ग्रंथालय की आय एवं व्यय में संतुलन बनाये रखने के लिए बजट निर्माण आवश्यक है,

(3) बजट के माध्यम से ही उपयोगी एवं आवश्यक मदों पर ही धनराशि व्यय होती है,

(4) बजट एक वित्तीय नियन्त्रण युक्ति की तरह प्रभावी है,

(5) परिणामों के मूल्यांकन के लिए बजट एक उपकरण है,

(6) भविष्य में दी जाने वाली सेवाओं के विवरण प्रस्तुतीकरण हेतु,

(7) भावी नीतियों के निर्माण में बजट आधार के रूप में कार्य करता है,

(8) किसी निश्चित अवधि में ग्रंथालय के संसाधनों एवं व्यय के बीच प्रभावी समन्वय के लिए बजट उपयोगी है।

बजट के गुण

किसी बजट में निम्न गुण होने चाहिए :-

(क) नम्यता, जिससे भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके,

(ख) सरलता, बजट नियन्त्रण के लिए इसकी प्रक्रिया सरल रखी जानी चाहिए

(ग) बजट के उद्देश्यों को प्रभावी ढंग से लागू करने की योग्यता भी बजट का विशिष्ट गुण माना जाता है।

बजट निर्माण में विचारणीय बिन्दु :–

बजट का निर्माण करते समय कुछ तथ्यों की ओर ध्यान देना आवश्यक होता है सामान्य रूप से बजट निर्माण में निम्न बिन्दु विचारणीय हो सकते हैं:–

(क) संगठन के प्रकार, जैसे शैक्षणिक, औद्योगिक, शोध आदि

(ख) संगठन का आकार

(ग) क्या ग्रंथालय बजट स्वतन्त्र रूप से तैयार किया जाना है अथवा संगठन के बजट के एक भाग के रूप में

(घ) ग्रंथालय उपयोगकर्ताओं का प्रकार

(ड.) प्रलेख संग्रह

(च) ग्रंथालय/सूचना केन्द्र द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाएं।

8.4 वित्तीय आंकलन की विधियां (Methods of Financial Estimation)

बजट के निर्माण में वित्तीय अवकलन अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। ग्रन्थालय में उपयोगी एवं प्रभावी सेवा प्रदान करने के लिए निम्न महत्वपूर्ण विधियों का उपयोग वित्तीय आवश्यकताओं के आकलन के लिए किया जाता है :-

प्रति व्यक्ति पद्धति (Per Capita Method) :

ग्रन्थालय/सूचना केन्द्र में आवर्ती व्यय के आँकलन की एक महत्वपूर्ण पद्धति प्रति व्यक्ति पद्धति है। इस पद्धति में प्रति पाठक पर निश्चित धनराशि व्यय करने का प्रावधान किया जाता है जिसमें व्यय की जाने वाली निश्चित धनराशि का निर्धारण लागत लेखा विधि से किया जाता है। इसमें उपयोगकर्ता के स्तर को ध्यान में रखते हुए यह प्रति व्यक्ति प्रत्येक स्तर पर अलग-अलग होता है। डॉ0 रंगनाथन ने सन् 1965 में प्रति छात्र रु0 20.00 एवं प्रति अध्यापक रु0 300.00 अथवा प्रति छात्र रु0 50.00 के हिसाब से 1000 छात्रों के लिए रु0 50,000.00 वर्ष में व्यय करने का आँकलन किया था।

योग पद्धति की लागत (Cost of Addition Methad) :

इस पद्धति में ग्रन्थालय में प्रति वर्ष नये जोड़े जाने वाले प्रलेखों की लागत के आधार पर कुल वार्षिक व्यय का अनुमान लगाया जाता है। ऐसा मान लिया जाता है कि यह योजना प्रत्येक वर्ष के अन्त में सम्मिलित किये जाने वाले प्रलेखों की कुल संख्या की सूचना देती है जिससे बजट बनाना आसान हो सकता है।

विस्तार पद्धति (Method of details) :—बजट निर्माण की इस विधि में आवर्ती व्यय के सभी मदों पर आने वाले व्यय को योग कर लिया जाता है, जैसे वेतन, ग्रन्थों का क्रय, अनुरक्षण आदि मदों पर होने वाला व्यय । इस धनराशि को बराबर हिस्सों में विभाजित कर एक भाग को कर्मचारियों के वेतन एवं दूसरा भाग अन्य मदों में व्यय किया जाय । कर्मचारियों के वेतन पर होने वाले व्यय का आँकलन यू0जी0सी0 के स्टाफ फार्मूले एवं उसके द्वारा स्वीकृत नवीनतम वेतनमानों के अनुसार किया जाता है । भारत सरकार द्वारा नियुक्त ग्रन्थालय सलाहकार समिति ने इस पद्धति को सार्वजनिक ग्रन्थालयों के लिए स्वीकार किया है ।

अनुपात विधि (Proportionate Method) :— अधिकतर ग्रन्थालय किसी संगठन के एक भाग अथवा इकाई के रूप में कार्य करते हैं । सामान्यतया यह माना जाता है कि ग्रन्थालय, विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय का हृदय होता है इसलिए यह पैतृक संगठन अथवा विश्वविद्यालय का उत्तरदायित्व होता है कि अपने बजट में से किसी निश्चित अनुपात के आधार पर ग्रन्थालय के संचालन के लिए धन राशि उपलब्ध कराए ।

इस विधि में वित्तीय आँकलन किसी मान्य सिद्धान्त पर आधारित नहीं होता है । कुल बजट के कुछ प्रतिशत, जिसका निर्धारण ग्रन्थालय के लिए किया जाना है, का निश्चित सर्वमान्य सूत्र उपलब्ध नहीं है । औद्योगिक इकाइयों के ग्रन्थालयों के लिए उनके कुल लेन-देन का 2% एवं शोध संस्थाओं के कुल बजट का 6.25%ग्रंथालयों के लिए आबंटित करने की संस्तुति की गयी है। अखिल भारतीय ग्रंथालय सम्मेलन (1968) ने कुल व्यय का 6% से 10%भाग ग्रंथालयों के लिए उपलब्ध कराने को कहा है। यह प्रबन्धन पर निर्भर करता है कि वह ग्रंथालय के लिए कितना प्रतिशत धन आबंटित करता है।

प्रोग्राम पर आधारित बजट (Programmed Budgeting) :

बजट निर्माण करने की यह एक वैज्ञानिक पद्धति है। इसमें किसी संस्था कि विभिन्न इकाइयों के कार्यक्रमों एवं उनके निष्पादन के अनुसार बजट तैयार किया जाता है। इस विधि में योजना इसके केन्द्र में होती है। यह ग्रंथालय के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को लेकर प्रारम्भ होती है तथा विभिन्न प्रोग्राम एवं सेवाओं की स्थापना पर सम्पन्न होती है। यह विधि ग्रंथालय के नियोजित क्रियाकलापों, प्रोग्राम एवं सेवाओं तथा उन्हें परियोजना के रूप में क्रियान्वित करने एवं आवश्यक सामग्रियों को अन्तिम रूप में बजट के माध्यम से प्रदर्शित करने में सम्बन्ध स्थापित करती है।

प्रोग्राम पर आधारित बजट बनाने में प्रोग्राम बजट एवं परफारमेंस बजट, दोनों की विशेषताओं को सम्मिलित किया जाता है। वास्तव में यह प्लानिंग– प्रोग्रामिंग सिस्टम (PPBS) का ही एक भाग होता है जिसमें उद्देश्यों के सन्दर्भ में व्यय का विश्लेषण किया जाता है न कि व्यय के मदों का। यह पद्धति प्रबन्धकों के लिए अत्यन्त सहायक एवं लाभप्रद है। इस प्रकार के बजट निर्माण में निम्न तत्व

RIL-091

सम्मिलित होते हैं:–

1. संगठन के उद्देश्य
2. क्रियाकलाप (एवं प्रक्रिया का विश्लेषण) जो उद्देश्यों से सम्बद्ध हो;
3. लागत
4. लाभ एवं उत्पाद एवं
5. विकल्पों का विश्लेषण।

शून्य पर आधारित बजट (Zero Based Budget) :

शून्य पर आधारित बजट का विचार पीटर पीर (Peter Pyhrr), संयुक्त अमेरिका की देन है। जिसका इन्होंने सर्वप्रथम एक इलेक्ट्रानिक कम्पनी को पुनजीर्वित करने के दौरान प्रयोग किया। इस प्रकार के बजट में प्रबन्धक/ग्रन्थालयी को बजट का विवरण विस्तार से देना पड़ता है एवं व्यय को न्यायोचित भी सिद्ध करना पड़ता है। यह विधि परम्परागत विधियों की तुलना में अच्छी है। वास्तव में इस विधि के द्वारा प्रस्तुत किये गये बजट ग्रन्थालय की बजट सम्बन्धी आवश्यकताओं, गतिविधियों एवं सेवाओं का एक पूर्ण विवरण प्रदर्शित करते हैं।

यह बजट इसलिए शून्य पर आधारित बजट कहा जाता है कि इसमें पूर्व के बजट को आधार नहीं बनाया जाता है बल्कि नये सिरे से बिलकुल नया बजट प्रस्तुत किया जाता है। इसमें वित्त सम्बन्धी विवरण पिछले वर्ष का सन्दर्भ दिये बिना प्रस्तुत किया जाता है। यहाँ पर कोई भी राशि इसलिए स्वीकृत नहीं की जाती है कि वह भूत काल में स्वीकृत की गयी है। पहले से जारी कार्यों की जाँच के बाद ही उन्हें आगे जारी रखने के लिए सम्मिलित किया जाता है।

शून्य पर आधारित बजटिंग में निम्न कदम उठाये जाते हैं :–

1. बजट निर्माण के उद्देश्य का निर्धारण,
2. बजट की सीमा का निर्धारण,
3. निर्गम इकाइयों का विकास,
4. वर्तमान सेवाओं का मूल्यांकन कर भविष्य के लिए निर्णय,
5. कार्य की वास्तविक लागत कितनी है एवं मूर्त व अमूर्त रूप से लाभ कितना है,
6. क्रिया स्तर की अनुमानित लागत क्या होनी चाहिए एवं ऐसी क्रिया से अनुमानित लाभ कितना होगा,
7. क्या कार्य उसी रूप में चलना है अथवा उसमें कोई परिवर्तन करना है ?

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि बजट निर्माण में लागत लाभ विश्लेषण को आगे प्रयोग में लाना मात्र है।

उचित वित्तीय आँकलन के निर्धारक तत्व :

अनेक ऐसे अभिगम हैं जिनका अनुपालन बजट में उचित राशि निर्धारण के लिए किया जा सकता है। निम्न तत्व बजट की राशि निर्धारण में संज्ञान के लिये जा सकते हैं :–

1. अतीत के खर्चों की समीक्षा
2. ग्रन्थालय सांख्यिकी एवं अन्य स्रोत से प्राप्त आँकड़ों का उपयोग
3. ग्रन्थालय मानकों का उपयोग, जैसे

RIL-091

(क) सरलीकृत कर्मचारी सूत्र

(ख) स्थान के निर्धारण में प्रयुक्त सूत्र

(ग) प्रलेखों की संख्या के आकलन से सम्बन्धित सूत्र

डॉ0 एस0 आर0 रंगनाथन द्वारा विकसित कर्मचारी सूत्र सबसे उपयुक्त है जिसका उपयोग ग्रन्थालय में कर्मचारियों की आवश्यकता के निर्धारण में किया जाता है। उन्होंने ग्रन्थालय प्रशासन नामक अपनी पुस्तक में विस्तार से इस विषय में चर्चा की है जिसमें प्रत्येक कर्मचारी को एक वर्ष में कितना कार्य करना चाहिए, उनके कार्य की प्रकृति एवं प्रत्येक अनुभाग में वांछित कार्मिकों के प्रकार, आदि विवरण दिये गये हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी रंगनाथन के कर्मचारी सूत्र को अपनाया हुआ है।

ग्रन्थालयी एवं विद्वान श्री रैण्डल (Randall, 1976) ने प्रत्येक 60–80 सक्रिय ग्रन्थालय सदस्यों के लिए एक व्यावसायिक की संस्तुति की है। इस व्यावसायिक को एक से तीन तक अन्य सहायक कर्मचारी, जो विभिन्न श्रेणी के हों, उपलब्ध कराये जाने चाहिए। इसके अतिरिक्त रैण्डल ने निम्न सिद्धान्तों (Norms) का प्रतिपादन किया है ;

(क) प्रत्येक सक्रिय ग्रन्थालय सदस्य पर दो से तीन पुस्तकें प्रति वर्ष क्रय की जानी चाहिए।

(ख) वार्षिक प्रलेख अवाप्ति एवं सम्पूर्ण संग्रह में .06:1 से 1:1 का अनुपात होना चाहिए।

(ग) प्रत्येक सदस्य पर 1.5 से 2 सामयिकी प्रकाशन निश्चित किये जाने चाहिए।

(घ) सामयिकी प्रकाशनों की अवाप्ति पर होने वाला व्यय ग्रन्थ लागतों की तुलना में दो से तीन गुना अधिक होना चाहिए।

(ङ) व्यावसायिक कार्मिकों को उपयोगी सेमिनार, सम्मेलन, बैठक आदि में सम्मिलित होने के लिए प्रति व्यावसायिक $400-$600 का बजट में प्रावधान किया जाना चाहिए। प्रत्येक व्यावसायिक को वर्ष में एक बार यह अवसर अवश्य दिया जाना चाहिए।

8.5 बजट का औचित्य–प्रतिपादन (Budget Justification)

बजट में विभिन्न मदों के अन्तर्गत खर्चों के अनुमान में पूर्व व्यय समीक्षा, ग्रन्थालय सांख्यिकी का उपयोग, एवं मानक सहायक सिद्ध हो सकते हैं। लेकिन मात्र इनकी समीक्षा ही पर्याप्त नहीं मानी जा सकती बल्कि ग्रन्थालयी को अन्य प्रयास भी करने पड़ते हैं। इन अतिरिक्त प्रयासों में डेटा संग्रह, अथवा बजट निर्माण ही विशेष पद्धति का चयन, बजट के औचित्य स्थापन में सहायक हो सकते हैं।

डेटा संग्रह (Data/Information Collection) :

सूचना की पर्याप्त मात्रा काफी सीमा तक बजट के औचित्य प्रतिपादन को सम्भव बनाती है। प्रलेख परिचालन अथवा सन्दर्भ प्रश्नों के उत्तर अथवा पूर्वव्यापी वांगमय सूचियों में बढ़ोत्तरी, सामयिक एवं नवीन प्रतिवेदन आदि प्रलेखों को भविष्य में बजट बनाते समय उपयोग किया जाना चाहिए। संग्रहीत सूचनाओं को अधिकतम प्रभावी ढंग से व्यक्त करने के लिए ग्राफ आदि के द्वारा प्रस्तुत किया जाना चाहिए। उपयोगकर्ताओं द्वारा प्राप्त सुझावों एवं सेवा सम्बन्धी प्रसंशा प्रपत्रों को भी डेटा में सम्मिलित कर उपयोग किया जाना चाहिए। सेवा में सुधार सम्बन्धी सुझावों के आधार पर अतिरिक्त धन की मांग का औचित्य दर्शाया जा सकता है।

बजट बनाने में प्रयुक्त विधि (Method adopted in Budgeting) :–

किसी ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र के लिए वित्तीय योजना तैयार करते समय ग्रन्थालयी को इस बात से सावधान होना चाहिए कि बजट में मांगे गये पूरी धनराशि उसे स्वीकृत न की जाय। इसलिए एक ऐसी बहुस्तरीय बजट विकसित करने की तकनीक का अनुसरण किया जाना चाहिए। इस

RIL-091

पद्धति में क्रम से कम उन महत्वपूर्ण सेवाओं को उनकी अनुमानित लागत के साथ अवश्य व्यवस्थित किया जाना चाहिए जिनके बिना संगठन का संचालन संभव न हो । उसके पश्चात बहु-स्तरीय व्यवस्था के अन्तर्गत नये कार्यक्रमों एवं सेवाओं को उनकी अनुमानित लागत एवं लाभ के साथ विकसित किया जाना चाहिए ।

एक अन्य तकनीक जिसका लाभप्रद तरीके से उपयोग किया जा सकता है । वर्तमान स्तर से सेवाओं को बनाये रखने के लिए आवश्यक वांछित राशि का गणन कर संस्तुत बजट के साथ तुलना करना है । इस तुलना में यह व्यक्त हो जाएगा कि वर्तमान स्तर की सेवाओं को चलाते रहने के लिए नयी सेवाओं को शुरू करने की अपेक्षा ज्यादा धन की मांग की गयी होती है पुस्तकों एवं सामयिकी प्रकाशनों के क्रय में मंहगाई की वजह से यह बढ़ोतरी स्वाभाविक है ।

अन्य तकनीकें (Other Tactics) :

ग्रन्थालयी द्वारा प्रयुक्त अन्य तकनीकें निम्न हैं :–

(क) ग्रन्थालय समिति में प्रबन्धन एवं वरिष्ठ कार्मिकों को सम्मिलित करना ,

(ख) सेवाओं का उपयोग करने वाले अन्य संस्थानों से कुछ लागत वसूल करना,

(ग) वित्तीय अनुभाग से अच्छे सम्बन्ध विकसित कर वित्तीय सूचनाएं एकत्रित करना,

(घ) मांग के पूर्व संगठन की वित्तीय स्थिति का आँकलन,

(ङ) यथासम्भव बजट में निर्दिष्ट प्रावधानों के अनुसार कार्य करना ।

8.6 लेखाकरण (Accounting)

लेखाकरण वित्तीय प्रबन्धन के मुख्य अवयवों में से एक है । उचित वित्तीय व्यवस्थापन एवं नियंत्रण के लिए लेखाकरण आवश्यक होता है । ग्रन्थालय की आय एवं व्यय प्रवाह सम्बन्धी विवरण को अभिलेखों में उचित ढंग से अंकित करना ही ग्रन्थालय लेखाकरण कहलाता है ।

"न्यू इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका" के अनुसार " किसी संगठन के आर्थिक क्रियाकलापों से सम्बद्ध सूचनाओं का विश्लेषण एवं व्यवस्थित विकास , लेखाकरण है" ।

अच्छे वित्तीय प्रशासन का मुख्य आधार उपयुक्त ढंग से संचालित लेखाकरण प्रणाली होती है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना होता है कि ग्रन्थालय निधि को उचित प्रकार से एवं निश्चित सीमाओं के अन्दर व्यय किया गया है। भविष्य में बजट निर्माण की योजना में यह काफी सहायक होता है। लाभ न अर्जित करने वाले संगठनों के लिए (ग्रन्थालय आदि) वित्तीय लेखाकरण का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना होता है कि उपलब्ध धन का उचित उपयोग किया गया है। इसके द्वारा व्यय को एक निश्चित सीमा पर रख पाना सम्भव होता है।

ग्रन्थालय को उपलब्ध धन का अधिकतर हिस्सा संचालन निधि (Operating Fund) के रूप में होता है। वित्त लेखाकरण उद्देश्यों के लिए इसे दो भागों में विभाजित किया जा सकता है :–

(क) प्रतिबंधित निधि

(ख) अप्रतिबंधित/उन्मुक्त निधि

प्रतिबंधित निधि का उपयोग निर्दिष्ट उद्देश्य के लिए ही किया जाता है अर्थात् जिस उद्देश्य के लिए उस धन को आबंटित किया गया होता है सिर्फ उन्हीं मदों में उसे व्यय किया जा सकता है। दूसरी तरफ अप्रतिबंधित निधि के उपयोग में लचीलापन रहता है अर्थात् अन्य उद्देश्यों के लिए उस निधि का उपयोग सम्भव होता है।

लेखाकरण के कुछ निश्चित सिद्धान्त होते हैं, उन सिद्धान्तों के अनुरूप ही अभिलेखों का अनुरक्षण

किया जाना चाहिए। स्थापित प्रक्रिया के अनुसार वित्तीय लेन-देन का सार एवं वास्तविक अंकन बुक कीपिंग कहलाता है। इस प्रकार से उत्पन्न सूचनाओं को संक्षिप्त एवं सार रूप में प्रतिवेदनों में सम्मिलित किया जाता है। प्रायः इस प्रकार के प्रतिवेदन वार्षिक आधार पर तैयार किये जाते हैं एवं जिन्हें वार्षिक प्रतिवेदन कहा जाता है। इस प्रक्रिया को वित्तीय लेखाकरण कहा जाता है। संगठन के बाहर का कोई व्यक्ति, सरकार अथवा संगठन वित्तीय स्थिति की जानकारी के लिए इन सूचनाओं का उपयोग कर सकता है।

सूचनाओं को मासिक आधार पर तैयार कर वित्तीय स्थिति के आकलन के लिए प्रबन्धन को उपलब्ध कराना, प्रबन्धकीय लेखाकरण कहलाता है। इन सूचनाओं का उपयोग प्रबन्धन द्वारा नियोजन एवं परिवीक्षण गतिविधियों के उचित संगठन के लिए किया जा सकता है।

वित्तीय लेखाकरण में प्रायः चार प्रकार के प्रतिवेदन तैयार किये जाते हैं :–

1. बैलेन्स शीट
2. आय विवरण
3. आय में परिवर्तन के विवरण
4. स्रोत एवं निधि के उपयोग के विवरण

बैलेन्स शीट में किसी विशिष्ट तिथि में संस्थान के अधिकार में निहित संसाधनों, सम्पत्तियों तथा देनदारियों का विवरण सार रूप में अंकित किया जाता है। आय विवरण में किसी विशिष्ट अवधि के कुल आय का विवरण दिया जाता है। इसी तरह आय में परिवर्तन के विवरण एवं निधि के उपयोग के विवरण अलग-अलग प्रतिवेदनों में प्रस्तुत किये जाते हैं।

सामान्यतया किसी संगठन या संस्था के लेखाकार द्वारा तैयार अभिलेखों एवं प्रतिवेदनों का परीक्षण एवं समीक्षा स्वतंत्र लेखाकारों अथवा शासकीय लेखाकारों द्वारा किया जाता है। स्वतंत्र लेखाकार द्वारा वित्तीय अभिलेखों की जांच से यह ज्ञात किया जाता है कि निधि का उपयोग एवं अभिलेख अनुरक्षण स्थापित परम्पराओं एवं मान्य सिद्धान्तों के आधार पर किया जा रहा है अथवा नहीं। शासकीय धन से संचालित ग्रन्थालयों का लेखा परीक्षण सरकार के सम्बन्धित विभाग द्वारा किया जाता है ताकि धन का उचित उपयोग प्रमाणित हो सके।

लेखाकरण के उद्देश्य :

वित्तीय लेखाकरण के निम्न उद्देश्य होते हैं :–

1. वित्तीय विवरणों का व्यवस्थित अंकन,
2. वित्तीय (विशेष रूप से व्यय) नियन्त्रण एवं उचित उपयोग सुनिश्चित करना,
3. भविष्य के बजट निर्माण में सहायक,
4. स्थापित परम्पराओं एवं मान्य सिद्धान्तों के अनुसार, वित्तीय व्यवस्थापन सुनिश्चित करना,
5. व्यय की गयी राशि की जांच एवं समीक्षा के लिए उपलब्ध कराना,
6. मासिक आधार पर वित्तीय प्रतिवेदन तैयार कर नियोजन एवं परिवीक्षण गतिविधियों को सहयोग करना, आदि।

वित्तीय अभिलेख :

लेखाकरण की स्थापित परम्पराओं के अनुसार संगठन में अनेक वित्तीय अभिलेख तैयार एवं अनुरक्षित किये जाते हैं। बजट संगठन एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वित्तीय अभिलेख होता है जिसे संगठन के उद्देश्यों के अनुरूप तैयार किया जाता है। ग्रन्थालय चूँकि संगठन अथवा संस्था के एक अंग के रूप

RIL-091

में कार्य करते हैं। अतः अलग ग्रन्थालय में वित्तीय अभिलेख रखने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती है। सामान्यतया संगठन का वित्त अनुभाग ग्रन्थालय लेखा का अनुरक्षण करता है, ग्रन्थालय केवल वित्तीय आदेशों, अग्रसारित बीजकों की प्रतियाँ रखता है। अधिकतर ग्रन्थालय अपने वित्तीय अभिलेख एकल-प्रविष्टि प्रणाली के अनुसार रखते हैं। यद्यपि ग्रन्थालयों के स्तर पर वित्तीय अभिलेख अनुरक्षित करने में आंशिक भिन्नता पायी जाती है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि अभिलेख यथासम्भव सरल होने चाहिए एवं लेजर से मिलान में सुविधाजनक होने चाहिए। ग्रन्थालयों द्वारा अनुरक्षित कुछ अभिलेख निम्न हैं :–

(क) नकद पुस्तिका (Cash Book)

यह वह अभिलेख है जिसमें संस्था के प्रतिदिन की आय एवं व्यय का नकद विवरण अंकित किया जाता है लेकिन ग्रन्थालय इस तरह का कोई अभिलेख नहीं रखते हैं, क्योंकि वित्तीय लेन-देन का विवरण संस्था के वित्तीय अनुभाग द्वारा रखा जाता है।

(ख) लेजर (Ledger) :

लेजर वह पुस्तिका होती है, जिसमें सबसे ऊपर आय अथवा बजट विवरण अंकित रहता है एवं सभी मदों में व्यय एवं विषय विवरण अंकित रहता है।

(ग) आवंटन पंजिका (Allocation Register) :

इस पंजिका में शीर्षक एवं विषयानुसार लेखा अथवा खाता बना होता है। इन विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत वित्तीय विवरण अंकित किये जाते हैं। ग्रन्थालय में पुस्तक, सामयिकी, जिल्दबंदी, स्टेशनरी, डाक खर्च आदि अनेक शीर्षकों के अन्तर्गत अभिलेख रखे जा सकते हैं।

(घ) मासिक खर्च विवरण (Monthly expenditure statement) :

इस विवरण से प्रबन्धन को यह जानने में मदद मिलती है कि महीने के अन्त में अद्यतन वित्तीय स्थिति क्या है। इसमें प्रत्येक मद के अन्तर्गत खर्च का विवरण अंकित रहने से अनुदान की अद्यतन जानकारी मिलती रहती है।

(ङ) वेतन पंजिका (Salary Register) :

ऐसी पंजिका जिसमें सभी कर्मचारियों के वेतन भत्ते सम्बन्धी विवरण अंकित किये जाते हैं वेतन पंजिका होती है। इस पंजिका में प्रत्येक कर्मचारी के वेतन सम्बन्धी विवरण के लिए अलग-अलग पृष्ठ आवंटित किये जाते हैं। इसमें अन्य वित्तीय सूचनाएं जैसे कुल कटौतियाँ एवं शुद्ध देय वेतन आदि निहित होती हैं।

8.7 लेखा परीक्षण (Auditing) :

किसी शासकीय अर्द्ध शासकीय अथवा अशासकीय निकाय/संगठन के वित्तीय लेन-देन सम्बन्धी लेखा का पात्र व्यक्ति अथवा संगठन द्वारा परीक्षण एवं छान-बीन लेखा परीक्षण कहलाता है।

"न्यू इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका" के अनुसार "किसी संगठन की गतिविधियों, अभिलेखों एवं प्रतिवेदनों का इनको तैयार करने वाले व्यक्तियों से भिन्न, लेखाकरण विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण, लेखा परीक्षण है।"

लेखा परीक्षण वित्तीय प्रबन्धन का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं अन्तिम भाग होता है। शासन द्वारा प्राप्त अनुदान का दुरुपयोग न हो, इसके लिए लेखा परीक्षण आवश्यक है। सामान्यतया किसी संस्था अथवा संगठन के वित्तीय लेन-देन का विवरण वहां के लेखाकार द्वारा तैयार किया जाता है जिसका सूक्ष्म परीक्षण स्वतंत्र लेखाकार अथवा शासन द्वारा नियुक्त लेखाकारों द्वारा किया जाता है। शासकीय अनुदान से संचालित संगठनों या संस्थाओं या ग्रन्थालयों का लेखा परीक्षण शासन द्वारा नियुक्त अभिकरण/विभाग द्वारा किया जाता है। भारत में केन्द्र सरकार के वित्तीय अनुदान से संचालित

RIL-091

संगठनों के लेखा परीक्षण के लिए महा लेखाकर को अधिकृत किया गया है।

सार्वजनिक लेखाकार इस तथ्य की जाँच करते हैं कि प्रबन्धन द्वारा प्रस्तुत विवरण संगठन की वित्तीय स्थिति एवं संचालन परिणाम ठीक ढंग से प्रस्तुत कर रहे हैं अथवा नहीं। स्वतन्त्र लेखाकारों द्वारा सार्वजनिक लेखा परीक्षण एक व्यावसायिक स्तर प्राप्त कर चुका है एवं बड़े व्यापारिक इकाइयों की स्थापना में उत्तरोत्तर बढोत्तरी ने इसको सामान्य बना दिया है।

8.7.1 लेखा परीक्षण के उद्देश्य

किसी सार्वजनिक संगठन, शासकीय एवं अर्द्धशासकीय विभाग/संस्था के लेखा परीक्षण के निम्न उद्देश्य होते हैं :–

1. अनियमित, अनुचित एवं अपव्ययी खर्च पर नियंत्रण करना
2. शासन द्वारा प्राप्त अनुदान की उपयोगिता की जांच
3. संगठन की गतिविधियों, प्रलेखों एवं प्रतिवेदनों का सूक्ष्म परीक्षण
4. लेखाकरण प्रणाली की प्रभावशीलता की जांच
5. शासन अथवा शीर्ष स्तरीय प्रबन्धन की संतुष्टि का आधार।

8.7.2 लेखा परीक्षण के प्रकार

भारत में सामान्यतया दो प्रकार की लेखा परीक्षण प्रणाली प्रचलित है :

(क) पोस्ट-आडिट

(ख) प्री- आडिट

वित्तीय वर्ष की समाप्ति के पश्चात वित्तीय भुगतानों एवं प्रकियाओं का परीक्षण पोस्ट- आडिट होता है। पोस्ट-आडिट का तात्पर्य ऐसे लेखा प्रणाली से है जिसमें धन निकालने एवं खर्च करने के लिए अधिकृत अधिकारी बीजक आदि को हस्ताक्षर करके अन्तिम रूप से भुगतान के लिए ट्रेजरी/बैंक को भेजता है। उक्त अधिकारी उस भुगतान की शुद्धता एवं औचित्य का जिम्मेदार होता है। अतः अधिकारी बीजक पर हस्ताक्षर करने से पूर्व अपने आपको पूर्ण रूप से संतुष्ट कर लेता है। वित्तीय वर्ष की समाप्ति के बाद सम्पन्न वित्तीय लेन-देन सूक्ष्म परीक्षण बाहरी लेखाकार विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है। सामान्यतया पोस्ट-आडिट में कुछ महीनों को परीक्षण के लिए चुन लिया जाता है। प्रत्येक मद की पूरी जांच नहीं की जाती है। चयनित महीनों के वित्तीय भुगतानों की विस्तृत एवं गहन छानबीन की जाती है। जांच के दौरान पायी जानी वाली कमियों एवं प्रक्रियाओं की तरफ सम्बन्धित उच्च अधिकारियों का ध्यान आकर्षित किया जाता है एवं भविष्य में ऐसी अनियमितताएं न होने के प्रति आगाह किया जाता है।

सम्भवतः प्रशासनिक लेखा परीक्षण में प्रत्येक, बीजक वाउचर या अन्य वित्तीय प्रलेख की जांच/परीक्षण अन्तिम भुगतान के पूर्व आन्तरिक लेखा परीक्षकों द्वारा की जाती है। इसका उद्देश्य भुगतान में शुद्धता लाना एवं उचित अनुमति देना होता है। स्वायत्तशासी निकायों में सामान्यतया प्री आडिट सिस्टम का अनुपालन किया जाता है जहाँ लेखा परीक्षण स्थानीय निधि लेखा के अन्तर्गत होता है। इसमें बिना लेखा परीक्षण के कोई भुगतान अथवा अभिलेखों/पुस्तिकों में अंकन सम्भव नहीं होता है। इस प्रणाली के अनुपालन से धन, निकालने वाले/स्वीकृत करने वाले अधिकारी की जिम्मेदारी सीमित हो जाती है। भुगतान से पूर्व सभी लेखा परीक्षण से सम्बन्धित आवश्यक जाँच कार्य, जैसे सामग्रियों की जांच, उनकी पंजिका में अंकन, संस्तुति दर की पुष्टि, गणना की शुद्धता, लेखा के उचित शीर्षकों के अन्तर्गत प्रविष्टि आदि पूर्ण कर लिये जाते हैं। इस तरह परीक्षण का यह कार्य भुगतान से पूर्व

सम्पन्न कर लिया जाता है। लेखा परीक्षण का कार्य आन्तरिक लेखा परीक्षकों के साथ-साथ बाह्य लेखा परीक्षकों अथवा शासन द्वारा निर्दिष्ट अभिकरण के लेखा विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है।

8.8 निष्कर्ष

किसी ग्रन्थालय अथवा सूचना केन्द्र के सुनियोजित संचालन के लिए एक उपयुक्त बजट का निर्माण आवश्यक है। एक संतुलित एवं उपयोगी बजट का निर्माण प्रबन्धन का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। ग्रन्थालयों को ग्रन्थालय के विभिन्न मदों में होने वाले व्यय को समुचित ढंग से व्यक्त करना चाहिए एवं व्यय के साथ आवश्यक सभी विवरण होने चाहिए। ग्रन्थालयी को अपने बजट के वित्तीय प्रावधानों को न्यायोचित सिद्ध करने की क्षमता रखनी चाहिए। इस उद्देश्य से विकसित विभिन्न तकनीकों का उसे ज्ञान होना चाहिए।

यह भी स्पष्ट है कि बजट के प्रावधानों एवं वास्तविक खर्चों के बीच सामन्जस्य बनाये रखने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। बजट के निर्माण में प्रयुक्त डेटा की वैधता पर यह सामन्जस्य एवं संतुलन निर्भर करता है।

यह इकाई वित्तीय प्रबन्धन के अन्तिम चरण के रूप में लेखा परीक्षण को प्रदर्शित करती है। इसका उद्देश्य अनियमित, अनुचित एवं अपव्ययी खर्च पर नियन्त्रण करना है। लेखा परीक्षण द्वारा शासकीय एवं अर्द्धशासकीय संगठनों के वित्तीय लेन-देन का सूक्ष्म परीक्षण किया जाता है ताकि धन का सदुपयोग सुनिश्चित किया जा सके।

RIL-091

इकाई 9 : लागत तकनीक एवं लागत विश्लेषण
COSTING TECHNIQUES AND COST ANALYSIS

संरचना

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 लागत निर्धारण एवं इसकी आवश्यकता

9.3 लागत के प्रकार एवं कारक

9.4 लागत विधि

9.5 लागत विश्लेषण

9.6 लागत विश्लेषण के विभिन्न अभिगम

9.7 लागत विश्लेषण की विधियां

9.8 ग्रंथालय एवं सूचना केन्द्रों में लागत विश्लेषण

9.9 निष्कर्ष

9.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई का उद्देश्य आप को निम्नलिखित का ज्ञान कराना है:

(क) लागत निर्धारण का विचार एवं इसकी उपयोगिता बताना,

(ख) ग्रंथालयों एवं सूचना केन्द्रों में इसकी आवश्यकता का प्रतिपादन करना,

(ग) लागत के विभिन्न प्रकार एवं इसमें सम्मिलित त्तवों का ज्ञान कराना,

(घ) लागत निर्धारण के लिए अपनायी जाने वाली विधियों का वर्णन करना,

(ड.) लागत विश्लेषण को स्पष्ट करने के साथ इसके विभिन्न अभिगम बताना,

(च) लागत अध्ययन के लिए उपयोगी विश्लेषण की विधियां बताना एवं

(छ) ग्रंथालय एवं सूचना केन्द्रों के परिप्रेक्ष्य में इनकी आवश्यकता एवं महत्व प्रतिपादित करना है।

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

अन्य सगठनों अथवा संस्थाओं की तरह ग्रंथालयों को अपने वित्तीय व्यवस्थाओं के अन्तर्गत कुछ निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करना होता है। ग्रंथालय यथासम्भव प्रभावी ढंग से कार्य करते है जिससे अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके। किसी प्रणाली की अपने निश्चित उद्देश्यों की दिशा में हुई प्रगति को मांपना एवं परिवीक्षण करना ही लागत है। यह सर्वविदित है कि ग्रंथालयों के बजट प्रतिवर्ष कम होते

जा रहे है ऐसा वे अपनी इच्छा से नही कर रहे हैं बल्कि इसके लिए बाध्य किये जा रहे है क्योंकि संगठन अथवा संस्थान, जिसके अन्तर्गत ग्रंथालय कार्य करते है, की कुल वित्तीय स्थिति अच्छी नही रह गयी है। दूसरी तरफ पुस्तकों एवं सामायिकी प्रकाशनों के मूल्य में अनवरत वृद्धि होती जा रही है। ये स्थितियां ग्रंथालय प्रबन्धकों के लिए कार्य करना असहज बना दे रही है। प्रायः धन की मांग सम्बन्धी उनके निवेदन उपयुक्त तथ्यों एवं औचित्य पर आधारित होते है, तो भी उनको आवश्यक धन उपलब्ध नही हो पा रहा है। प्रायः ये तथ्य विभिन्न ग्रंथालय सेवाओं के संचालन की लागत एवं संगठन को होने वाले लाभ पर आधारित होते है। इसके अतिरिक्त सूचना सेवाओं एवं उत्पादो के मूल्य निर्धारण में भी लागत सहायक होती है। ग्रंथालय प्रबन्धकों को विभिन्न लागत विधियों एवं तकनीकों की जानकारी ग्रंथालय के समग्र प्रबन्धन में उपयोगी सिद्ध होती है।

9.2 लागत निकालना (Costing)

लागत निकालना एक प्रकिया है जिससे कोई संगठन किसी उत्पाद, कोई सेवा देने, किसी कार्य को सम्पन्न करने अथवा एक विभाग के संचालन में आने वाली लागत का आकलन करता है (ब्रिटैनिका विश्वकोष, 1974)। लागत लेखाकरण का तात्पर्य संगठन को धन अथवा लागत के सन्दर्भ में मापना है। इस विचार को निम्न ढंग से व्यक्त किया जा सकता है:–

निवेश लागत + प्रक्रिया (लागत) + सेवा (लागत) → लाभ (धन)

बाब मैकी (Bob Mckee) के अनुसार लागत निकालने की प्रकिया लागत को विस्तृत ढंग से विश्लेषित करना है, प्रायः इकाई लागत (किसी एक छोटी प्रकिया, सेवा अथवा कार्य में पूरें लागत का विस्तृत ढंग विवरण) के स्तर पर यह अध्ययन किया जाता है।

ग्रंथालय में लागत निकालने की आवश्यकता

अन्य संगठनों की तरह ग्रंथालय में कुछ खर्चे सन्निहित होते है, ये खर्च धन के रूप में अथवा अन्य संसाधनों, जैसे मानव शक्ति, उपकरण, परिवहन, डाकव्यय आदि के रूप में हो सकते है। कम से कम सम्भावित लागत पर सबसे अच्छा उत्पाद अथवा सेवा सुनिश्चित करने के लिए उनकी लागत निकालना (Costing) आवश्यक हो जाता है। एक ग्रंथालय विभिन्न प्रकार की सेवाएं प्रदान करता है। उनमें से प्रत्येक की, उनके लाभ के सन्दर्भ में मूल्यांकन लागत, निर्धारण द्वारा किया जा सकता है। ग्रंथालय के उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में इनकी लागत एवं योगदान का विश्लेषण महत्वपूर्ण होता है। ग्रंथालय को कम से कम लागत पर अच्छी से अच्छी सेवा प्रदान करने के लिए उसे ग्रंथालय के विभिन्न घटकों की एवं उनके अपने विभिन्न कार्यो, सेवाओं एवं उत्पादों की लागत की पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए।

लागत निर्धारण निम्न कारणों से आवश्यक है :–

1. यह विभिन्न कर्मचारियों की उत्पादन–क्षमता एवं विभिन्न कार्यो/सेवाओं के प्रभावी नियन्त्रण में सहयोग करता है।
2. यह कार्य निष्पादन सूचक का विकास करने में सहायक है, जिससे सेवा की सफलता मांपी जा सकती है।
3. यह विभिन्न ग्रथालय सेवाओं एवं सूचना उत्पादों, जैसे सूचनाओं के चयनित प्रसारण (SDI), सारकरण, सेवा, वांगमय सूची निर्माण आदि, की कीमतों के निर्धारण में सहायक होता है।

RIL-091

4. अनुदान देने वाले अभिकरणों को संतुष्ट करने में इनका उपयोग किया जा सकता है।

5. प्रणाली के अन्तर्गत किसी विशिष्ट कार्य अथवा सेवा को जारी रखने अथवा समाप्त करने के बारे में निर्णय लेने में सहायता करता है।

6. लागत सम्बन्धी सूचना गलत निष्कर्ष की ओर जाने से रोकती है।

7. किसी नयी सेवा की योजना अथवा वर्तमान सेवा को पुर्नसगठन करने में आने वाली लागत के पूर्व से सचेत करने में सहायक है।

लागत सम्बन्धी उपर्युक्त महत्ताओं एवं विशेषताओं के बावजूद गंथालयी प्रायः लागत निकालने (Costing) अथवा लागत लेखाकरण को नही अपना रहे है इसका मुख्य कारण लागत विधियों का पर्याप्त ज्ञान न होंना है। यह भी भय होता है कि विस्तृत लागत विश्लेषण, ग्रंथालय के लिए अतिरिक्त संसाधनों के लिए धन की उनकी मांग को पुष्ट नही कर सकता है।

9.3 लागत के प्रकार एवं कारक (Types & Elements of Cost)

ग्रंथालय के कार्यो एवं सेवाओं के लागत निर्धारण में दो प्रकार लागत सन्निहित होती है: (क) प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लागत (ख) निश्चित एवं परिवर्तनीय लागत। प्रथम प्रकार में लागत के विभिन्न तत्त्व सम्मिलित होते है जबकि दूसरे में परिवर्तनीयता युक्त के अनुसार लागत का वर्गीकरण होता है। यहां परिवर्तनीयता का सम्बन्ध कार्य के स्तर अथवा उत्पाद की मात्रा में परिवर्तन के सम्बन्ध में व्यवहार से है। वह लागत प्रत्यक्ष लागत होती है जो सीधे किसी विशेष गतिविधि या सेवा से संयुक्त हो जाती है जैसे पदार्थो की लागत, श्रम, परिवहन, डाक व्यय, जिसका उपयोग उस गतिविधि के संचालन के लिए किया जाता है। अप्रत्यक्ष लागत उपरी खर्च से सम्बद्ध लागत होती है, जैसे भवन, बिजली, पानी एवं अन्य खर्च, जिनका किसी विशेष गतिविधि के लिए मात्र नही किया जाता है। इसी तरह दूसरे प्रकार के अन्तर्गत निश्चित लागत का सम्बन्ध ऐसी लागत से है जो उत्पादन की मात्रा अथवा गतिविधि के आकार में परिवर्तन से प्रभावित नही होती है, जब की परिवर्तनीय लागत उत्पादन की मात्रा अथवा गतिविधि के आकार से सीधे जुड़ी होती है अर्थात इनमें परिवर्तन होने से परिवर्तनीय लागत में भी परिवर्तन हो जाता है।

9.3.1 लागत के कारक (Elements of Cost)

सामग्री लागत (Material cost)

किसी उत्पाद अथवा सेवा को प्रदान करने के लिए प्रयुक्त सामाग्रियों की लागत को सामग्री लागत कहां जाता है। यह प्रत्यक्ष लागत होती है। उदाहरण के तौर पर उत्पाद के लिए प्रयुक्त कागज, प्रयुक्त पैकेजिंग आदि। अप्रत्यक्ष सामग्री लागत वह होती है जो किसी विशिष्ट उत्पाद अथवा सेवा के साथ पारम्परिक रूप से जुडी नही हो सकती है। इसके अन्तर्गत ग्रंथालय संग्रह, उपकरण, सामान्य उपभोग्य सामग्री, कागज, कलम, स्याही लेखन सामग्री आदि आते है।

श्रम लागत :-

प्रायः प्रत्येक प्रकार के सूचना उत्पादों के उत्पादन अथवा सेवाओं के प्रदान करने के लिए मानव श्रम की आवश्यकता होती है। इन कार्मिकों की व्यवस्था पर होने वाला खर्च श्रम लागत कहलाता है। किसी सेवा एवं उत्पाद से जुडें कार्मिकों का वेतन आदि लागत प्रत्यक्ष श्रम लागत है एवं ऐसे कार्मिक जो उस उत्पाद या सेवा से सीधे जुडें नहीं होते है, उनसे सम्बन्धी लागत अप्रत्यक्ष लागत होती है। प्रशासनिक, भण्डार, वित्त से सम्बन्धित कार्मिकों के वेतन अप्रत्यक्ष श्रम लागत के उदाहरण है।

RIL-091

व्यय :–

सामग्री एवं श्रम लागत के अतिरिक्त लागत को भी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्यय में विभक्त किया जा सकता है। सूचना उत्पादों को भेजे जाने में डाक व्यय एवं माल भाडा व्यय प्रत्यक्ष व्यय के उदाहरण हैं। अप्रत्यक्ष व्यय के उदाहरण है: मूल्यह्रास, मुद्रा का अवमूल्यन, उपकरणों की मरम्मत, बिजली, टेलिफोन, प्रबन्धन एवं संगठन में प्रशासनिक व्यय, विपणन व्यय आदि।

पूँजी सम्बन्धी लागत (Capital cost) :–

उपर्युक्त वर्णित लागत के अतिरिक्त एक अन्य महत्वपूर्ण लागत प्रधान पूँजी होती है। इस लागत का महत्वपूर्ण प्रभाव किसी उत्पाद अथवा गतिविधि अथवा सेवा के कुल लागत पर पडता है। इसमें उन सामग्रियों अथवा वस्तुओं को सम्मिलित किया जाता है जिनका उपयोग लम्बी अवधि तक बार–बार किया जाता है। उदाहरणार्थ भवन, उपकरण, ग्रंथालय संग्रह, फर्नीचर, परिवहन वाहन एवं अन्य ऐसे सामान पूँजी सम्बन्धी लागत का हिस्सा होते है।

लागत का वर्गीकरण :–

लागत को निम्न ढंग से वर्गीकृत किया जा सकता है;

(क) निश्चित

(ख) अनिश्चित अथवा परिवर्तनीय

(ग) अर्ध परिवर्तनीय, एवं

(घ) चरणगत लागत (Step cost)

निश्चित लागत :–

ऐसी लागत जिसमें परिवर्तन नहीं होता है, निश्चित लागत होती है। कर्मचारियों के वेतन, संगठन का प्रशासनिक ऊपरी व्यय आदि निश्चित लागत के अन्तर्गत आते है। वेतन में प्रोन्नति अथवा मंहगाई भत्ते आदि की वजह से बढोत्तरी प्रभावी नहीं होती है।

अनिश्चित लागत :–

ऐसी लागत जिसमें उत्पाद अथवा सेवा की मात्रा में परिवर्तन होने से लागत में परिवर्तन आ जाता है, अनिश्चित लागत कही जाती है। सामग्रियों की कीमत, बिजली, ग्रंथालय कार्मिकों के वेतन, आन लाइन खोजों की लागत, सूचना उत्पादों की लागत आदि अनिश्चित लागत है।

अर्ध परिवर्तनीय लागत :–

ऐसी लागत जो एक निश्चित अवधि एवं गतिविधि के क्षेत्र में निवेश में परिवर्तनों के बावजूद स्थिर बनी रहती है। मुद्रा अवमूल्यन, अनुरक्षण आदि इसके उदाहरण हैं।

चरणगत लागत :–

कुछ लागत एवं गतिविधि के क्षेत्र एक स्तर निश्चित रहती है लेकिन दूसरें स्तर अथवा चरण में प्रवेश करते ही बदल जाती है। जैसे कोई कार्य एक कर्मचारी से सम्भव न हो पाने पर अतिरिक्त व्यक्ति की व्यवस्था करनी पडती है। इस अतिरिक्त व्यक्ति का वेतन चरणगत लागत कहलायेगा।

कुल लागत के घटक :–

कुल लागत में निम्न तत्व सम्मिलित होते है :–

(क) मूल लागत (ख) उत्पादन लागत

(ग) कार्यालयी लागत (घ) एक लागत केन्द्र की कुल लागत

अवमूल्यन (Depreciation) :–

पूँजीगत सामग्रियों जैसे भवन, मशीनरी, ग्रंथालय संग्रह, परिवहन वाहन, आदि के मूल्य समय के अनुसार घटते रहते हैं। मूल्य में इस कमी को अवमूल्यन कहा जाता है। अवमूल्यन के इस गणन को लागत ढाँचे में रखकर एक निश्चित समय के बाद की कीमत प्राप्त की जा सकती है, इसकी मदद से उन वस्तुओं का औचित्यपूर्ण बदलाव सम्भव है।

अवमूल्यन की गणना :–

अवमूल्यन की गणना के लिए प्रायः दो विधियों का प्रयोग किया जाता है नारायन के अनुसार ये विधियां निम्न हैं :–

(क) स्ट्रेट–लाइन विधि (Straight-line Method)

(ख) सम–आफ–ईयर्स विधि (Sum of year Method

$$\text{प्रति वर्ष अवमूल्यन} = \frac{\text{क्रय मूल्य – प्रतिस्थापन के समय निस्तारण मूल्य}}{\text{उपयोगी जीवन के अनुमानित वर्ष}}$$

उपयोगी जीवन के अनुमानित वर्ष

पेज एवं कानवे (Page and Connaway) भी इस सूत्र को स्वीकार करते है। नारायण द्वारा प्रतिपादित दूसरी विधि अर्थातः सम–आफ ईयर्स विधि, जिसका उपयोग प्रायः उद्योग क्षेत्र में किया जाता है, अवमूल्यन को ज्यादा सटीक ढंग से प्रस्तुत करती हैं। ऐसा माना जाता है कि आरम्भ के वर्षो में अवमूल्यन बाद के वर्षो की तुलना में अधिक होता है। सम–आफ– ईयर्स का सूत्र निम्न है :

$$\text{विशिष्ट वर्ष में अवमूल्यन} = \frac{\text{क्रय मूल्य– निस्तारण मूल्य}}{1} \times \frac{\text{शेष उपयोगी वर्षो की संख्या}}{\text{वर्षो का योग}}$$

इस सूत्र को एक उदाहरण के माध्यम से अच्छे तरीके से स्पष्ट किया जा सकता है। किसी जीराक्स मशीन, जिसकी उपयोगी सेवा अवधि पाँच वर्ष है, के वर्षो का योग 1+2+3+4+5 =15, चार वर्ष की सफल सेवा के पश्चात वार्षिक अवमूल्यन, 100,000 रूपये क्रय मूल्य एवं 10,000 निस्तारण मूल्य पर इस प्रकार गणना की जायेगी :

क्रय मूल्य – निस्तारण मूल्य = 100,000 – 10,000 = Rs. 90,000

एक कर्मचारी की लागत :–

निम्न सूत्र का उपयोग किसी कर्मचारी के उत्पादक दिनों की गणना के लिए किया जा सकता है। उत्पादक दिनों से तात्पर्य कर्मचारी के प्रति वर्ष कुल कार्य दिवसों से है।

$$D = A-(W+H+L)$$

जहाँ

D = वर्ष के कार्य दिवस

A = वार्षिक दिन (एक वर्ष के कुल दिन)

W = साप्ताहिक दिवस

H = अवकाश दिवस

L = उपयोग की छुट्टियों की संख्या

समान्यतया भारत सरकार के प्रतिष्ठान के ग्रंथालयों में 5 दिन साप्ताहिक दिवस अर्थात 5 दिन कार्य

दिवस होते है। यदि कोई कर्मचारी 16 अवकाश दिवस पाता है एवं 40 दिनों का अवकाश लेता है तो उसके वर्ष के कार्य दिवसों की गणना निम्नवत होगी :

$$D = 365-(104+16+40)$$

$$D = 205$$

वेतन / प्रतिदिन लागत = $\dfrac{\text{कुल वार्षिक वेतन}}{\text{वर्ष भर के कार्य दिवस}}$

9.4 लागत विधि (Costing Method) :

लागत निकालने के लिए अलग–अलग ग्रंथालय अलग–अलग अभिगम अपनातें है। कुछ ईकाई लागत निकालने है एवं कुछ प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष लागत का आकलन करते है। हेज एवं बेकर (Hays & Becker) ने लागत को दो भागों में विभाजित किया है:

(i) **प्रक्रिया लागत**– एसी लागत जिसमें विभिन्न विशिष्ट प्रकियाएं सम्मिलित है।

(ii) **कार्य लागत**– इसमें प्रक्रिया में प्रयुक्त विशिष्ट सामाग्रियों की लागत सम्मिलित है।

लीम कुल्हर एवं कूपर (Leim kulhler & Cooper) ने लागत को निम्न प्रकास से विभाजित किया है:–

(क) . **प्रत्यक्ष लागत**– इसमें सामग्री एवं श्रम लागत सम्मिलित होते है;

(ख) **अप्रत्यक्ष लागत**– इसमें सेवा एवं अन्य ऊपरी खर्चे सन्निहित होते है।

दत्ता एवं चौधरी ने भी लागत को दो भागों – प्रत्यक्ष (सामग्री एवं श्रम) एवं ऊपरी खर्चे (प्रशासनिक, उपकरण, फर्नीचर आदि का अवमूल्यन) में विभक्त किया है।

मिश्रा एवं पाडके ने विभिन्न मदों में इकाई लागत के गणन को प्रधानता दी है। उदाहरणार्थ एक पुस्तक की तकनीकी (वर्गीकरण, सूचीकरण) पर लागत का निर्धारण रू 17.43 प्रति पुस्तक किया। इन्होने यह लागत आई0आई0टी, मुम्बई के ग्रंथालय में तृतीय केन्द्रीय वेतन आयोग के आधार पर कर्मचारियों के वेतन को आधार मानकर निर्धारित की।

विभिन्न लागत विश्लेषण कर्ताओं द्वारा प्रयुक्त अनेक अभिगमों के सर्वेक्षण से यह स्पष्ट होता है कि ग्रन्थालय गतिविधियों अथवा सेवाओं के लागत केन्द्र की निकालने का कार्य प्रत्येक गतिविधि अथवा सेवा एवं लागत केन्द्र की प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लागत पर आधारित होता है। अर्थात किसी एक गतिविधि जैसे किसी एक प्रलेख के अधिग्रहण एवं वर्गीकरण अथवा सूचीकरण को संचालित करने में कितना खर्च आयेगा अथवा कोई सेवा जैसे इकाई सूचनाओं की आपूर्ति (किसी प्रलेख का सारांश अथवा एस0डी0आई0 का मुद्रण एवं प्रत्येक लागत केन्द्र की लागत क्या होगी।

ग्रन्थालय की विभिन्न गतिविधियों, उत्पादों एवं सेवाओं के लागत निर्धारण के लिए चरणबद्ध (step-by- step) लागत गणना सहायक सिद्ध हो सकती हैं। कार्य प्रवाह को प्रदर्शित करने के लिए फ्लो चार्ट विकसित किया जाना चाहिए। प्रत्येक चरण में अलग–अलग गणना के लिए डेटा संग्रह के लिए वर्कशीट का विकास किया जा सकता है। वर्कशीट के कुछ नमूने नीचे दिये गये हैं:–

चरणबद्ध लागत निर्धारण प्रक्रिया (Step-by Step costing Procedure) :–

प्रथम चरण – ग्रन्थालय की गतिविधियों एवं उत्पादों/सेवाओं की सूची बनाइये

वर्क शीट–1 : ग्रन्थालय गतिविधियाँ

	गतिविधियाँ	
	अधिग्रहण तकनीकी प्रक्रिया (वर्गीकरण, सूचीकरण, अन्य) संग्रह अनुरक्षण (जिल्दबन्दी, फलक व्यवस्थापन आदि)	

वर्क शीट–2 : ग्रन्थालय सेवाएं/उत्पाद

	उत्पाद/सेवाएं	
	– परिचालन – सन्दर्भ सेवा – अद्यतन जागरुकता सेवा – चयनित सूचना प्रसारण बुलेटिन – आइलाइन खोज – डाइजेस्ट सेवा – सारकरण – अन्य	

द्वितीय चरण – लागत केन्द्रों की सूची बनाइये

वर्क शीट – 3 : लागत केन्द्र

	लागत केन्द्र	
	– अधिग्रहण – तकनीकी प्रक्रिया – सन्दर्भ सेवा – परिचालन – कर्मचारी प्रशिक्षण – अद्यतन जागरुकता सेवा (CAS) – चयनित सूचना प्रसारण सेवा (SDI) – अन्य	

RIL-091

तृतीय चरण – प्रत्येक लागत केन्द्र की लागत ईकाइयों का विवरण तैयार कीजिए।

वर्क शीट – 4 : लागत केन्द्र अनुसार लागत ईकाइयाँ

लागत केन्द्र	लागत ईकाई
1.	2.
– अधिग्रहण	प्रति प्रलेख
– तकनीकी प्रक्रिया	प्रति प्रलेख अथवा प्रति अभिलेख
– संग्रह अनुरक्षण	प्रति प्रलेख
– कर्मचारी प्रशिक्षण	प्रशिक्षण दिन
– परिचालन	प्रति प्रलेख
– अद्यतन जागरुकता सेवा	प्रति बुलेटिन/अंक
– चयनित सूचना प्रसारण सेवा	प्रति बुलेटिन/अंक
– अन्य	

चतुर्थ चरण – 4 : अप्रत्यक्ष लागत की सूची बनाइये

वर्क शीट – 5 : अप्रत्यक्ष लागत

अप्रत्यक्ष सामग्री	अप्रत्यक्ष श्रम	अप्रत्यक्ष खर्चे
1.	2.	3.
– टंकण	–	– उपकरणों का अवमूल्यन
– टंकण रिबन	– प्रशासनिक कर्मचारी	– बिजली
– लिखने के पैड	– प्रबन्धकीय कर्मचारी	– पानी
– कम्प्यूटर मुद्रण के लिए कागज	– विपणन कार्मिक	– टेलीफोन
– कम्प्यूटर रिबन	– अन्य	– उपकरण/मशीन अनुरक्षण संविदा
– जीराक्स मशीन का टोनर		अन्य
– अन्य		

उपयुक्त प्रदर्शित मदों को आवश्यकतानुसार परिवर्धित किया जा सकता है।

वर्क शीट – 6 : सामग्री लागत (अप्रत्यक्ष–उपभोग्य)

सामग्रियाँ (अप्रत्यक्ष उपयोग्य)	प्रति सप्ताह उपयोग की गयी मात्रा	प्रतिदिन उपभोग की गयी मात्रा	इकाई लागत	उपयोग में लायी गयी सामग्रियों की लागत
1.	2.	3.	4.	5.
– टंकण कागज				
– टंकण रिबन				
– कम्प्यूटर कागज				
– कम्प्यूटर रिबन				

इसी तरह उपयोग न होने वाली सामग्रियों की लागत, अप्रत्यक्ष श्रम की लागत एवं अप्रत्यक्ष अन्य खर्चों की सूची वर्कशीट 7,8 एवं 9 के माध्यम से तैयार की जा सकती है।

पाँचवां चरण :– प्रत्येक लागत केन्द्र के लिए प्रत्यक्ष लागत का निर्धारण कीजिए। प्रत्यक्ष सामग्री लागत से सम्बन्धित डेटा संग्रह के के लिए निम्न वर्क शीट का प्रयोग किया जा सकता है।

वर्क शीट – 10 : लागत केन्द्र/गतिविधि के अनुसार प्रत्यक्ष सामग्रियों की लागत

लागत केन्द्र का नाम गतिविधि	(प्रत्येक गतिविधि के लिए, इस श्रेणी की वर्क शीट को अंक प्रदान किये जा सकते हैं, जैसे 10/0101; 10/01/02 आदि)		
प्रयुक्त सामग्रियाँ	प्रयुक्त मात्रा	प्रति इकाई लागत	प्रयुक्त सामग्रियों की कुल लागत
1.	2.	3.	4.
मुद्रण कागज			
जिराक्स कागज			
पैक करने वाले बाक्स			
लिफाफे			
अन्य			

प्रत्यक्ष श्रम की लागत के निर्धारण के लिए कर्मचारियों के वेतन से सम्बन्धित डेटा संग्रह के लिए निम्न वर्क शीट का प्रयोग किया जा सकता है।

वर्क शीट – 11 : प्रत्यक्ष श्रम की लागत

लागत केन्द्र का नाम गतिविधि का नाम लागत ईकाई : लागत/दिन		
पद	कुल वार्षिक परिलब्धियाँ	प्रति कार्य दिवस लागत
1.	2.	3.
सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष व्यावसायिक सहायक अर्द्ध व्यावसायिक सहायक अन्य		

ग्रन्थालय कर्मचारी द्वारा किसी विशेष गतिविधि के संचालन के लिए दिये गये दिवसों की संख्या को उसके प्रतिदिन के वेतन से गुणा करने पर इस गतिविधि की लागत ज्ञात हो जाती है । यदि एक से अधिक कर्मचारी किसी गतिविधि के संचालन के लिए पूरा समय देते हैं तो ऐसे सभी कर्मचारियों का कुल वेतन उस गतिविधि का की प्रत्यक्ष श्रम लागत होगी । इसी प्रकार प्रत्येक लागत केन्द्र की प्रत्यक्ष श्रम लागत का निर्धारण किया जा सकता है ।

अन्य प्रत्यक्ष खर्चों पर डेटा संग्रह के लिए भी वर्क शीट का प्रयोग किया जा सकता है। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष–सामग्री, श्रम एवं अन्य खर्चों की लागत सम्बन्धी डेटा संग्रह के पश्चात प्रत्येक गतिविधि के लिए एक सार पत्र तैयार किया जा सकता है, इससे गतिविधि की लागत के निर्धारण में सहायता मिलती है ।

वर्क शीट – 12 लागत सार–गतिविधि के अनुसार

लागत केन्द्र का नाम							
प्रत्यक्ष लागत				अप्रत्यक्ष लागत			
सामग्री	श्रम	खर्चे	कुल मूल लागत	सामग्री	श्रम	खर्चे	कुल
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.

अप्रत्यक्ष लागत को कार्य केन्द्रों एवं गतिविधियों, सेवाओं में बराबर बराबर विभाजित कर विभाजित लागत प्राप्त की जा सकती है ।

छठाँ चरण :– लागत केन्द्र के अनुसार लागत का सार निर्धारित कीजिए।

वर्क शीट – 13 : केन्द्र के अनुसार लागत सार

कार्य केन्द्र का नाम गतिविधि/सेवा/उत्पाद का नाम	प्रत्यक्ष लागत	अप्रत्यक्ष लागत	लागत केन्द्र को आबंटित प्रशासनिक एवं अन्य ऊपरी खर्चे	कुल योग
1.	2.	3.	4.	5.
– अधिग्रहण				
– तकनीकी प्रक्रिया				
– सन्दर्भ सेवा				
– संग्रह अनुरक्षण				
– परिचालन				
– अद्यतन जागरुकता सेवा				
– चयनित सूचना प्रसारण				
– डाइजेस्ट सेवा				
– अन्य				

आनलाइन खोज को लागत निकालना (Costing of an Online Search) :–

आधुनिक समय में आनलाइन खोज अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया है। ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों को आनलाइन खोज के अभिगमों पर काफी धन व्यय हो रहा है, ऐसी स्थिति में इसकी लागत की समीक्षा करना आवश्यक है। यह जान लेना प्रबन्धन के लिए उपयोगी होगा कि प्रति आनलाइन खोज क्या लागत आती है। आनलाइन खोज से जुड़े विभिन्न उपकरणों, तकनीकों एवं अन्य मदों में खर्च निम्नलिखित है, जिनका विभाजन प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लागत में है :–

सामग्री – अप्रत्यक्ष

मूल

माइक्रो कम्प्यूटर

संचार साफ्टवेयर

मोडेम

प्रिन्टर

वोल्टेज स्टेबिलाइजर्स

सिस्टम मैनुअल्स

थीसारी

फर्नीचर

अन्य

कम्प्यूटर कागज

कम्प्यूटर रिबन

अन्य कार्यालयी कागज, कलम, स्याही आदि

श्रम--अप्रत्यक्ष :--

प्रबन्धक/समन्वयक

खोजकर्ता

सहायक कर्मचारी

सुरक्षा

अन्य खर्चे–अप्रत्यक्ष :–

टेलिफोन लाइन

आनलाइन खोज के लिए पासवर्ड प्राप्त करना

कर्मचारियों का प्रशिक्षण

प्रशिक्षण के लिए यात्रा

प्रोन्नति खर्चे

वार्षिक अनुरक्षण संविदा

अन्य खर्चे – प्रत्यक्ष :–

कनेक्ट टाइम

संचार

साइटेशन (सूचना डाउनलोड करने का खर्च)

ऊपर प्रदर्शित प्रत्यक्ष लागतों को जोड़कर किसी खोज की मूल लागत प्राप्त की जा सकती है। विभिन्न मदों में प्रदर्शित अप्रत्यक्ष लागतों की गणना प्रतिवर्ष की जाती है एवं इसके पश्चात प्रति दिन लागत आनुपातिक ढंग से प्राप्त की जाती है। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लागत संयुक्त होकर उत्पादन लागत निर्धारित करते हैं। उत्पादन लागत को सूचना भेजने के व्यय एवं अन्य प्रशासनिक खर्चों के साथ जोड़कर खोज की कुल लागत प्राप्त की जाती है।

9.5 लागत विश्लेषण (Cost Analysis)

वित्तीय कठिनाइयों के वर्तमान युग में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के लिए आवश्यक हो गया है कि वे अपने संसाधनों का उपयोग इस प्रकार करें कि कम से कम लागत पर अधिकाधिक लाभ प्राप्त कर सकें। अर्थात् कम लागत में अधिक से अधिक पाठकों को सन्तुष्ट कर सकें। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र अपनी गतिविधियों एवं सेवाओं में लागत सम्बन्धी अध्ययन को आवश्यक मानते हैं।

RIL-091

ग्रन्थालय की गतिविधियों एवं सेवाओं में लागत सम्बन्धी अध्ययन के लिए लागत विश्लेषण आवश्यक है। इसे लागत अध्ययन के मूल उपकरण के रूप में प्रयोग किया जाता है। बिना लागत विश्लेषण के लागत सम्बन्धी अध्ययन सम्भव नहीं है। लागत विश्लेषण,लागत अध्ययन की विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों के संचालन में सहायता करता हैं। इससे प्राप्त निष्कर्षों का उपयोग बजट बनाने, लेखाकरण एवं कार्य–निष्पादन जाँच प्रकिया के लिए भी किया जाता हैं। लागत विश्लेषण मूलतः आर्थिक माँप या जाँच है, लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए लगाये गये समय के परिप्रेक्ष्य में इसे मांपा जाता हैं।

लागत विश्लेषण में प्रणाली के संचालन के लिए आवश्यक निवेश सम्बन्धी संसाधनों की मांप सम्मिलित होती है। लागत विश्लेषण –कर्ता विश्लेषण के दौरान लक्ष्य की प्राप्ति में उपयोगी उन कार्य क्षेत्रों का निर्धारण करता हैं, जिन पर सूचना वांछित होती है। इसमें प्रणाली की लागत एवं लागत लाभ (परिणाम, लाभ, उपयोगिता के सन्दर्भ में) दोनों पर विचार किया जाता है, साथ ही अन्य विकल्पों पर भी विचार किया जाता है। अधिकांश ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में इस पद्धति का उपयोग किया जाता है। संसाधनों के सावधानीपूर्वक एवं प्रभावी उपयोग से किसी विशिष्ट गतिविधि अथवा सेवा में लागत को कम किया जा सकता है।

विश्लेषणात्मक रूपरेखा का विकास लागत विश्लेषण की पहली शर्त होती है। इसे आरम्भ करने के पूर्व यह आवश्यक होता है कि इसकी रूपरेखा बना ली जाय। रूपरेखा में समस्या के प्रकृति की पहचान, विश्लेषण के लिए उपयुक्त विकल्पों का स्पष्टीकरण, एवं विश्लेषण की उपयुक्त विधियों का चयन आदि सम्मिलित होते हैं। इसमें प्रत्येक छोटी इकाई लागत को सम्मिलित कर इसे अधिक प्रभावी बनाया जाता है। प्रत्येक स्तर की इकाई पर आने वाली लागत को इकाई लागत कहा जाता है।

लागत विश्लेषण में निम्न चरण हो सकते हैं :–

1. प्रक्रिया की पहचान एवं परिमाप,
2. प्रक्रिया का अत्यन्त छोटे अवयवों में विभाजन,
3. प्रत्येक चरण के लिए वांछित संसाधन का निर्धारण,
4. प्रक्रिया के लिए समय एवं मात्रा की पहचान एवं इसे लागत से सम्बन्धित करना,
5. लागत विश्लेषण एवं विकल्प।

प्रक्रिया अथवा समस्या की पहचान के बाद इसे अत्यन्त छोटी इकाइयों अथवा भागों में विभाजित किया जाता है इससे विश्लेषण कार्य अत्यन्त आसान हो जाता है उदाहरणार्थ अधिग्रहण प्रक्रिया को पुस्तक चयन, आदेश, क्रया, परिग्रहण आदि इकाइयों में विभाजित किया जा सकता है। इसके बाद प्रक्रिया के प्रत्येक चरण में वांछित संसाधनों को निर्धारित किया जाता है, उदाहरण के तौर पर वांछित श्रम, उपकरण, वातावरण, पर्यवेक्षण, नियंत्रण आदि संसाधनों का अध्ययन किया जाता है। लागत के सापेक्ष कितना कार्य कितने समय में पूरा होता है एव इस कार्य के सम्पादन के और क्या विकल्प हो सकते हैं, इन तथ्यों का परीक्षण एवं विश्लेषण लागत विश्लेषण के अत्यन्त महत्वपूर्ण चरण हैं।

लागत विश्लेषण के विभिन्न अभिगम
(Different Approaches of Cost Analysis) :–

लागत विश्लेषण के अनेक अभिगम प्रचलित हैं, ये अभिगम प्रायः आपस में कुछ दूसरे से जुड़े होते हैं। इनमें भिन्नता इनकी कुछ विशिष्ट विशेषताओं एवं अनुप्रयोग को लेकर स्थापित की जा सकती है। लागत विश्लेषण के महत्वपूर्ण अभिगम निम्न हैं :–

RIL-091

(क) लागत प्रभावशीलता/उपयोगिता (Cost effectiveness)

(ख) लागत लाभ (Cost Benefit)

(ग) लागत उपयोगिता (Cost utility)

(घ) लागत संभाव्यता (Cost feasibility)

लागत उपयोगिता विश्लेषण :–

प्रत्येक ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के कुछ निश्चित लक्ष्य होते हैं जिन्हें प्राप्त किया जाना होता है। इन निश्चित लक्ष्यों अथवा उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए लागत एवं प्रभाव की दृष्टि से इनका विश्लेषण आवश्यक होता है। सामान्यता कम से कम लागत पर अधिकतम उत्पादन पर बल दिया जाता है। यहाँलागत उपयोगिता विश्लेषण का तात्पर्य लक्ष्यों के प्राप्ति के लिए लागत एवं प्रभाव के सन्दर्भ में अन्य विकल्पों के अध्ययन से है।

लागत उपयोगिता एवं लागत दक्षता में मौलिक अन्तर यह है कि लागत उपयोगिता उत्पादन पर आधारित है जबकि लागत दक्षता निवेश पर आधारित विश्लेषण है। लागत के एक निशचित स्तर पर अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करना है, यहाँ कम से कम लागत का निर्धारण सम्भव नहीं रह सकता है एवं क्रमशः दूसरे में उत्पादन के एक निश्चित स्तर पर लागत को कम से कम करने का लक्ष्य होता है। तात्पर्य यह है कि यथासम्भव उत्पादन के स्तर को बनाये रखते हुए लागत को कम करना होता है,

लागत उपयोगिता अभिगम का ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में अनुप्रयोग सरल है। इस अभिगम में लागत एवं उपयोगिता सम्बन्धी सूचनाओं की आवश्यकता होती हैं जिन्हें ग्रन्थालय से प्राप्त करना सरल होता है। इसके अतिरिक्त इस अभिगम के अन्य लाभ भी हैं, जैसे अध्ययन को विस्तृत बनाते हुए किसी निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए विकंल्पों पर विचार सम्भव होता है।

लागत लाभ विश्लेषण :–

लागत लाभ विश्लेषण लागत विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण अभिगम है। यह आर्थिक आधार पर उनके लागत एवं लाभ के सन्दर्भ में विकल्पों का मूल्यांकन है। इस विश्लेषण के आधार पर किसी परियोजना अथवा सेवा को जारी रखने अथवा समाप्त करने के बारे में निर्णय लिया जा सकता है। इसमें प्रत्येक विकल्प क़ा लागत एवं लाभ मूल्य जाँचने का प्रयत्न किया जाता है। दीर्घकालीन की परियोजनाओं अथवा सेवाओं से सम्बद्ध निर्णयों के लिए लागत लाभ विश्लेषण एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में कार्य करता है। लागत लाभ विश्लेषण के निम्नलिखित लाभ हैं :–

(क) लागत से अधिक लाभ वाले किसी विशिष्ट विकल्प का निर्धारण,

(ख) विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विकल्प समुच्चय की पहचान करना, जिनमें अत्यधिक कम लागत लाभ अनुपात निहित हो,

(ग) विभिन्न योजना क्षेत्रों, जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा आदि के मध्य विकल्प समुच्चय का निर्धारण।

इस विश्लेषण की कुछ अपनी समस्याएं भी हैं, जैसे वित्तीय सन्दर्भ के लागत एवं लाभ की मांप, डेटा संग्रहण की समस्या, परिणाम की शुद्धता की समस्या। इन समस्याओं के बावजूद ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में संसाधन के बँटवारे में निर्णय लेने के लिए इसका एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। इस अभिगम का उपयोग एक दार्घकालीन परियोजनाओं एवं सेवाओं में विशेष उपयोगी है।

लागत उपयोगिता (Cost utility) :—

इस विश्लेषण का सम्बन्ध लागत एवं अनुमानित सुगमता के सन्दर्भ में विकल्पों के अध्ययन से है। व्यक्तिनिष्ठ मूल्यांकन के लिए यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण उपकरण है, जैसे किसी विशिष्ट ग्रन्थालय गतिविधि अथवा सेवा के सम्भव परिणाम का मूल्यांकन। लागत सुगमता अभिगम में वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विस्तृत मात्रात्मक एवं गुणात्मक डेटा का उपयोग किया जाता है। इस अभिगम की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें मात्रात्मक डेटा का ही मात्र प्रयोग नहीं किया जाता है बल्कि गुणात्मक डेटा को भी आधार बनाया जाता है। अपर्याप्त अथवा दोषपूर्ण सूचनाओं से परिणाम निकालना सम्भव हो पाता है। इसका मुख्य दोष इसमें किसी मानक प्रविधि का प्रयोग नहीं किया जाना है।

लागत सुगमता/सम्भाव्यता विश्लेषण (Cost Feasibility) :—

लागत सुगतमा विश्लेषण का तात्पर्य ऐसे अभिगम से है जिसमें विभिन्न विकल्पों की लागत का आकलन किया जाता है ताकि यह निश्चित किया जा सके कि लागत हमारी क्षमता के अन्दर है कि नहीं। ऐसे विकल्प जिनकी लागत हमारे बजट अथवा अन्य संसाधनों के अनुरूप नहीं है तो हम उन विकल्पों पर विचार ही नहीं करेंगे अर्थात् उनका विश्लेषण नहीं करेंगे। इस अभिगम के केन्द्र बिन्दु में लागत होती है एवं मूल रूप से हम लागत पक्ष का ही आकलन करते हैं दूसरी तरफ अन्य अभिगमों में लागत के साथ–साथ परिणाम अथवा निकासी पर विचार किया जाता है।

9.7 लागत विश्लेषण की विधियाँ (Methads of Cost Analysis)

लागत विश्लेषण किसी विशेष प्रक्रिया की लागत सम्बन्धी अध्ययन का एक प्राथमिक उपकरण होता है। उक्त विशेष प्रक्रिया के लागत विश्लेषण के लिए अनेक अपनायी जाती हैं। इनमें अनेक मापन एवं परीक्षण विधियाँ सम्मिलित होती हैं। लागत विश्लेषण के परीक्षण का कार्य कई चरणों में सम्पन्न होता हैं, विधियों के अध्ययन के लिए लागत विश्लेषण के इन चरणों को समझाना आवश्यक है। विभिन्न चरण इस प्रकार हैं :—

(क) **निवेश चरण** :— निवेश चरण में प्रक्रिया के संचालन के लिए जैसे वांछित श्रम, सामग्री आदि की मात्रा की पहचान की जाती है एवं उनकी लागत स्थापित की जाती है। श्रम सम्बन्धी लागत निकालना यद्यपि काफी कठिन कार्य है लेकिन इसे एक सामान्य श्रम दर पर श्रम के कुल घण्टों अथवा अवधि के आधार पर प्राप्त किया जाता है। निवेश लागत को निश्चित लागत के समतुल्य मानकर किसी प्रक्रिया की कम से कम लागत प्राप्त की जा सकती है।

(ख) **कार्य चरण** :— इस चरण में उत्पादन सम्बन्धी वास्तविक कार्य सम्पन्न किया जाता है। निवेश लागत सम्बन्धी डेटा को प्रक्रिया के उचित सम्पादन के परिवीक्षण एवं मूल्यांकन के लिए प्रयोग किया जाता है। इस चरण में प्रक्रिया को संचालित करने की वास्तविक लागत प्राप्त की जाती है। स्वाभाविक है कि इसमें परिवर्तनीय लागत को सम्मिलित किया जाय।

(ग) **निकासी/उत्पादन चरण** :— यह लागत विश्लेषण का अन्तिम चरण है, इसमें उत्पादन चरण में लागत निकाली जाती है। निकासी लागत निकालने के लिए निवेश लागत एवं कार्य लागत को जोड़ दिया जाता है। उत्पादन की मात्रा से इसका सीधा सम्बन्ध होता है। किसी विशिष्ट प्रक्रिया को संचालित करने में कुल कितनी लागत आती है एवं इसकी उत्पादन क्षमता क्या है, इन्हीं तथ्यों को आधार बनाकर किसी विशिष्ट प्रक्रिया का मूल्यांकन एवं उसकी लागत का निर्धारण किया जा सकता है। लागत विश्लेषण के लिए सामान्यतया निम्न दो विधियों का उपयोग किया जाता है :—

(i) **कार्य मापन (Work measurement)**

RIL-091

(ii) प्राक्कलन अथवा अंश विधि (Estimation or Ingredient method)

प्रायः प्रत्येक प्रकार के कार्यों अथवा सेवाओं के लागत परीक्षण के लिए कार्य मापन विधि का प्रयोग किया जा सकता है। यह विधि मूलतः कार्य एवं समय अध्ययन पर आधारित होती है एवं डेटा संग्रह के लिए कार्य डायरी, गतिविधि, कार्य नमूने आदि, विभिन्न विधियों का उपयोग करती है। इस विधि में किसी विशिष्ट प्रक्रिया अथवा सेवा के सम्पादन के लिए श्रम समय की ठीक–ठीक मात्रा को जानने का प्रयत्न किया जाता है।

प्राक्कलन अथवा अंश विधि कार्य मापन अध्ययन का उपवर्ग है, सामान्यतया इस विधि का प्रयोग तब किया जाता है जब कार्य मापन विधि का अनुप्रयोग सम्भव न हो। इसमें सर्वप्रथम निकासी अथवा उत्पादन के लिए वांछित संसाधन निवेश को मात्रा का निर्धारण किया जाता है, इा कार्य के लिए निरीक्षण अथवा कर्मचारियों के साथ वार्तालाप आदि तरीके अपनाये जाते हैं। पूरे प्रणाली की सम्पूर्ण लागत खर्च के विभिन्न मदों के अन्तर्गत विभिन्न अवयवों या घटकों की लागत का आकलन किया जाता है। सम्पूर्ण प्रणाली की लागत विश्लेषण के लिए प्रत्येक इाकई की लागत निकालना आवश्यक होता है। सामान्यतया किसी प्रणाली में पाँच अंश/अवयव पाये जाते हैं। ये हैं : कार्मिक, सामग्री, उपकरण, सुविधाएं एवं अन्य निवेश। लागत विश्लेषण के लिए इनको छोटी–छोटी इकाइयों में विभाजित कर अध्ययन करना सुविधाजनक होता है। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में लागत विश्लेषण के लिए प्रायः प्राक्कथन विधि का उपयोग किया जाता है। इस विधि से परिणाम में अधिक शुद्धता प्राप्त की जा सकती है। यद्यपि किसी भी लागत विश्लेषण विधि को मानक रूप में ग्रन्थालय में आरोपित नहीं किया जा सकता है क्योंकि ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र लाभ कमाने वाले संगठन नहीं होती है बल्कि सेवा आधारित संगठन होते हैं।

9.8 ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में लागत विश्लेषण (Cost Analysis in Library & Information Centres)

अन्य संस्थाओं एवं संगठनों की तरह ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र भी वित्तीय कठिनाइयों के दौरे से गुजर रहे हैं। अतः ये भी अपने लागत को कम करते हुए उत्पादन/निकासी को बढ़ाने का प्रयत्न कर रहे हैं, इस स्थिति में ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों में लागत विश्लेषण का अनुप्रयोग अनिवार्य हो गया है।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र प्रायः किसी संस्था अथवा संगठन के अंग के रूप में कार्य करते हैं। कुछ संगठन लाभ कमाने के लिए कार्य करते हैं। एवं कुछ सेवा कार्य करते हैं। लाभ अर्जित करने वाले संगठन अपने ग्रन्थालय एवं सूचना सेवाओं के बदले मूल्य वसूल करते हैं। सूचनाओं की बढ़ती मांग, बेहतर सेवाओं की आकांक्षा एवं घटते संसाधनों ने लाभ न अर्जित करने वाले ग्रन्थालयों को भी विवश कर दिया है कि वे अपनी सेवाओं को बदले कुछ मूल्य वसूल कर अपने अस्तिव को कायम रख सकें। ग्रन्थालय सेवाओं एवं उत्पादों का लागत निर्धारण एक अत्यन्त कठिन कार्य है। ग्रन्थालय सेवाओं का कुछ लागत मूल्य निर्धारण करने के लिए लागत विश्लेषण आवश्यक हो गया है। ग्रन्थालय एवं सूचना सेवाओं के लागत विश्लेषण के निम्न लाभ हैं :–

(क) लागत विश्लेषण से प्रत्येक सेवा अथवा गतिविधि के खर्च के आंकलन में सहायता मिलती है।

(ख) लागत डेटा का उपयोग किसी प्रक्रिया या सेवा की दक्षता एवं इससे प्राप्त लाभों के आंकलन के लिए किया जा सकता है।

(ग) भविष्य के क्रियाकलापों के निर्धारण सम्बन्धी निर्णयों के लिए इन सूचनाओं का उपयोग किया जा सकता है।

(घ) इससे कर्मचारियों के दक्षता के मूल्यांकन में सहायता मिलती है।

RIL-091

(ङ) ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र के संसाधनों का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित किया जा सकता है।

ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली से सम्बंधित लागत विश्लेषण को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, ये दो श्रणियाँ निम्न हैं :–

1. स्थूल लागत निर्धारण (Macro Costing)
2. सूक्ष्म लागत निर्धारण (Micro Costing)

प्रथम श्रेणी में भविष्य की लागत आँकलन के लिए प्रणाली की वर्तमान लागत निर्धारित की जाती है जबकि दूसरे में प्रणाली को विभिन्न इकाइयों में विभाजित कर प्रत्येक इकाई की अलग–अलग लागत निर्धारित की जाती हे। इस विधि से सेवा या प्रक्रिया के एक विशेष इकाई की लागत का विश्लेषण सम्भव है। किसी ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली में सामान्यतः पाँच प्रकार के निवेश की आवश्यकता होती है। ये संसाधन निवेश निम्न है :–

(i)	मानव शक्ति	पर्यवेक्षक व्यावसायिक अर्द्ध व्यावसायिक अव्यावसायिक अन्य
(ii)	सुविधा संसाधन	कार्य स्थल फर्नीचर
(iii)	सामग्री	पुस्तक पत्रिका स्टेशनरी सूची पत्रक, फलापी आदि
(iv)	उपकरण	कम्प्यूटर्स प्रिन्टर्स टाइपराइटर आदि
(v)	अन्य निवेश	बिजली, पानी, अनुरक्षण कर्मचारियों के प्रशिक्षण

ग्रन्थालय की कुल लागत में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों लागत सम्मिलित होती है। ग्रन्थालय प्रणाली की प्रत्यक्ष लागत में उपर्युक्त प्रदर्शित प्रथम तीन प्रकार के निवेश, कर्मचारी, उपकरण, सामग्री आदि को सम्मिलित किया जाता है। किसी प्रक्रिया अथवा सेवा के संचालन के लिए प्रत्यक्ष लागतों के अलावा अन्य लागतों की आवश्यकता होती है जो सीधे एक प्रक्रिया से जुड़ी नहीं होती है जैसे बिजली, पानी, अनुरक्षण, कार्यस्थल की सफाई आदि।

ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र की लागत विश्लेषण प्रक्रिया निम्न ढंग से संचालित की जा सकती है :–

RIL-091

(क) विश्लेषित की जाने वाली सेवा या उत्पाद की इकाई का निर्धारण।

(ख) प्रत्येक ग्रन्थालय प्रक्रिया के लिए लागत केन्द्र का निर्धारण।

(ग) प्रत्येक लागत केन्द्र एवं इसकी गतिविधियों से सम्बन्धित लागत डेटा का संग्रह।

(घ) लागत केन्द्र के लिए सेवा लागत का उचित आबंटन।

(ङ) इकाई लागत का निर्धारण।

इकाई लागत के निर्धाररण के लिए एक लागत केन्द्र जैसे प्रचालन सेवा की कुल लागत को परिचालन की कुल संख्या से विभाजित कर सकते हैं। वर्गो (Virgo) ने कुल लागत अभिगम के सन्दर्भ में लागत विश्लेषण के निम्न चरण सुझाये हैं :—

1. लागत केन्द्रों की पहचान एवं पुनः उनको उप लागत केन्द्रों में विभाजित करना,

2. प्रत्येक कर्मचारी द्वारा किये जाने वाले कार्यो की सूचीकरण एवं उनके द्वासरा कार्य सम्पादन में लगे कुल समय की गणना करना,

3. प्रत्येक कर्मचारी के परिणाम को बताने वाले इकाई मांप का चयन करना,

4. एक कार्य को सम्पन्न करने में लगे समय को दैनिक आधार पर अंकित करना,

5. समय डेटा एवं परिणाम/निकासी डेटा को प्रत्येक माह तैयार करना,

6. वर्ष के अन्त में प्रत्येक कर्मचारी से सम्बन्धित समय डेटा का सार तैयार करना एवं इसे उसके वेतन से गुणा करना,

7. वर्ष के अन्त में सभी कर्मचारियों के लिए कार्य, गतिविधि एवं लागत केन्द्र के अनुसार संगठित अथवा सम्मिलित डेटा तैयार करना,

8. प्रत्येक कार्य एवं लागत केन्द्र के लिए कर्मचारियों से भिन्न अन्य खर्चो का आवंटन,

9. गतिविधि खर्च एवं सेवा लागत केन्द्र के सहयोग के लिए अप्रत्यक्ष लागत का आवंटन,

10. मांप की प्रत्येक इकाई के लिए, जैसे पुस्तक, सूची, सन्दर्भ खोज, उचित औसत लागत का निर्धारण।

एक अन्य अभिगम के रूप में लागत निर्धारण के लिए उपलब्ध विभिन्न वित्तीय सूचनाओं का उपयोग किया जाता है । ये वित्तीयं सूचनाएं बजट, विवरण, विस्तृत लेन—देन का विश्लेषण एवं कर्मचारियों से साक्षात्कार आदि से प्राप्त की जाती है । वर्गो (Virgo) के अनुसार इस अभिगम में निम्न चरण होते हैं :

(क) लागत केन्द्रों की पहचान

(ख) लागत केन्द्रों से सम्बन्धित गतिविधियों एवं कार्यो का निर्धारण

(ग) लागत केन्द्र, गतिविधि अथवा कार्य के लिए उपयुक्त इकाई लागत माप का चयन,

(घ) विभिन्न चरणों के माध्यम से इकाई लागत सूचना एकत्रित करना :—

(1) ग्रन्थालय कर्मचारियों द्वारा लगाये गये समय के सन्दर्भ में प्रति घंटा लागत का निर्धारण

(2) एक कार्य सम्पन्न करने में कर्मचारी द्वारा लगाया गया वास्तविक समय

(3) विभिन्न कार्यो के सम्पादन के लिए वांछित प्रत्यक्ष सामग्रियां

(4) अन्य प्रत्यक्ष खर्च, जैसे यात्रा सुविधा आदि

RIL-091

(5) पूरी प्रत्यक्ष गतिविधि लागत का निर्धारण

(6) अप्रत्यक्ष गतिविधि खर्च का निर्धारण

(7) सम्पूर्ण गतिविधि लागत का निर्धारण एवं इकाई लागत सूचनाओं का गणन

(ङ) डेटा का विश्लेषण ।

उपरोक्त प्रदर्शित चरणों में लागत विश्लेषण का कार्य पूरा कर लिया जाता है । ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली की लागत विश्लेषण के लिए कार्य एवं समय अध्ययन विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए। यदि इस विधि का प्रयोग प्रभावी ढंग से किया जाय तो यह लागत विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण उपकरण सिद्ध हो सकता है ।

9.9 निष्कर्ष

प्रस्तुत इकाई में लागत निर्धारण एवं विश्लेषण के विचार एवं महत्व को ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्रों के परिप्रेक्ष्य में प्रदर्शित किया गया है । ग्रन्थालय की विभिन्न गतिविधियों एवं सेवाओं के लागत निर्धारण का ज्ञान इसकी महत्वपूर्ण विशेषता है । लागत निर्धारण द्वारा हम सक्षम अधिकारियों को बजट में अधिक धन की माँग को न्यायोचित ठहरा सकते हैं । उदाहरण स्वरूप अनेक प्रकार की वर्कशीट का प्रदर्शन यहां सम्मिलित है जो सूचनात्मक है, जिनमें परिवर्तन एवं परिवर्धन आवश्यकतानुसार किया जा सकता है ।

ग्रन्थालय में लागत विश्लेषण को लागत अध्ययन के मूल उपकरण के रूप में प्रयोग किया जाता है। लागत विश्लेषण से प्राप्त सूचनाओं का उपयोग बजट बनाने, लेखाकरण एवं कार्य सम्पादन जांच प्रक्रिया में महत्वपूर्ण होता है । इसमें अनेक चरण सम्मिलित हैं । प्रक्रिया अथवा समस्या की पहचान के बाद इसे अत्यन्त छोटी इकाइयों में विभाजित कर विश्लेषण कार्य किया जाता है । सम्पूर्ण प्रणाली के लागत विश्लेषण के लिए प्रत्येक इकाई की लागत निकालना आवश्यक होता है। लागत विश्लेषण से पर्याप्त उपयोगी सूचनाएं उत्पन्न होती है ।

RIL-091

प्रमुख शब्द

अप्रत्यक्ष लागत (Indirect Costs) – ऊपरी खर्चों से सम्बद्ध लागत, जैसे भवन, मशीन, बिजली, पानी खर्च आदि, सामान्यतः इनका उपयोग किसी विशेष गतिविधि के लिए न होकर अनेक गतिविधियों के सम्पादन में किया जाता है ।

इकाई लागत (Unit Cost) – उत्पादन अथवा सेवा की एक इकाई के उत्पादन की लागत ।

कार्य मापन (Work measurement) – प्रत्येक प्रकार के कार्य/सेवा के लागत परीक्षण के लिए अपनायी जाने वाली विधि ।

कार्य विवरण (Job description) – किसी विशिष्ट कार्य का विवरणात्मक वास्तविक विवरण ।

कार्य विशिष्टीकरण (Job specification) – किसी कार्य के उचित ढंग से सम्पादन के लिए वांछित न्यूनतम स्वाकार्य कार्मिक योग्यताओं का विवरण।

कुल लागत (Total cost) – निश्चित लागत एवं परिवर्तनीय लागत का कुल योग।

गुणवत्ता नियंत्रण (Quality control) – बेहतर परिणाम के लिए विभिन्न संसाधनों : तकनीकी, कार्मिक, सूचनात्मक, वित्तीय संसाधनों आदि, के प्रभावी उपयोग के निर्धारण की प्रक्रिया।

गुणवत्ता सुधार (Quality improvement) – विभिन्न राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के मानकों के विकास द्वारा सूचना प्रणाली एवं सेवाओं में गुणवत्ता सुधार।

ग्रन्थालय प्रबन्धन (Library Management) – ग्रन्थालय कर्मचारियों के द्वारा सम्पन्न क्रियाकलापों को निपुणता के साथ नियोजित करना, नियन्त्रित करना एवं निर्देशित करना है ताकि निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके ।

निष्पादन माप (Performance measurement) – निश्चित सिद्धान्तों के परिप्रेक्ष्य में सूचना प्रणाली द्वारा सम्पन्न किये जा रहे कार्यों के सीमा की माँप ।

निष्पादन मूल्यांकन (Performance evaluation) – संगठन में निहित व्यक्तिगत कर्मचारी की भूमिका का तार्किक विश्लेषण एवं मूल्यांकन ।

निर्णय – किये जाने वाले कार्य का निश्चय करना

परिवर्तनीय लागत (Variable costs) – किसी उत्पाद अथवा सेवा की मात्रा से प्रभावित होकर लागत में परिवर्तन होना ।

प्रणाली (System) – विभिन्न घटक भागों का समुच्चय है, ये घटक आपस में एक दूसरे से सम्बद्ध एवं आश्रित होते हैं। ग्रन्थालय प्रणाली के घटक भाग हैं – अधिग्रहण, सामयिकी नियन्त्रण, सूचना संग्रहण एवं पुनर्प्राप्ति, परिचालन, उपयोगकर्ता सेवा आदि ।

प्रणाली अभिकल्पन (System design) – प्रणाली विश्लेषण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर प्रणाली के अभिकल्पन का विकास ।

प्रणाली विश्लेषण (System analysis) – प्रणाली को बेहतर बनाने के लिए संगठन के परीक्षण एवं विश्लेषण की औपचारिक प्रक्रिया ।

RIL-091

प्रत्यक्ष लागत (Direct Costs) – किसी उत्पाद, सेवा अथवा गतिविधि से सीधे जुड़ी लागत ।

फ्लो चार्ट (Flow chart) – किसी प्रणाली अथवा उप प्रणाली में सम्मिलित कार्य, निर्णय की ग्राफ के माध्यम से प्रस्तुति। इसमें कार्यों को तार्किक ढंग से समन्वित कर मानक प्रतीकों का प्रयोग करते हुए प्रस्तुत किया जाता है।

बजट – आगामी वर्ष के लिए आय एवं व्यय की वित्तीय योजना का प्रस्तावित विवरण, जिसे किन्हीं निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उक्त अवधि में सम्पन्न किया जाना हो।

बाजार विश्लेषण (Market Analysis) – विपणन प्रक्रिया में प्रत्येक स्तर पर सूचनाओं का संग्रह एवं विश्लेषण। इससे प्रबन्धन को अपने उत्पादों को बाजार स्थापित करने में सहायता मिलती है।

भागीदारी प्रबन्धन (Participative Management) – ऐसी प्रबन्धन प्रणाली जिसमें संगठन की प्रत्येक गतिविधि में प्रत्येक स्तर के कर्मचारियों की भागीदारी सुनिश्चित रहती है।

मानव संसाधन नियोजन (Human Resource Planning) – संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वांछित कर्मचारियों अथवा मानव संसाधनों के उचित विकास एवं व्यवस्थापन की प्रक्रिया।

मानव संसाधन विकास (Human Resource Development) – संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कर्मचारियों की क्षमताओं एवं योग्यताओं का विकास। इसमें कर्मचारियों का व्यक्तिगत विकास कर उनकी संतुष्टि को संस्था के उन्नयन में उपयोग करना भी सम्मिलित है।

लागत लाभ विश्लेषण (Cost Benefit Analysis) – किसी परियोजना की लागत अथवा उत्पाद की लागत की तुलना में उससे प्राप्त लाभ (सूचना के क्षेत्र में सामाजिक लाभ) का विश्लेषण। किसी सेवा के जारी रखने या समाप्त करने का निर्णय लेने में यह तकनीक अत्यन्त सहायक है।

लागत विश्लेषण (Cost Analysis) – किसी सेवा अथवा गतिविधि को सम्पन्न करने में लगे समय अथवा आर्थिक व्यय की माप। यह आर्थिक अध्ययन का एक आवश्यक उपकरण है।

लेखाकरण (Accounting) – ग्रन्थालय के आय एवं व्यय सम्बन्धी विवरण का अभिलेखों में उचित अंकन एवं व्यवस्थापन।

लेखा परीक्षण (Auditing) – किसी संगठन अथवा संस्था के वित्तीय लेन–देन के वितरण का किसी मान्य स्वतन्त्र लेखाकार अथवा शासन द्वारा नियुक्त लेखाकारों द्वारा किया जाने वाला सूक्ष्म परीक्षण एवं जाँच।

वर्कशीट (Work Sheet) – पंक्ति एवं स्तम्भ युक्त ऐसी शीट जिस पर शीर्षक, अंक अथवा डेटा अंकित किया जा सके।

विपणन आडिट (Market Audit) – किसी संगठन द्वारा अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किया जाने वाले सम्पूर्ण विपणन प्रयासों का स्वतंत्र परीक्षण। इससे भविष्य के लिए प्रभावी कार्यक्रम तय किये जा सकते हैं।

विपणन मिश्रण (Marketing Mix) – उत्पाद, अभिकल्पन, I, संचार एवं वितरण का सम्मिश्रण।

RIL-091

विपणनीय वस्तु (Marketable Commodity)	–	ऐसी वस्तु जो बाजार में विक्रय के लिए उपयुक्त पायी जाती है।
विस्तार पद्धति (Method of Details)	–	आवर्ती व्यय के सभी मदों पर होने वाले व्यय के योग की पद्धति, जिसे वित्तीय आंकलन की एक विधि के रूप में उपयोग किया जाता है।
वैज्ञानिक प्रबन्धन (Scientific Management)	–	प्रबन्धन की यह विधा जिसमें संगठन के उत्पादों, सेवाओं, नियन्त्रण वितरण एवं अन्य कार्यों में वैज्ञानिक सिद्धान्तों, तर्कों एवं वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग किया जाता है।
संतुलन मूल्य (Equilibrium Price)	–	वस्तु विशेष के मूल्य का वह स्तर जहाँ उसकी मांग एवं पूर्ति दोनों बराबर हो।
समय अध्ययन (Time Study)	–	कार्य सम्पादन के किसी विशेष स्तर पर किसी गतिविधि अथवा सेवा को संचालित करने में वांछित समय का निर्धारण करने के लिए प्रयुक्त तकनीक।
सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन (Total Quality Management)	–	ऐसी नवीन प्रबन्धन प्रणाली जिसका आधार गुणवत्ता एवं मानव संसाधन विकास होता है। जापान में विकसित इस नई प्रबन्धन विचारधारा में भागीदारी प्रबन्धन एवं वैज्ञानिक प्रबन्धन के उपयोगी तत्वों को एक साथ समाहित कर दिया गया है।
सूचना (Information)	–	विश्लेषित एवं वर्गीकृत डेटा जिसका उपयोग निर्णयन आदि कार्यों में किया जाता है। डेटा के साथ अर्थ संयुक्त कर देने से डेटा सूचना बन जाती है।

सन्दर्भ एवं अतिरिक्त पाठ्य सामग्री

चैपमैन, एडवर्ड ए0 अन्य (1970), लाइब्रेरी सिस्टम्स अनालिसिस गाइडलाइन्स, न्यूयार्क : विले इण्टरसाइन्स।

बर्च, जॉन जी0 एण्ड स्टार्टर, फेलिक्स आर, (1974) इन्फार्मेशन सिस्टम : थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस, कैलिफोर्निया : हैमिल्टन।

Bawden, David. User-oriented Evaluation of information System and services. Aldershot : Gower, 1990

Bennisonl, M and Casson, J. The Manpower Planning Handbook. New York : McGraw Hill,1984

Broyles, Jack. et.al. Financial Management Handbook, 2nd ed. England : Gowar, 1983

Bryson, Effective Library and Information Centre Managemet. England : Gowar, 1990

Dutta, H.K. and Chowdhury, GG. Costing of Library and Information System : A Methodology. In Twelfth IASLIC National seminar. IASLIC, Calcutta, 1974

Evans, G.E. Management Techiques for Librarians. 2nd ed. New York: Academic Press, 1983

Indira Gandhi National Open University. Management of Library and Information Centres MLIS-05, 1-5, New Delhi : IGNOU, 1997

Jain, S.P.& Narang, K.L.Cost Accounting Priniciples and Practice. New Delhi : Publishers, 1974

Katiyar, Arun and Rekki, Shef Ali: Management Guiding Priniciles. India Today, July 1994.

Kent, Allen and Lancour, Harods eds. Encyclopaedia of Library and Information Science, vol. 3.New York : Marcel Dekkar,1970

Koontz, Harold and O'Donnell, Essentials of Managemet, New Delhi : Tata McGraw Hill, 1975

Kotter, P. Marketing of Non-profit Organization. New Jersey : Prentice-Hall, 1975

Kountz, John. Library Cost Analysis : A Recipe. Library journal.1, 1972

Moore, Russel F.ed. AMA Management Handbook, New York : AMA, 1970

Narayana, G.J. Library and Information Management. New Delhi : Prentice-Hall of India,1991.

The New Encyclopaedia of Brittannica, 15th ed. Macropaedia, Chicago: Encyclopaedia Brittaniaca, 1980

Saez, Eileen Elliott De. Marketing Concepts for Libraries and Information Service. Landon : Library Association,1986

Stovey, J. Development in the Management of Human Resources. Oxford : Blackwell Publishers, 1992.

Tripathi, P.C. and Reddy, P.N. Principles of Management 2nd ed. New Delhi : Tata MacGraw Hill, 1991.

—000—

RIL-091

NOTE

NOTE

NOTE

NOTE